प्रकाशकका निवेदन

अिस पुस्तक* का पहला संस्करण — २००० प्रतियां — जून १९५२ में प्रकाशित हुआ था। वह पांच वर्षसे कम समयमें बिक गया। अिसलिअे पुस्तकका यह नया संस्करण निकाला जा रहा है।

यह दूसरा संस्करण पहले संस्करणका पुनर्मुद्रण नहीं है। परन्तु विद्वान और परिश्रमी लेखकने अिसको पूरी तरह सुधार कर फिरसे लिखा । अिस प्रक्रियामें पुस्तकका आकार दुगुनेसे भी अधिक हो गया है।

पुस्तकके मुख्य विषयको सामान्यतः संसारकी पिछले कुछ वर्षोंकी टनाओंके और विशेषतः भारतकी प्रगतिके प्रकाशमें फिरसे व्यवस्थित करके द्यतन रूप दिया गया है। अिसलिअे विद्वान लेखकको अिसमें दो नये हत्त्वपूर्ण परिच्छेद जोड़ने पड़े हैं: (१) भारत-सरकारका कार्यक्रम अिस संस्करणका पांचवां परिच्छेद); और (२) विवेकपूर्ण अुद्योगवादकी ाफारिश (छठा परिच्छेद)। और अन्तमें लेखकने अुपसंहारके रूपमें गांधीजीके कार्यक्रम' का वर्णन और समीक्षा की है। अिससे ग्रंथ बहुत चिकर और विचारप्रेरक बन गया है। लेखकने अिस संस्करणकी अपनी स्तावनामें ठीक ही कहा है कि: "मैंने आधुनिक पाश्चात्य विज्ञान, शल्प-विज्ञान और अुद्योगवादके बीच रहकर अुनका अध्ययन किया है; ैं तीस वर्ष पहलेके भारतमें भी कुछ समय तक रह चुका हूं और आज हां हो रहे कुछ परिवर्तनोंको भी देख रहा हूं। मुझे भारतसे प्रेम है। ैसे अेक व्यक्तिकी हैसियतसे अपने विचारोंकी यह पुस्तक मैं अिस आशासे स्तुत कर रहा हूं कि अिससे समस्याओंको समझनेमें सहायता मिलेगी।"

अेक प्रजाके रूपमें हम अपनेको अर्वाचीन जगतमें अेक अनोखी स्थितिमें पाते हैं। हम अेक अैसे सम्पूर्ण, सुदृढ़ और शक्तिशाली साम्राज्यवादके प्रभुत्वसे आजाद हो चुके हैं, जिसने अेक सदीसे ज्यादा समय क हम पर राज्य किया। यह साम्राज्यवाद पश्चिममें भारत और

---

* मूल अंग्रेजी पुस्तक।

अफ्रीकी-अेशियाअी दुनियाके अन्य देशोंके साथ पश्चिमके संपर्कके फल-स्वरूप अुत्पन्न हुआ। अुसने यूरोपको अर्वाचीन विज्ञान और शिल्प-विज्ञानके साथ अुद्योगवादका विकास करनेमें समर्थ बनाया। ये दोनों चीजें अुद्योग-वादका कारण भी थीं और अुसका फल भी थीं। जिस मुख्य वस्तुने यह सब संभव बनाया वह थी विदेशी संपत्ति और पूंजी, जो अेशिया और अफ्रीकाके देशोंमें रहनेवाले लोगोंके जीवन और परिश्रम पर यूरोप-वालोंका साम्राज्यवादी पंजा होनेके कारण यूरोपकी राजधानियोंमें बर-सती रही। अिसके कारण पश्चिममें अेक नअी समाज-व्यवस्थाका जन्म हुआ और अुसे पूंजीवादका नाम दिया गया।

पूंजीवादके नामसे पहचानी जानेवाली अिन मुख्यतः औद्योगिक और आर्थिक घटनाओंकी प्रतिक्रियाके रूपमें तथा अुसके गहन अध्ययनके फलस्वरूप पिछले सौ सवा-सौ वर्षोंमें पश्चिममें अेक और परिवर्तन हुआ। यह था समाजवादका विचार। वर्तमान शताब्दीमें अुसकी दो तानाशाही शाखायें — साम्यवाद और फासिस्टवाद — पैदा हुअीं।

पश्चिमी जगतमें जब ये सब परिवर्तन हो रहे थे, तब भारत अुनका अेक दर्शकमात्र बना हुआ था, अथवा भारतका अुनसे अुतना ही सम्बन्ध था जितना किसी गुलामका अपने मालिकके साहसपूर्ण कार्यों अथवा प्रयत्नोंसे होता है। अिस परिवर्तन-कालमें भारत अपने विदेशी शासकोंके साम्राज्यवादी शासनके अधीन शान्त और निश्चेष्ट पड़ा था। वह अुसके विदेशी जुअेके भारसे कराह रहा था। अिसलिअे पश्चिमकी प्रगतिके अिन वर्षोंमें हमारे लिअे सबसे जरूरी समस्या ब्रिटिश साम्राज्यवादके जिस पंजेसे मुक्त होनेकी थी। अिसे हमने अनोखे ढंगसे — शान्त और अहिंसक ढंगसे, और अेक अैसे पुरुषके नेतृत्वमें हल किया जिसमें दोनों जगतोंके — प्रभुत्वशाली पश्चिम और पददलित पूर्वके अुत्तम तत्त्वोंने मिलकर अेक नअी वस्तुका सर्जन और विकास किया। वह वस्तु थी गांधी-विचारधारा और सर्वोदय तथा सत्याग्रहका कार्यक्रम।

अिस विचारधारामें हम पिछली दो सदियोंके साम्राज्यवादी या पूंजीवादी जमानेमें पाश्चात्य सभ्यताने जो सफलतायें प्राप्त कीं अुनकी आलोचना और अुसका रचनात्मक सुधार पाते हैं। जैसा कि लेखक कहते

हैं, अुन्होंने अिन सफलताओंके बीचमें रहकर अुनका अध्ययन किया है और अुन्हें भारतसे प्रेम है। अिसके सिवा, गांधीजीके साथ काम करके अुन्होंने गांधीजीकी प्रणाली, अुसके लक्ष्य और अुनकी पूर्तिके लिअे अुनके प्रयत्नोंकी विलक्षणताको अनुभव किया तथा अुसका मूल्य समझा है। अिस कारण वे भारतकी समस्याको केवल पश्चिमके अुद्योगवादके विकास और प्रगतिसे पैदा हुअी कमीकी पूर्ति करनेकी समस्या ही नहीं समझते; अब तक पश्चिम जिस रास्ते गया है अुसका अंधानुसरण करनेसे यह समस्या हल नहीं होगी। अगर हम सचमुच आजाद हैं, तो हम अंधे और नकलची नहीं हो सकते। यहीं भारतका अनोखापन आ जाता है।

हमारी समस्या केवल औद्योगिक समस्या नहीं है, यद्यपि यह ठीक है कि हमारे यहां बड़े और छोटे दोनों प्रकारके अुद्योगोंका सुमेल साधकर अुनका खूब विकास किया जाना चाहिये। वह केवल आर्थिक भी नहीं है, यद्यपि यह सही है कि हम सारी दुनियाके साथ अुसके आधुनिक आर्थिक और औद्योगिक ढांचेमें जुड़े हुअे हैं। वह केवल राजनीतिक भी नहीं है, यद्यपि हमें पूरी तरह स्वाधीन रहना चाहिये। अलबत्ता, स्वाधीन रहते हुअे भी हमें अेक संसारके आदर्शकी सिद्धिमें दुनियाके दूसरे राष्ट्रोंके साथ अुत्साहसे सहयोग करना चाहिये। दुनियाके राष्ट्र आज अुस अेक संसारके आदर्शकी दिशामें जा रहे हैं और अुसकी प्राप्तिके लिअे अुपाय खोज रहे हैं। हम शान्ति और समृद्धि चाहते हैं, परन्तु किसी भी कीमत पर या किसी भी अुपायसे नहीं। हम अुसे सुखद सह-अस्तित्वकी प्राप्तिमें अुनके महान सहयोगपूर्ण प्रयत्नके रूपमें संसारके सब राष्ट्रोंके लिअे चाहते हैं। हम न केवल राजनीतिक साम्राज्यवादके बल्कि आर्थिक या औद्योगिक साम्राज्यवादके पुराने सिद्धान्तको भी अस्वीकार करते हैं। संक्षेपमें, हम युद्धको अस्वीकार करते हैं, जो कि पिछली कुछ सदियोंमें विकसित हुअी पाश्चात्य राजनीति और सभ्यताका बाहरी प्रतीक और अुसका महत्त्वपूर्ण परिणाम है।

रचनात्मक निर्माणकी दृष्टिसे हम अेक अैसी स्वतंत्र और पूर्ण लोकतांत्रिक व्यवस्थाके पक्षमें हैं, जिसमें मनुष्य — हममें से छोटेसे छोटा मनुष्य भी — न सिर्फ अपने मानव-बन्धुओंके साथ सम्बन्ध रखनेमें, बल्कि

अनुक्रमणिका

आशाका अेकमात्र मार्ग

पूंजीवाद, साम्यवाद, समाजवाद तथा गांधीजीके
कार्यक्रमकी समीक्षा

१

प्रास्ताविक

सब देशोंकी भांति भारतमें भी नौजवान और बूढ़े अनेक लोग हैं, जिन्हें अपनी मातृभूमिसे प्रेम है। वे सब अुसकी सेवा करना चाहते हैं, अन्यायका अन्त करना चाहते हैं और अेक समृद्ध, सुखी, अुदात्त, स्थिर और दीर्घजीवी समाजकी रचना करना चाहते हैं। और दुनियाके अनेक देशोंकी तरह भारतके सामने भी आज कअी बड़ी समस्याअें और कअी बड़े खतरे हैं। अिन सब कठिनाअियोंके लिअे विविध प्रकारके हल सुझाये गये हैं। जिन्हें भारतके हितकी चिन्ता है अुन्हें अिन विविध हलोंमें से अपनी पसन्दका चुनाव करना होगा या नये हल खोज निकालने होंगे, जिनमें शायद विविध योजनाओंके तत्त्वोंका सम्मिश्रण होगा।

१. समझदारीसे चुनाव करनेके लिअे स्पष्ट सिद्धान्त और लक्ष्य जरूरी हैं

अैसे चुनाव करनेके लिअे हम बिलकुल नये सिरेसे आरम्भ नहीं करते। कुछ चुनाव तो सत्ताधारी पहले ही कर चुके होते हैं और कुछ प्रक्रियाअें और प्रवृत्तियां पहलेसे ही काम कर रही होती हैं। परन्तु परिस्थितियां तेजीसे बदल रही हैं और प्रतिदिन नये चुनाव करने पड़ते हैं। समझदारीसे चुनाव करनेके लिअे हमारे पास कुछ सिद्धान्त और कुछ निश्चित लक्ष्य होने चाहिये; साथ साथ तात्कालिक आकांक्षाअें भी होनी चाहिये; मतलब यह कि हमें दिशाका ज्ञान होना चाहिये। अिस पुस्तकके कुछ पाठक सत्ताके स्थानों पर होंगे या भविष्यमें आ सकते हैं। वहां होनेसे अुनके चुनाव तुरंत परिणामकारी सिद्ध होंगे। दूसरे लोग कमसे कम अिस स्थितिमें होंगे कि अन्य लोगोंके पेश किये हुअे प्रस्तावों पर अपनी सहमति या असहमति प्रकट कर सकें और अुन प्रस्तावोंकी आलोचना और अुनका मूल्यांकन कर सकें। यह पुस्तक, संभव

हो तो, अुन लोगोंकी सहायता करनेके लिअे लिखी गअी है जिन्हें भारतके भविष्यकी चिन्ता है।

जीवन और समाज-व्यवस्थाकी पद्धतियां

समाजका काम चलाने और हानि तथा खतरेसे बचनेके लिअे जीवनकी विविध पद्धतियोंका विकास किया गया है। ये आवश्यक खुराक, आश्रय, कपड़ा, औजार, मशीनें और जीवनके अनेक सूक्ष्म अथवा अगोचर सन्तोष प्राप्त करने और अुनका अुपयोग करनेकी पद्धतियां हैं। वे अिन प्रयोजनोंके लिअे समाजका प्रबंध और नियमन करनेकी पद्धतियां भी हैं। अुनकी सूची अिस प्रकार बन सकती है :

१ पूंजीवादियों द्वारा नियंत्रित स्पर्धात्मक अुद्योगवाद, व्यवसाय, विज्ञान और शिल्प-विज्ञान।

२ साम्यवादी केन्द्र-नियंत्रित अुद्योगवाद, व्यवसाय, विज्ञान और शिल्प-विज्ञान।

३ समाजवादी केन्द्रीय अथवा स्थानीय रूपमें नियंत्रित अुद्योगवाद, व्यवसाय, विज्ञान और शिल्प-विज्ञान।

४ विकेन्द्रित लोकतांत्रिक ग्राम-अर्थव्यवस्थावाला गांधीजीका कार्यक्रम, जिसका आधार खेती पर होगा, जिसमें बड़े अुद्योग और भारी शिल्प-विज्ञान कमसे कम होंगे और जिनका नियमन सबके लाभके लिअे होगा, जिसमें सारा राजनीतिक शासन शासितोंकी स्वीकृतिके अधीन होगा, और जिसमें स्वीकृति न देनेकी बातको अन्तमें शासितोंके सामूहिक सत्याग्रह द्वारा परिणामकारी बनाया जायगा।

५. अुपरोक्त सब या कुछ पद्धतियोंके तत्त्वोंको लेकर — दूसरे सुधारों सहित या अुनके बिना — नयी पद्धतिकी रचना करना।

भारतके सौभाग्यसे दूसरे देशोंकी अपेक्षा यहां विभिन्न पद्धतियोंके तत्त्वोंका समन्वय साधकर कमसे कम अेक और हल सम्भव है। अिन

तरह कमसे कम आंकड़ोंकी दृष्टिसे अुसके अेक सफल हल प्राप्त करनेकी संभावना अन्य देशोंकी अपेक्षा अधिक हो जाती है। जीवन जीने, काम करने और समाज-व्यवस्था करनेकी अिन पद्धतियोंकी जांच और तुलना करनेसे पहले हमें भिन्न भिन्न प्रस्तावोंको नापने और अुनका मूल्यांकन करनेके लिअे किसी न किसी तरहका अेक मापदण्ड स्थापित कर लेना चाहिये। संस्कृतियां और सभ्यताअें बड़ी अटपटी और पेचीदा होती हैं और अुनमें भोजन, वस्त्र और आश्रयसे कहीं अधिक बातोंका समावेश होता है। अनेक अैसी अप्रत्यक्ष और सूक्ष्म वस्तुअें होती है — जैसे सौन्दर्य, व्यवस्था और स्वाभिमान — जिनकी मनुष्यको अुतनी ही भूख और जरूरत होती है जितनी भौतिक पदार्थोंकी। हमें जीवनकी कौनसी पद्धतियां पसन्द करनी चाहिये, अिसका निर्णय करनेके लिअे अुत्पादनकी कोअी पद्धति कितनी खुराक, कपड़ा और मकान दे सकती है, अिसकी मात्राका हिसाब निकालनेकी अपेक्षा जीवनके कुछ मापदण्डोंका होना हमारे लिअे अधिक आवश्यक है।

पिछले पचास वर्षोंमें हमने सभी राष्ट्रोंमे अितना अधिक विनाश और समाज-व्यवस्थामें तेजीसे होनेवाला अितना अधिक परिवर्तन देखा है और मानव-जाति अितनी अधिक अरक्षित, भयभीत और दु:खी हो गअी है कि हम अपना मापदण्ड कुछ सामाजिक खतरोंको बनायेंगे और अुनका संक्षिप्त विचार करेंगे। अिससे हमारी मुख्य चर्चामें अेक दृष्टि और मार्ग-दर्शन मिल जायगा, जिससे हम परिवर्तनके प्रवाहमें से अपनी नावको पार ले जा सकेंगे। चुननेके लिअे शायद सबसे अच्छी प्रणाली वह होगी जो खतरोंको बचाते हुअे जीवनकी प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष जरूरतोंको भी पूरा करती है। खतरोंकी चर्चासे हमें कुछ सिद्धान्तोंका दर्शन हो जायगा। यद्यपि हानिकारक बुराअियोंको दूर करनेके लिअे कुछ परिवर्तन आवश्यक हो सकते हैं, तो भी यदि हमारे सामने कुछ सिद्धान्त और कोअी स्पष्ट लक्ष्य न हों तो शीघ्रगामी परिवर्तन परेशानी पैदा करता है।

सात बड़े खतरे

मेरे विचारसे भारतके सामने सबसे बड़े खतरे सात हैं

१ अेक और धरतीका कटाव, 'ह्यूमस' (जमीनकी अुत्पादन-शक्ति बढ़ानेवाला अेक तत्व-विशेष)का नाश और जमीनके खाराका बढ़ जाना है और दूसरी ओर जनसंख्याकी अमर्याद वृद्धि। अिसे यदि रोका नहीं गया तो जिसका परिणाम अैसी व्यापक भुखमरी और बंगालोमें आयेगा जैसी आज तक कभी न देखी गयी थी।

२ युद्ध और भीतरी मतभेद दोनोंमें होनेवाली हिंसा, शारीरिक हिंसा और आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक अथवा धार्मिक अुत्पीडन द्वारा होनेवाली हिंसा।

३ वर्गों, जातियों, समुदायों और व्यक्तियोंके बीच तथा शहरों और देहातोंके बीच सत्ताका अत्यन्त असमान वितरण।

४ संगठनोंमें, खास करके राजनीति, अर्थ-व्यवहार, अुद्योग और व्यवसायके क्षेत्रमें, बड़े आकारको माना जानेवाला अत्यधिक मूल्य।

५ खास तौर पर नेताओंका यह न समझना कि हर कार्य-क्षेत्रमें किसी निश्चित साध्यको प्राप्त करनेमें, यदि सफलता अभीष्ट हो तो, जो साधन चुना जाय वह वांछित ध्येयके अनुरूप होना चाहिये।

६ विशेष रूपमें नेताओंमें पाया जानेवाला यह विचार कि जो नैतिक नियम व्यक्तियोंके लिअे जरूरी माने जाते हैं अुन्हें मानने की सरकारों या मंडलों अथवा दूसरे बड़े संगठनोंको जरूरत नहीं।

७ नेताओं और पुस्तकीय शिक्षा पाये हुअे लोगोंमें आध्यात्मिक अेकताके अस्तित्वमें और अुसके सर्वोपरि बलमें श्रद्धाका अभाव।

ये सातों बड़े खतरे अेक-दूसरेसे सम्बद्ध हैं और समाजकी बुनियाद और प्रक्रियाओंमें गहरे पैठे हुअे हैं। अिनमें से केवल पहले तीन ही सामान्यतः विशेष भयानक माने जाते हैं। थोड़े-बहुत ये खतरे सभी राष्ट्रोंके सामने होते हैं।

समाजकी संभवनीय व्यवस्थाओं और बड़े सामाजिक खतरोंकी अिस संक्षिप्त रूपरेखाके बाद अब हम अिन खतरोंकी अधिक विस्तारसे जांच करें।

धरतीका कटाव

पहले हम धरतीके कटाव, 'ह्यूमस' नामक कीमती तत्त्वकी हानि और जमीनके आवश्यक खनिज तत्त्वोंके नाशको लें। अिस खतरेका भान शहरी लोगोंको या पुस्तकीय शिक्षा पाये हुअे वर्गोंको बहुत थोड़ा होता है। असलमें भूमि पर रहनेवाली संपूर्ण जीवसृष्टिका — वनस्पति, वृक्ष, कीड़े-मकोड़े, जानवर और मानव-प्राणी सबका — आधार अूपरकी लगभग ८ अिंच जमीनकी थरके अस्तित्व और स्वस्थ स्थिति पर है। यह जमीनका वह हिस्सा है जिसमें जमीनके कीटाणु, दूसरे अति सूक्ष्म जीव और केंचुअे वगैरा होते हैं।

प्राकृतिक अवस्थामें घास, छोटे-छोटे पौधे और पेड़ोंकी जड़ें जमीनको पकड़े रहती हैं और अुसे पानीके प्रवाहमें बह जाने और हवामें अुड़ जानेसे बचाती हैं। पत्ते और मृत तथा नष्ट हो रही वनस्पतियां जमीनको भारी वर्षाके बहावसे बचाती हैं और पानीचट (स्पंज) की तरह विशाल मात्रामें पानीको सोखकर जमा कर रखती हैं। परन्तु यदि जंगल आग या अत्यधिक कटाओसे नष्ट हो जाते हैं और यदि घास, छोटे-छोटे पौधे तथा छोटे पेड़ भेड़-बकरियों द्वारा बहुत ज्यादा चर लिये जाते हैं या जमीनमें ठीक ढंगसे खेती नहीं की जाती, तो अूपरकी जमीन पानीमें बह जाती है या आंधियोंसे अुड़ जाती है या बाढ़में अुस पर रेत जम जाती है या वह बुरी तरह सूख जाती है और अिसके फलस्वरूप रेगिस्तानमें बदल जाती है। आज जिस मात्रामें, जिस गतिसे और जितने विशाल पैमाने पर धरतीके

कटावकी यह प्रक्रिया चल रही है वह मानव-अितिहासमें अेक नअी चीज है, लगभग अढाअी सौ वर्ष पुरानी है। अलबत्ता, अिस पृथ्वीके सपूर्ण अितिहासमें छोटे-छोटे क्षेत्रोंमें तेजीसे धरती-कटाव होनेके अुदाहरण पाये जाते हैं। परन्तु हमारे अुत्तम भूमि-विशेषज्ञोंका कहना है कि गत अढाअी सौ वर्षोंमें जगतके पिछले सारे अितिहासकी अपेक्षा अूपरकी जमीनका कटाव अधिक हुआ है।

कटाव कहां हो रहा है?

यह कटाव विशाल पैमाने पर चीन, अफ्रीका, आस्ट्रेलियामें, भूमध्य-सागरके अधिकांश देशोंमें तथा पश्चिम अेशिया, अुत्तरी और दक्षिणी अमरीकाके सब देशोंमें और बड़े पैमाने पर भारतमें भी हो रहा है।

अमरीकामें कटावका विस्तार

अुदाहरणके लिअे, सयुक्त राज्य अमरीकामें जॉन स्टीवार्ट कोलिसके कथनानुसार "सन् १६३० में जमीन पर ८२ करोड अेकड जगलवाली और ६० करोड अेकड झाडीवाली खुली भूमि थी। आज यह हिसाब है कि जगल दसवे हिस्सेसे ज्यादा नही रह गया है और जगलकी वार्षिक वृद्धिसे वार्षिक नाश ५० प्रतिशत अधिक है। और भूमिके बारेमें यह हिसाब लगाया गया है कि महाद्वीपका आधा अुपजाअूपन नष्ट हो गया है।"* सयुक्त राज्य अमरीकाकी अेक-तिहाअी कृषियोग्य अूपरी जमीन बह कर समुद्रमें चली गअी है और जमीनकी रक्षाके लिअे जो कार्य हो रहा है वह जमीनको जिस मात्रामें सुधार सकता है और हो रहे कटावको जिस सीमा तक रोक सकता है, अुससे कटाव कही अधिक तेजीसे हो रहा है। अगर अिसी हिसाबसे जमीनका कटाव जारी रहा तो विशेषज्ञोंका कहना है कि अिस शताब्दीके अन्त तक वहाकी तीन-चौथाअीसे अधिक अुपजाअू धरती नष्ट हो जायगी। जुलाअी १९४७ में मिसूरी नदीमें आअी बाढ़के दिनोंमें यह अनुमान लगाया गया था कि सयके पानीसे नदीकी तलहटीवाले भूप्रदेशकी ११३ करोड टन अूपरी अुपजाअू मिट्टी बह गअी। सारे सयुक्त राज्य

* 'दि ट्रायम्फ ऑफ दि ट्री', पृ० २२९।

अमरीकामें अिस समय हर साल पांच लाख अेकड़ अच्छी भूमि कटावसे खराब हो रही है। अमरीकामें १९२७ से १९५६ तक बाढ़से हुआी सीधी हानि ३०० करोड़ डालरसे अधिक थी। १९५३ में बिहारकी बाढ़ने ३५ करोड़ रुपयेसे ज्यादाका नुकसान किया था। अुड़ीसा और दूसरे प्रान्तोंमें बार बार भयंकर बाढ़ें आअी हैं और भारी धरती-कटाव हुआ है।

अुपजाअूपनकी हानि

केवल जमीन ही नहीं बह जाती है; बुद्धिहीन अथवा अत्यधिक जुताअीसे अुसका अुपजाअूपन भी नष्ट हो जाता है। 'ह्यूमस' तेज धूपसे जल जाता है और आवश्यक घुलनशील खनिज तत्त्व वर्षासे बह जाते हैं। जहां पानी बहुत कम गिरता है या अुसका गिरना बिलकुल ही अविश्वसनीय होता है, वहांकी जमीनमें खेती करनेसे अूपरवाली मिट्टी विशाल पैमाने पर हवामें अुड़ जाती है।

अमरीका, रूस, पैलेस्टाअीन, दक्षिण अफ्रीका और अन्य देशोंमें धरती और जंगलोंकी रक्षाके लिअे बड़े प्रयत्न किये जा रहे हैं, परन्तु यूरोपके सिवा कहीं भी रक्षाके ये प्रयत्न लगातर होनेवाले धरती-कटावको रोक नहीं पाये हैं। नदियों पर बड़े बांध बांधनेसे केवल अस्थायी सहायता ही मिलती है, क्योंकि जो जल-भंडार अिस तरह तैयार किये जाते हैं वे लगभग पैंतीस वर्षमें मिट्टीसे भर जाते हैं। संयुक्त राज्य अमरीकामें अैसा सैकड़ों जल-भंडारोंमें हुआ है। १९५० में जापानके ५४ कृत्रिम जल-भंडारोंकी जांच की गअी थी। अुनमें से २४ आधेसे अधिक मिट्टीसे भर गये थे। अिन २४ जल-भंडारोंकी पानी संग्रह करनेकी क्षमता १८ वर्षमें औसतन् ७३ प्रतिशत कम हो गअी थी। पुअर्टो रिकोमें १९५० में पूरे होनेवाले ३७ वर्षोंमें ग्वायावाल जल-भंडारकी पानी संग्रह करनेकी क्षमता ४९.७ प्रतिशत कम हो गअी; कोअेमो जल-भंडारकी ७०.२ प्रतिशत कम हो गअी और कोमेरियो जल-भंडारकी ९५.९ प्रतिशत कम हो गअी। सन् १२०० के आसपास सीलोनमें जलाशयोंके अिसी तरह रेतसे भर जानेकी घटनाअें

हुअी थी। कअी हजार वर्ष पहले मेसोपोटेमियामें भी अिसी तरह बड़े पैमाने पर मिट्टी भर गअी थी।

जंगलोंके नाशसे धरती-कटाव होता है

आगसे और अिमारती लकड़ी तथा कागजके गूदेके लिअे होनेवाले अुद्योगवादके आक्रमणोंसे जंगलोंका जो नाश होता है, अुससे अवश्य ही भयंकर बाढ़ आती है और अधिक धरती-कटाव होता है। यूरोपमें भी जिस मात्रामें नये जंगल पैदा होते हैं अुसकी अपेक्षा लकड़ीकी खपत १० से १५ प्रतिशत अधिक होती है। संयुक्त राज्य अमरीकामें नये वृक्षोंकी अुत्पत्तिकी अपेक्षा वृक्षोंकी कटाअी बहुत ज्यादा होती है। अुदाहरणके लिअे, 'न्यू यॉर्क टाअिम्स' के रविवासर संस्करणके लिये आवश्यक कागजका गूदा तैयार करनेके लिअे १० अेकड़ (कुछ जानकार १०० अेकड़ बताते हैं) भूमिमें खड़े बड़े पेड़ चाहिये। अुस रविवारके संस्करणका अेक-तिहाअीसे कुछ कम भाग समाचारों, लेखों या सम्पादकीय लेखोंमें लगता है। अधिक बड़ा भाग विज्ञापनोंमें लगता है। और विज्ञापन-दाताओंका अेक मुख्य हेतु अिस प्रकार अपना व्यावसायिक खर्च बढ़ाकर आय-कर घटाना होता है। संयुक्त राज्य अमरीकामें अिसी आकारके और भी कअी पत्र छपते हैं। सप्ताहके अन्य दिनोंकी और कागजके अन्य सब अुपयोगोंकी बात छोड़ दें, तो अेक वर्षमें ५२ रविवार होते हैं। ज्यादातर जंगलोंके अैसे शोषणके परिणामस्वरूप संयुक्त राज्य अमरीकामें बाढ़ें लगभग हर दशकमें पहलेसे ज्यादा बड़ी और अधिक बार आती हैं।

जनवरी १९५७ के मध्यमें मद्रासके अंग्रेजी दैनिक 'हिन्दू' के अेक खबरमें कहा गया था कि भारतके लिअे २२ नये कागजके कारखानोंकी योजना बनाअी जा रही है। परन्तु अुसमें अिस बातका अुल्लेख नहीं था कि पेड़ोंकी कटाअीको कैसे रोका जायगा या कागज बनानेकी प्रक्रियामें पैदा होनेवाले गंधकके तरल पदार्थोंको नदी-नालोंमें बहाने देकर पानीको जहरीला बनाने दिया जायगा और मछलियोंकी हत्या करने दी जायगी अथवा अुसकी रोकथाम और व्यवस्था की जायगी।

धरती-कटावसे सभ्यतायें नष्ट हो गयीं

मानव-जातिके अितिहासमें लगभग प्रत्येक साम्राज्यका अन्त मरुभूमियोंमें हुआ है। आजकलके मोरक्को, ट्युनीशिया और अलजीरियाके वृक्षहीन सूखे प्रदेश किसी समय रोमन साम्राज्यके गेहूं अुत्पन्न करनेवाले प्रदेश थे। अिटली और सिसिलीका भयंकर धरती-कटाव अुसी साम्राज्यका दूसरा फल है। मैसोपोटेमिया, सीरिया, पैलेस्टाअीन और अरबस्तानके कुछ भागोंके मौजूदा सूखे वीरान भूभाग अुर, बेबीलोन, सुमेरिया, अक्काड़िया और असीरियाके महान साम्राज्योंके स्थान थे। किसी समय अीरान अेक बड़ा साम्राज्य था। अब अुसका अधिकतर भाग रेगिस्तान है। सिकन्दरके अधीन यूनान अेक साम्राज्य था। अब अुसकी अधिकांश धरती बंजर पड़ी है। तैमूर लंगके साम्राज्यकी धरती पर अुसके जमानेमें जितनी पैदावार होती थी अुसका अब छोटा-सा हिस्सा ही पैदा होता है। ब्रिटिश, फ्रेंच और डच अिन तीन आधुनिक साम्राज्योंने अभी तक मरुभूमियां अुत्पन्न नहीं की हैं, परन्तु अेशिया, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैण्ड और अुत्तरी अमरीकाकी धरतीका कस चूसनेमें और खनिज साधनोंका अपहरण करनेमें अिन साम्राज्योंका बड़ा हाथ रहा है। केनिया, युगाण्डा और अीथियोपियामें अिमारती लकड़ीकी कटाअीसे नील नदीका विशाल और समान प्रवाह जल्दी ही नष्ट हो सकता है। अिसमें अवश्य ही अिन साम्राज्योंको यातायातके साधनों, गहरी जुताअी करनेवाले हलों, खेतीके ट्रेक्टरों तथा अर्थ-व्यवहार, व्यापार और संपर्कके साधनोंमें हुअे अर्वाचीन सुधारोंसे बड़ी मदद मिली है।

और अिस तरह विनाशकी यह कहानी आगे बढ़ रही है। केवल अिग्लैण्ड, आयरलैण्ड और पश्चिमी यूरोप सौम्य तापमान और बारहों मास अुचित मात्रामें बरसात होते रहनेके कारण जमीनके कटावसे बच गये हैं। लेकिन अब फार्मोंमें ट्रेक्टरोंके अुपयोगसे फ्रांस और पश्चिमी जर्मनीमें जमीनका कटाव शुरू हो गया है।

संयुक्त राज्य अमरीकाके भूमिरक्षा-विभागकी ओरसे प्रकाशित '७००० वर्षमें भूमिकी विजय'* नामक अेक पुस्तकमें लेखक डब्ल्यू० सी० लाअुडरमिल्क कहते हैं, "यदि आधुनिक सभ्यताको अुस तरहके लम्बे पतन और बरबादीसे बचना है, जो अुत्तरी अफ्रीका और निकट पूर्वके देशोंको तेरह सौ वर्षसे दुःख देते रहे हैं और सदियों तक आगे भी सताते रहेंगे, तो समाजको शोषणकी अर्थ-व्यवस्थासे बाहर निकल कर संरक्षणकी अर्थ-व्यवस्थाको फिरसे अपनाना पड़ेगा।"

यह सही है कि रासायनिक खादोंके अत्यधिक अुपयोगसे, किसानोंको (खासकर अमरीकामें) सरकारी सहायता देनेसे और मशीनोंकी मददसे अेक ही फसलकी खेती करते रहनेसे अुत्तरी और दक्षिणी अमरीकामें तथा यूरोपमें भी खाद्य-पदार्थोंका आवश्यकतासे अधिक अुत्पादन आश्चर्यजनक ढंगसे बढ़ाया गया है। परन्तु मूल्य-नियंत्रण, निर्यात-नियंत्रण तथा दूसरे सरकारी और आर्थिक हस्तक्षेपोंके कारण यह अतिरिक्त अुत्पादन आम तौर पर भूखी प्रजाओं तक नहीं पहुंचने दिया गया है। जो लोग संसारकी अन्न-समस्याको हल करनेके लिअे विज्ञान पर निर्भर रहते हैं, वे यह भूल जाते हैं कि विज्ञान मानवके लोभ, अहंकार, कल्पना-हीनता, मानसिक आलस्य, जड़ता या रुपये-पैसे और आर्थिक प्रक्रियाओंका अत्यधिक मूल्य आंकनेकी बुराअीका अिलाज नहीं कर सकता। अिस प्रकार जितनी तेजीसे मानव-जातिके मन, हृदय और आदतें बदल रही हैं, अुतनी ही तेजीसे या अुससे भी ज्यादा तेजीसे होनेवाले धरती-कटावके कारण हमारे अन्न-अुत्पादनके साधन नष्ट हो रहे हैं।

संसारकी जनसंख्यामें वृद्धि

खाद्य-पदार्थोंकी अिस सतत बढ़ रही कमीके साथ साथ (क्योंकि धरती-कटावका परिणाम यही होता है) अब संसारकी जनसंख्या बड़ी तेजीसे बढ़ रही है। पिछले ढाअी सौ वर्षोंमें अिसकी गति और भी बढ़

* 'कान्क्वेस्ट ऑफ दि लैण्ड थ्रू ७,००० ओयर्स'।

गअी है। संसारके अितिहासमें पहली बार अैसी स्थिति पैदा हुअी है कि मालके यातायात, चुंगी-कानून या पैसेकी बाधायें न रहते हुअे भी मौजूदा अनाज अुत्पन्न करनेवाली जमीनकी पैदावारसे जितने लोगोंको भोजन दिया जा सकता है अुससे अधिक लोग दुनियामें हो गये हैं। यह राय संयुक्त राष्ट्रसंघकी खुराक और खेती-संबंधी संस्थाने खेती तथा जनसंख्याके अुत्तम अधिकारियोंसे विचार-विमर्श करनेके बाद प्रकट की है। जनसंख्या और खेती-संबंधी प्रश्नोंके अनेक स्वतन्त्र विशेषज्ञोंका भी यही मत है। यहां मैं कुछ विस्तारसे अिस पर प्रकाश डालूंगा।

'हमारी लुटी हुअी पृथ्वी' (अंवर प्लन्डर्ड प्लेनेट) नामक अपनी पुस्तकमें फेयरफील्ड ऑस्बर्न यह अनुमान लगाते हैं कि सारे जगतमें ४ अरब अेकड़से अधिक खेतीके लायक जमीन नहीं है। संयुक्त राष्ट्रसंघकी खुराक और खेती-सम्बन्धी संस्थाने जनवरी १९५० की अपनी मासिक पत्रिकामें यह अनुमान लगाया है कि संसारमें कुल भूमि ३३ अरब १२ करोड़ ६० लाख अेकड़ है और कृषियोग्य भूमि ३ अरब ७० लाख अेकड़ है। कॉर्नेल विश्वविद्यालयके पियर्सन और हेअीज़ने 'संसारकी भूख' (दि वर्ल्ड्ज़ हंगर) नामक अपने ग्रंथमें कुल भूमिके क्षेत्रफलका अन्दाज ३५ अरब ७० करोड़ अेकड़ लगाया है। अुन्होंने यह भी अनुमान लगाया है कि अिस सारे क्षेत्रफलकी ४३ प्रतिशत भूमिमें ही फसल अुगानेके लिअे काफी वर्षा होती है। अुन्होंने वार्षिक १५ अिंच वर्षा ही पकड़ी है, जो पर्याप्त नहीं मानी जा सकती। अिस सारी जमीनके ३४ प्रतिशत भागमें ही अितनी वर्षा होती है, जो पर्याप्त और विश्वस्त दोनों है। अुनका यह विश्वास है कि ३२ प्रतिशत जमीन पर ही फसल अुगानेके लिअे पर्याप्त वर्षा, विश्वस्त वर्षा और पर्याप्त गर्मी पड़ती है। २१ प्रतिशत जमीन पर ही पर्याप्त वर्षा, विश्वस्त वर्षा और पर्याप्त गर्मी पड़ती है और वह अितनी ढालवाली है जिससे खेतीमें बाधा न पड़े। अन्तमें अुन्होंने कहा है कि केवल ७ प्रतिशत भाग पर ही भरोसेके लायक वर्षा होती है, पर्याप्त गर्मी पड़ती है, वह लगभग बराबर सतहवाला है और अुसकी मिट्टी अुपजाअू है। ३५ अरब

७० करोड अेकडका ७ प्रतिशत भाग २ अरब ४९ करोड ९० लाख अेकड कृषियोग्य जमीनके बराबर होता है। अिस प्रकार संसार भरमें २ अरब ५० करोड और ३ अरब ७० करोड अेकडके बीच अैसी भूमि है, जो मनुष्यके लिअे खुराक पैदा कर सकती है। मनुष्य जलवायु या भूगोलको नहीं बदल सकता। विशेषज्ञोंने काफी सोच-विचारके बाद यह राय प्रकट की है कि किसी भी अुपायसे अिससे अधिक जमीनको खेतीके लायक बनाना संभव नहीं है। और कुल मिलाकर खेतीकी पैदावारकी वृद्धि अितनी नहीं हो सकेगी जितनी दुनियाकी जनसंख्याके बढ़नेकी संभावना है। खेतीकी १० से १५ प्रतिशत जमीनका अुपयोग पटसन और तम्बाकू वगैराकी पैदावारके लिअे किया जाता है, अिसलिअे खाद्य-पदार्थोंके लिअे अुपरोक्त अंकों द्वारा बताओी गओी जमीनसे वास्तवमें कम ही जमीन अुपलब्ध है।

संयुक्त राष्ट्रसंघकी खुराक और खेती-संबंधी संस्थाने, जिसके भूमि-संबंधी आंकडे अूपर अुद्धृत किये गये हैं, १९५० में दुनियाकी संपूर्ण जन-संख्याका अनुमान २ अरब ३५ करोड २० लाख लगाया है। अिस बात पर सभी सहमत मालूम होते हैं कि यह संख्या १९५० में २ अरब २५ करोड और २ अरब ३५ करोड २० लाख मनुष्योंके बीच थी। संयुक्त राष्ट्रसंघकी खुराक और खेती-संबंधी संस्थाके अनुमानके अनुसार १.२ प्रतिशत वार्षिक वृद्धिको मान लें, तो १९५७ में दुनियाकी जनसंख्या २ अरब ४८ करोड ५० लाख और २ अरब ५५ करोड ७० लाखके बीच होगी।

भूमिका जनसंख्यासे सम्बन्ध

संसारकी कुल कृषियोग्य जमीनके सबसे बडे अनुमानित आंकडेमें संसारकी (१९५७ की) सारी जनसंख्याके अधिक छोटे अनुमानित आंकडेका भाग लगानेसे दुनियाके हर व्यक्तिके हिस्सेमें १.२ अेकड जमीन आती है। २ अरब ५० करोड कुल कृषियोग्य भूमिका अनुमान और संयुक्त राष्ट्रसंघकी खुराक तथा खेती-सम्बन्धी संस्थाका १९५७ वाला जनसंख्याका अनुमान लें, तो प्रति व्यक्ति १ अेकड जमीनसे कुछ कम ही हिस्सेमें आती है। अैसे प्रति व्यक्ति १.२ अेकड रहने दीजिये। अिसके

अनुसार १९५० के लिअे ये आंकड़े प्रति व्यक्ति १.८, १.३ और १.५ अेकड़ होंगे। अिस कमीका कारण १९५० के वाद संसारकी जनसंख्यामें हुअी वृद्धि है। सामान्यतः माना हुआ हिसाव यह है कि हर व्यक्तिके लिअे पाश्चात्य मापदण्डके अनुसार कमसे कम पर्याप्त खुराक मुहैया करनेके लिअे २½ अेकड़ जमीन चाहिये। शाकाहारके लिअे यह अनुमान लगाया गया है कि प्रति व्यक्ति १½ अेकड़ जमीन काफी हो सकती है। अिस अन्तरका कारण यह है कि मांसाहारके लिअे जो जानवर चराये जाते हैं, अुन्हें मनुष्यके खानेके लिअे अनाज, तरकारियों और फलोंके रूपमें पर्याप्त पौष्टिक तत्त्व पैदा करनेके लिअे जितनी भूमि चाहिये अुससे लगभग ९ से १५ गुनी अधिक भूमिकी जरूरत होती है। अिसका अर्थ यह हुआ कि मांसाहारी प्रजाओंकी अपेक्षा भारतवर्ष मुख्यतः शाकाहार पर निर्वाह करके अपने भूमि-साधनोंकी सीमामें अधिक बुद्धिमानीसे रह रहा है।

सब कोअी जानते हैं कि भिन्न भिन्न देशोंमें जनसंख्याका घनापन अलग अलग है, और कुछ देशोंके पास अैसी आर्थिक और राजनीतिक शक्ति है जिससे वे कुछ अन्य राष्ट्रोंकी अपेक्षा संसारके दूसरे भागोंसे अधिक सफलतापूर्वक खुराक खींचकर ला सकते हैं। अिसलिअे कुछ राष्ट्रोंको अन्य राष्ट्रोंसे ज्यादा अच्छी खुराक मिल जाती है। परन्तु अुपरोक्त आंकड़ोंसे प्रकट होता है कि अगर सारी जमीन संसारके तमाम लोगोंमें समान रूपसे और न्यायपूर्वक बांट दी जाय, व्यापार-वाणिज्य पूरी तरह आदर्श बन जाय और खुराक लाने-ले जानेके लिअे ढुलाअीका खर्च और भावके प्रतिबन्ध न हों और अगर सारी दुनिया शाकाहारी बन जाय, तो भी संसारके सारे लोगोंको मुश्किलसे पूरा खाना मिलेगा।

संयुक्त राष्ट्रसंघकी खुराक और खेती-सम्बन्धी संस्थाने 'खुराक और खेतीकी दशा' पर अपनी सितम्बर १९५५ की रिपोर्टमें कहा है कि संसार-व्यापी आधार पर अन्नकी प्रति व्यक्ति प्राप्ति १९३४-३८ के औसतसे १९५४ में कुछ अधिक थी। परन्तु शायद भारत-सहित सुदूर पूर्वके देशोंमें अिस अवधिमें अन्नके अुत्पादनसे जनसंख्या ज्यादा तेजीसे बढ़ी।

जनसंख्यामें तीव्र गतिसे वृद्धि

पिछले २५० वर्षोंमें संसारकी जनसंख्या ही बहुत नहीं बढ़ी है, बल्कि अिस वृद्धिकी गति भी पिछले ३०० वर्षोंमें तेज हो गअी है और आज भी जनसंख्या दिनोंदिन बढ़ती ही जा रही है। पृथ्वीतल पर प्रतिदिन ६८ हजार नये मनुष्य जन्म लेते हैं। आज सारी दुनियामें खालिस वार्षिक वृद्धि लगभग १२ प्रतिशत होती है। भारतमें यह वृद्धि शायद कुछ अधिक है—१९३१ में १२५ और १९४१ में १३० प्रतिशत थी। यदि संसार भरमें अिस वृद्धिकी तेज गति रुक जाय और आजकी गति ही कायम रहे, तो भी ७५ वर्षमें संसारकी आबादी दुगुनीसे ज्यादा हो जायगी। अैसा अनुमान है कि अगले १० वर्षोंमें दुनियाकी जनसंख्या १० से १७ प्रतिशत तक बढ़ेगी और पूर्वी देशोंकी ९ से १८ प्रतिशत तक बढ़ेगी। १९८१ में भारतकी आबादी ५२ करोड़के आसपास होगी। अगर १९२१ से १९४१ की औसत गति बनी रहे तो सन् २००० में भारत और पाकिस्तानकी जनसंख्या कुल मिलाकर लगभग ८० करोड़ हो जायगी। परन्तु संसारके खाद्य-पदार्थोंकी अुत्पत्ति कुछ समय तक दुगुनी होनेकी संभावना नहीं है।

विदेश-गमन सहायक नहीं

सिद्धान्तके रूपमें विदेश-गमन द्वारा भूमि-संबंधी साधनोंके अनुसार जनसंख्याका अधिक न्यायपूर्ण बंटवारा करनेमें कुछ राहत मिल सकती है। विदेश-गमन और संतति-नियमन दोनोंके मेलसे किसी खास देशको राहत मिल सकती है, जैसा कि १८४५ से आयरलैंडके विषयमें हुआ है। परन्तु जन्मसंख्या अूंची बनी रहे तो कोअी राहत नहीं मिलती, जैसा कि अिटलीके अनुभवसे प्रगट होता है। १८८० और १९२० के बीच ४५ लाख आदमी अिटलीसे जाकर संयुक्त राज्य अमरीकामें बस गये और १ करोड़ २० लाख आदमी दूसरे देशोंमें चले गये। फिर भी जन्मसंख्या अूंची बनी रहनेसे अिटलीकी जनसंख्या अुसी अरसेमें २ करोड़ ९० लाखसे बढ़कर ३ करोड़ ९० लाख हो गअी। सिसिलीसे बड़ीसे बड़ी संख्यामें विदेश-गमन हुआ, फिर भी वहांकी जनसंख्या अुन वर्षोंमें दोप

अिटलीसे लगभग दुगुनी तेजीके साथ बढ़ी। अधिकसे अधिक विदेश-गमनके वर्षोंमें अिटलीकी जनसंख्या जितनी तेजीसे बढ़ी अुतनी पहले या बादमें कभी नहीं बढ़ी।

अब तो अितना ही स्पष्ट कर देनेकी जरूरत है कि जनसंख्या और खुराकके सम्बंधकी समस्या न केवल भारतके सामने बल्कि सारी दुनियाके सामने है। क्योंकि यह स्थिति समस्त संसारके लिअे पहले कभी नहीं रही और क्योंकि अिसके गूढ़ार्थ अितने भयंकर हैं, अिसलिअे लोग अिसे समझने और स्वीकार करनेके लिअे बहुत अनिच्छुक हैं। हमें अप्रिय सत्य अच्छा नहीं लगता; विचार करनेकी हमारी तैयारी नहीं होती; अपनी पद्धतियां बदलना हम नापसन्द करते हैं। परन्तु मानवकी जड़तासे प्रकृति, मृत्यु और जन्म अधिक बलवान हैं। जिसे माल्थूस-वादका नया पुजारी कहा जाता है वह मैं नहीं हूं। मैं नहीं मानता कि मनुष्य-समाज विनाशकी ही ओर बढ़ रहा है और अुसका कोअी अिलाज नहीं है; परन्तु मैं मानता हूं कि मनुष्य-जातिको जिन समस्याओंका मुकाबला अब तक करना पड़ा है, अुनमें यह समस्या सबसे ज्यादा कठिन और पेचीदा है।

हिंसाके खतरे

आधुनिक युद्ध और घरेलू लड़ाअियोंके विनाशकारी परिणामोंकी चर्चा शायद ही जरूरी है। पिछले ४० वर्षोंमें अिसकी विषैली शक्तिका परिचय हमें मिल गया है। यूरोप और अमरीकाकी सभ्यता अिसीके कारण विनाशके किनारे पर पहुंच गअी थी। टॉयनबीके विश्व-अितिहासके गहरे अध्ययनसे प्रगट होता है कि मुख्यतः युद्धका सहारा लेनेकी मानव-समाजकी आदतने २१ सभ्यताओंको नष्ट कर दिया है। शायद युद्धका सबसे बुरा नतीजा यह है कि अुसमें धरती, जंगल, सिंचाअीकी नहरें और भूमिरक्षाके अुपाय नष्ट होते हैं। दूसरे दुष्परिणाम ये है कि युद्धके कारण अुत्तम नौजवानोंकी हत्या होती है और समाजके बन्धनोंका नैतिक ह्रास होता है। आधुनिक हथियारोंकी ताकत बढ़ जानेसे विनाशकी गति और व्यापकता बहुत ज्यादा

बढ़ गअी है। शायद यह मूर्खता तब तक जारी रहेगी जब तक मनुष्य आत्माके स्वभावके बारेमें अपनी वर्तमान भ्रामक कल्पनाको कायम रखता है और अुस कल्पनाके आधार पर आत्मरक्षाकी वैसी ही भ्रामक धारणा बनाये रखता है। बेशक, अणुबम या हाअिड्रोजन बमके अिस्तेमालसे सारी मानव-जाति नष्ट हो सकती है, यद्यपि मेरे विचारसे अिस भयंकर आपत्तिके शिकार होनेमें हम बाल-बाल बच जायेंगे। लेकिन यदि भयंकर हथियारोंसे लड़ा जानेवाला तीसरा युद्ध टल भी जाये तो अुसके स्थान पर चल रहा हिंसाकी विभिन्न पद्धतियोंवाला 'ठंडा' युद्ध सर्वत्र जीवनको बुरी तरह विषम, दुःखी और निराशापूर्ण बना देगा।

सत्ताके खतरे

पहले राजनीतिक और आर्थिक दृष्टिसे पराधीन रह चुके देशके नाते समग्र भारतको सत्ताके असमान विभाजनकी कटुताका अनुभव हो चुका है। और भारतके भीतर, पहलेकी तरह आज भी, हरिजन, आदिवासी, कारखानोंके मजदूर और किसान भी सत्ताके अन्यायपूर्ण विभाजनकी बुराअियां जानते हैं। शक्तिशाली व्यक्तियों, समूहों और जातियोंकी भी नैतिक, मानसिक और आध्यात्मिक दृष्टिसे हानि हुअी है, भले ही अुन्हें अपनी हानिका ज्ञान न हो। लॉर्ड अेक्टनका यह कहना सही है कि "सत्तामें मनुष्यको भ्रष्ट करनेकी प्रवृत्ति होती है, और अनियन्त्रित सत्ता पूरी तरह भ्रष्ट करती है।" अुन्होंने यह नहीं कहा है कि सत्ता अनिवार्य रूपसे और अवश्य ही भ्रष्ट करती है, अुन्होंने अितना ही कहा है कि अुसमें यह प्रवृत्ति होती है। परन्तु अितिहाससे और प्रतिदिनके हमारे अवलोकनसे पता चलता है कि अुस प्रवृत्तिको रोकनेमें बहुत ही कम लोग सफल हुअे हैं। किसी हद तक अिसका असर छोटे और बड़े लोग, आप और मैं तथा बहुत महत्त्वपूर्ण व्यक्ति —सभी पर पड़ता है। यह जरूरी नहीं है कि वह भ्रष्टता आर्थिक या राजनीतिक ही हो। वह हेतुकी हो सकती है, कल्पनाकी हो सकती है, भावनाकी हो सकती है, मनकी हो सकती है, नीतिकी हो सकती है

या हृदयकी हो सकती है। सत्ता आर्थिक, औद्योगिक, व्यावसायिक, राजनीतिक हो सकती है या शिक्षा, धर्म और भूस्वामित्वकी भी हो सकती है। जब सत्ताका गलत वितरण या गलत अुपयोग होता है तब सारे मानव-समाजकी हानि होती है। सत्ताकी महत्त्वाकांक्षाने सारे साम्राज्योंको बनाया और बिगाड़ा है; और साम्यवादी और पश्चिमी पूंजीवादी गुटोंके बीच चल रहे प्रबल संघर्षोंका मुख्य कारण भी सत्ता ही है। भारत-सहित सारे राष्ट्र अिस समय सत्ताके घोर असमान वितरणके कारण खतरेमें पड़ गये हैं।

यह सच है कि प्रत्येक मानव-समाजमें सत्ता अवश्य होती है, और अुसका अुपयोग होगा तथा होना चाहिये। संगठनका स्वरूप कुछ भी क्यों न हो, सूर्यकी शक्ति १.६ अश्वशक्ति प्रति वर्गगजकी औसत मात्रामें पृथ्वी पर अुतरती रहती है। अिसलिअे अिस शक्तिके अुपयोग पर जिस किसीका अधिकार होगा, भले वह जमीनका मालिक किसान हो, जमींदार हो, धर्मसंस्था हो, मठ हो या राज्य हो, अुसीके हाथमें आर्थिक और राजनीतिक सत्ता होगी और वही अिसका अुपयोग या दुरुपयोग करेगा। यही बात पानीके अुपयोगके नियंत्रणके बारेमें है। और चूंकि मनुष्य प्रतीकोंका सर्जन करनेवाला और अुनका अुपयोग करनेवाला प्राणी है और प्रतीक मानव-शक्तिको प्रेरित और संचालित करते हैं, अिसलिअे प्रतीकोंका संचालन सत्ताका दूसरा स्रोत है। कुछ व्यक्ति हमेशा अैसे होंगे जो कुछ प्रतीकोंके संचालनमें खास तौर पर चतुर होते है। ये प्रतीक पैसा या धार्मिक प्रतिमाअें और मंत्र या राजनीतिक झण्डे और नारे अथवा सामाजिक दर्जे और प्रतिष्ठाके चिह्न हो सकते हैं। अिसलिअे प्रत्येक मानव-समाजमें, भले ही अुसके मूल्यों और अर्थोंका स्वरूप कुछ भी हो, कुछ लोग अैसे हमेशा रहेंगे जो प्रचलित मूल्यों और अर्थोंके सम्बन्धमें दूसरोंकी अपेक्षा अधिक समृद्ध होंगे और कुछ अैसे रहेंगे जो दूसरोंसे गरीब होंगे। जैसा अीसा मसीहने कहा है, "गरीब तुम्हारे साथ सदा लगे हुअे ही रहते हैं।"

बड़ी सत्ता और बढ़ती हुओ सत्ताकी अभिलाषा लगभग सार्वभौम मानव-दुर्बलता है। शायद जीनेकी अिच्छा — जिजीविषा — का यह विकृत रूप है। अिसलिअे अिसे नियंत्रणमें रखना बड़ा कठिन है। परन्तु लोग — व्यक्ति और समूह दोनों — कुछ दिशाओंमें संयम सीख गये हैं और अुसका पालन करते हैं। अुदाहरणके लिअे, मलेरिया या पीले बुखारका शिकार होना साधारण मानव-दुर्बलता है। अब चूंकि हम समझ गये हैं कि ये बीमारियां क्यों होती हैं, अिसलिअे बहुतसे लोग मच्छर-दानियोंमें सो सकते हैं या अुनकी सरकार या नगरपालिकाअें मच्छर पैदा होनेवाले स्थानों पर तेल या रासायनिक पदार्थ छिड़कवा कर अिन बीमारियोंको टाल सकती हैं। क्षयको रोकके लिअे सुनिश्चित वैयक्तिक और सामाजिक अुपायोंका प्रयोग करके पश्चिममें अिस रोगका लगभग अुन्मूलन हो चुका है। शराबके अत्यधिक अुपयोगसे पैदा होनेवाली बुराअियां नियंत्रणमें रखी जा सकती हैं। अिस्लामने यह काम पूर्ण धार्मिक निषेध द्वारा किया है। पश्चिमी राष्ट्रोंने कानूनी प्रतिबन्ध लगाकर आंशिक नियंत्रण स्थापित किया है। जिनके हृदय कमजोर हैं वे समझदारीपूर्वक अूंची पहाड़ियों पर रहनेमें परहेज करते हैं। अैसे ही दूसरे अुदाहरणोंकी कल्पना की जा सकती है।

अिसी तरह, यदि हम अपने प्रति सच्चे हों, तो सत्ताकी अति-शयतासे पैदा होनेवाले नैतिक, आर्थिक और राजनीतिक रोग भी बुद्धि-पूर्वक योजित अुपायोंसे कम किये जा सकते हैं। अितिहासने हमें अिसके बहुतसे कारण और अुनके कार्यकी पद्धतियां सिखा दी हैं। जमीन, पानी, शिक्षा, कानूनी न्याय, बिजली और दूसरी शक्तियोंको प्राप्त करनेके अधिकारों और दूसरे अवसरोंका वितरण अिस प्रकार किया जा सकता है कि घोर अन्यायके अुदाहरण बहुत कम रह जाय और हर मनुष्यके भीतरकी आत्माको विकासका पूरा मौका मिल जाय। धनवान या बलवान मनुष्य सदा जन-साधारणकी भलाअीके संरक्षक बनकर काम कर सकते हैं। अगर वे संरक्षक बनकर न्यायपूर्वक काम करनेसे अिनकार करें, तो

अुनके नियंत्रणके लिअे अंतिम अुपायके रूपमें सत्याग्रहका आश्रय लिया जा सकता है।

बड़े बड़े संगठनोंके खतरे

भारतमें बहुत लोग अब नौकरशाहीके, धीमेपन, बरबादी, आये दिनकी गैर-जिम्मेदारी और भ्रष्टाचारसे अितने अधिक परिचित होते जा रहे है जितने पहले कभी नहीं थे। ये किसी विशेष व्यक्ति या किसी राजनीतिक दलके दोष नहीं हैं। अिनका कारण राष्ट्रके राजनीतिक संगठनका भीमकाय होना है। अगर सत्ताधारी दल या वर्तमान पदाधिकारी बदल दिये जायं तो भी यह बुराअी बनी रहेगी। यह बुराअी हर राष्ट्रमें पाअी जाती है, भले अुसकी जाति या सामान्य राजनीतिक विचारधारा कुछ भी हो। यह बुराअी ग्रेट ब्रिटेन जैसे छोटे राष्ट्रमें अितनी बड़ी नहीं होती जितनी संयुक्त राज्य अमरीका या रूस जैसे बड़े राष्ट्रोंमें होती है। वह अमरीका जैसे नये देशकी अपेक्षा, जिसकी जनसंख्या कअी देशोंसे आये हुअे लोगोंसे बनी है, किसी अेकरंगे और राजनीतिक दृष्टिसे अनुशासनमें रहे हुअे राष्ट्रमें कम होती है। वह स्टैण्डर्ड ऑअिल कम्पनी जैसे बड़े औद्योगिक संगठनमें किसी राजनीतिक संगठनकी अपेक्षा कम होती है, क्योंकि लोगोंके साथके व्यवहारोंकी अपेक्षा पैसे और पदार्थोंके साथके व्यवहार कहीं अधिक मापने लायक, सुनिश्चित, व्याख्या करने जैसे, नियंत्रणमें रखने योग्य और राजनीतिक हस्तक्षेपके अधीन होते हैं।

बड़े आकारकी पूजा लोभ, महत्त्वाकांक्षा और सत्ताकी भूखके साथ चलती है और अुन्हें अुत्तेजन देती है। अिसके साथ-साथ आम तौर पर अेक और भूल भी पाअी जाती है — वह यह कि किसी बड़े भौगोलिक प्रदेशकी समग्र तथा व्यापक मानव-अेकता राजनीतिक ही होनी चाहिये। प्राचीन अेशियाने, जिसमें भारतवर्ष शामिल था, मेरे खयालसे गांव और परिवारकी दो छोटी संस्थाओंके महत्त्व पर जोर देनेमें और अपने बड़े-बड़े प्रदेशोंकी व्यापक अेकताओंको राजनीतिक रूप देनेके बजाय मुख्यत: सांस्कृतिक रूप देनेमें गहरी बुद्धिमानी की थी। अेशियामें भी समय-

समय पर बडे-बडे राजनीतिक संगठन जरूर खडे हुअे थे, परन्तु अेशियाके महान राजनीतिक संगठन अपेक्षाकृत कमजोर थे। अुदाहरणके लिअे, चीनमें सैनिकोंको घृणाकी दृष्टिसे देखा जाता था। और, मैं भूल नहीं कर रहा होअू तो भारतमें क्षत्रियोंका मुख्य कार्य युद्ध करना नहीं बल्कि शासन करना था और यह शासन अधिकतर छोटे-छोटे प्रदेशोंका होता था। अवश्य ही पश्चिमका यह विश्वास है कि व्यापक संस्थायें मुख्यत राजनीतिक होनी चाहिये। मेरे खयालसे यह अेक बडी भूल है। हां, प्राकृतिक साधनोंकी रक्षा तथा कुछ और विषयोंकी, जिनकी चर्चा आगे की गअी है, बात दूसरी है। आधुनिक शिल्प-विज्ञान और अुद्योगवादको अपनानेके फलस्वरूप संगठनका कुछ हद तक बडा हो जाना अनिवार्य है।

आधुनिक राज्योंमें राजनीतिक लोकतंत्रकी अधिकांश कठिनाअियां और कमजोरियां लोकतंत्रकी मूलभूत कठिनाअियां और कमजोरियां नहीं हैं। परन्तु वे अुनके विशाल आकार और बडी जनसंख्या अर्थात् बहुत बडे पैमाने पर किये जानेवाले संगठनके कारण होती हैं। दिनमें मात्र २४ ही घंटे होते हैं और साधारण लोगोंको अपने और अपने परिवारके लिअे रोटी कमानेमें ही अपना अधिकांश समय और शक्ति खर्च करनी पडती है। अुन्हें वे सारे तथ्य जानने-समझनेका समय ही नहीं मिलता, जो किसी बडी जनसंख्याके सार्वजनिक व्यवहारों पर बुद्धिमत्तापूर्ण निर्णय करनेके लिअे जरूरी हैं। परस्पर विरोधी और स्वार्थपूर्ण हितों द्वारा विकृत हुअे बिना सारे तथ्य मालूम हो जाय तो भी अुनके लिअे अिन पर विचार करनेका समय निकालना संभव नहीं है। अिसके सिवा, बहुतसे लोग दूरके और जाहिरा तौर पर गूढ दिखाअी देनेवाले प्रश्नों पर सोचना पसंद नहीं करते। वे अैसे किसी आदमीके पीछे चलना ज्यादा पसंद करते हैं, जो अिन प्रश्नों पर विचार करनेके लिअे तैयार हो। अिसलिअे बडे-बडे मामलोंमें लोगोंको निर्णय करनेका अपना अधिकार मुट्ठीभर प्रतिनिधियोंके सुपुर्द करना पडता है। परन्तु थोडेसे आदमियोंके हाथमें सत्ताका अिस तरह केन्द्रित होना खतरनाक है। सत्तासे प्रलोभन और भ्रष्टाचारकी प्रवृत्ति पैदा हो

ही जाती है। परन्तु काफी छोटे पैमाने पर, अुदाहरणके लिअे किसी गांवका, काम हो तो वहां लोगोंकी अपनी स्थानीय समस्याओं पर समझ-बूझकर विचार करनेकी तैयारी होती है। अिसके लिअे अुन्हें समय मिल जाता है और अुनमें शक्ति भी होती है; और वे अपने निर्णय सफलता-पूर्वक कर सकते और बता सकते हैं। छोटे क्षेत्रकी समस्यायें पेचीदा भी कम होती हैं। अवश्य ही व्यावहारिक जीवनमें कुछ खतरे तो अुठाने ही पड़ते हैं। परन्तु यह भी व्यावहारिक बुद्धिमत्ता है कि खतरे कमसे कम रखे जायं। अिस बारेमें अधिकांश संगठनोंमें स्वेच्छापूर्वक या कानून द्वारा आकार पर प्रतिबन्ध लगा देनेसे बड़ी मदद मिल सकती है। केवल छोटे-छोटे संगठनोंमें ही रहने और अुन्हीके द्वारा काम करनेका निर्णय करना अैसा ही है, जैसा अच्छा जीवन व्यतीत करनेके लिअे अपने वातावरण पर समझदारीके साथ कोअी और नियंत्रण लगाना होता है। स्थानीय स्वशासन और समग्र अेकीकरणको परस्पर सम्बद्ध करनेके लिअे नये तरीके अीजाद करनेकी जरूरत है।

यदि आधुनिक यातायात और संपर्कके साधनों, प्रचारकी मनोवृत्ति और आधुनिक हथियारों द्वारा पहलेकी अपेक्षा आजकल लोगोंकी बड़ी संख्याओं पर नियंत्रण रखना आसान हो जाता है, तो अुनसे बड़े पैमानेके संगठनके मानसिक और नैतिक खतरे भी बढ़ जाते हैं। किसी भी क्षेत्रमें बड़े संगठनोंका अनिवार्य परिणाम सत्ताका केन्द्रीकरण होता है और अुससे भ्रष्टाचारकी प्रवृत्ति भी लगभग अनिवार्य हो जाती है। अिसलिअे आधु-निक समाजके लिअे यह अेक बड़ा खतरा है। बड़े संगठनसे कार्य-क्षमता बहुत घट जाती है और रहन-सहनका खर्च बढ़ जाता है।

साधन और साध्यके विरोधका खतरा

विवेक-बुद्धिका व्यापार अधिकतर सूक्ष्म वस्तुओंके द्वारा चलता है। वे वस्तुअें हैं धारणायें, विचार, विश्वास, मान्यतायें, नैतिक और मानसिक दृष्टियां और लोगोंके पारस्परिक सम्बन्ध। अिन विचारों या धारणाओंमें से अेक धारणा, जो अभी तक व्यापक या दृढ़ नहीं हुअी है, यह है कि किसी

भी काममें सफलता तभी मिल सकती है जब कि साधन साध्यके अनुरूप ही हों। यह बात गुण और मात्रा दोनोंके लिअे सही है। आप हथौड़े आदि भारी औजारोंसे हाथकी घड़ी नहीं बना सकते। आप बड़ी पिच-कारीसे रंग छिड़ककर अजन्ताकी चित्रकारी नहीं कर सकते। बार-बार पीटकर आप किसी बालकमें या अुस बालकसे बढ़कर वयस्क बननेवाले व्यक्तिमें सुख या भावनाओंका संतुलन पैदा नहीं कर सकते। स्पर्धाकी प्रबल भावनासे स्थायी मानव-अेकताका निर्माण नहीं होगा। हिंसा पर आश्रित रहकर किसी दीर्घजीवी राष्ट्र या संस्कृतिका निर्माण नहीं किया जा सकता।

डार्विनकी खोजोंसे और अुसकी दिखाअी हुअी दिशामें की गयी अन्य खोजोंसे यह साबित हो गया है कि मनुष्य-सहित सारे प्राणियों पर अपनी-अपनी परिस्थितियोंका अनिवार्य प्रभाव पड़ता है। मनुष्यने औजारोंका आविष्कार किया। वे मानवके मस्तिष्कमें विचारोंके रूपमें शुरू हुअे। अपने मस्तिष्क, हाथों और आंखोंसे अुसने अुन्हें मूर्त रूप दिया और बादमें अुनका अुपयोग किया। मनुष्य संगठनों और विचारों जैसे अमूर्त साधनोंको भी विज्ञापनों और प्रचारका मूर्त रूप देता है और अुनका अुपयोग करता है। ये चीजें, जिन्हें मनुष्य अपने भीतरसे निर्माण करता है और काममें लेता है, स्थूल हों या सूक्ष्म, अुसकी परिस्थितिका अंग बन जाती हैं। हरअेक यह मानता है कि औजार और मशीनें मनुष्यकी परिस्थितिका अेक अंग होती हैं। परिस्थितिका अंग होनेके कारण वे अुसे प्रभावित करती हैं। अिसलिअे हमारे अुपयोगमें आनेवाले साधनोंका जैसा स्वरूप होगा वैसा ही हमारे चरित्र पर अुनका असर होगा। यदि हम अनैतिक साधन काममें लेंगे, जैसे हिंसा या अप्रामा-णिकता, तो वे हमारे चरित्रको हानि पहुंचायेंगे। यदि हम प्रामाणिकता, सत्य, विश्वास और प्रेमपूर्वक समझानेकी भावनासे काम लेंगे, तो अिनसे हमारे चरित्रको सहायता मिलेगी; अुसका बल बढ़ेगा। जिस तरह पौधा पानी, खनिज पदार्थ और सूर्यकी शक्तिको, जो अुसके विकासके साधन

हैं, अपने अन्दर खींच लेता है और पचा लेता है, अुसी तरह मानव-व्यवहारोंमें जिन ध्येयोंको सिद्ध करनेकी अभिलाषा रखी जाती है अुनका विकास धीरे धीरे होता है; और अुनकी सिद्धिके लिअे जो साधन काममें लिये जाते हैं अुन साधनोंको वे ध्येय अनिवार्य रूपमें अपने भीतर पचा लेते और आत्मसात् कर लेते हैं। जब किसी राज्यका निर्माण करने या अुसकी रक्षाके लिअे हिंसा काममें लायी जाती है, तो अुस राज्यका स्वरूप अैसा बन जाता है जो बहुत कुछ हिंसक होता है।

अदूरदर्शी होना बड़ा आसान है। हम अकसर अैसे मनुष्यको देखते हैं जो बेअीमानी या अन्यायपूर्ण अुपायोंसे प्राप्त की हुअी सत्ता, दौलत या जमीनका आडंबरपूर्ण ढंगसे अुपभोग करता है। और हमें भी बेअीमान या अन्यायी बनने और साथ ही सत्ता और दौलत प्राप्त करनेका प्रलोभन होता है और हम अैसा मान लेते हैं कि शायद अिससे हमारा कुछ नहीं बिगड़ेगा। परन्तु अुस आदमीको लम्बे अर्से तक देखते रहिये। अुसके चरित्रका, अुसके भीतरी संतुलनका, अुसके सुखका, अुसके बच्चोंका, अुसके पारिवारिक जीवनका और अुसके धनका क्या हाल होता है? जब तक आप किसी पेड़का फल देख और चख नहीं लेते, तब तक आप यह नहीं बता सकते कि पेड़ अच्छा है या बुरा। यही बात किसी मनुष्य और किसी विचारके बारेमें भी सच है। और फलके आने और पकनेमें तो अकसर देर होती ही है।

जब किसी आधुनिक युवकके सामने सत्ताके भ्रष्टाचार या गलत साधनोंके अुपयोगसे पैदा होनेवाले संकटोंके अैतिहासिक अुदाहरण रखे जाते है, तो वह शायद अपने मनमें कहता है: "परन्तु अुस जमानेमें हवाअी जहाज, रेडियो, बिजली, रसायनशास्त्र, मानसशास्त्र, मोटर गाड़ियां और वे सब चीजें कहां थीं, जो आज हमें अपनी परिस्थितियों पर नियंत्रण रखनेकी शक्ति देती हैं? आज हमें पहलेसे कहीं अधिक ज्ञान है और अिसलिअे जैसे पुराने लोग फंस जाते थे वैसे मै नहीं फंसूंगा। जिन चीजोंके जालमें वे फंस गये थे अुनसे मै बचकर निकल सकता

हूं।" परन्तु बाह्य जगत पर नियंत्रण करनेकी प्रगतिका परिणाम यह नहीं होता कि आत्माके भीतरी जगत पर हमारा नियंत्रण बढ़ जाय। विज्ञानकी अितनी प्रगति होने पर भी मानवके मूल स्वभावकी शक्तियां और कमजोरियां दोनों ज्योंकी त्यों बनी रहती हैं। आजकलकी अूपरी भद्रता और कार्योंके असली अर्थको छिपाने या अुनमें तोड़-मरोड़ करनेके साधनोंके बावजूद हिटलर, स्टालिन, विन्स्टन चर्चिल और अेफ० डी० रूजवेल्ट पर भी सत्ताके विषका अुतना ही असर होता था और वे भी अनुचित साधन काममें लेनेकी अुतनी और वैसी ही प्रवृत्ति रखते थे, जितनी और जैसी चंगेजखां, सिकन्दर या जूलियस सीजर रखते थे। नैतिक नियम भले ही धीरे-धीरे काम करते हों, परन्तु वे हैं अुतने ही शाश्वत, प्रबल और अनिवार्य जितना गुरुत्वाकर्षण है। स्थायी सफलता प्राप्त करनेके लिअे वही साधन पसंद किये और काममें लिये जाने चाहिये जो वांछित ध्येयके अनुकूल हों — यह अेक सूक्ष्म और अदृश्य रूपमें काम करनेवाला नियम है, परन्तु यह अुतना ही निश्चित नियम है जितना कोअी तेज गतिसे काम करनेवाला और आकर्षक नियम होता है। साथ ही, यदि कोअी ध्येय नैतिक दृष्टिसे मूल्यवान है तो अुसके अनुकूल साधन भी खोज निकालना और अुनका अुपयोग करना संभव है। अिसका कारण यह है कि जहां तक मानव-व्यवहारोंका संबंध है हम अेक नैतिक विश्वमें रहते हैं। साधन और साध्यकी अिस अेकरसताकी परवाह न करना किसी व्यक्ति, किसी ध्येय और किसी राष्ट्रके लिअे भयावह है।

नैतिक नियमोंका अुल्लंघन करनेवाले संगठनोंका खतरा

फिर, यह मान्यता भी खतरनाक है कि सार्वजनिक मामलोंमें वैयक्तिक सदाचारको ठुकराया जा सकता है या अुसका अूपरी दिखावा-मात्र करके काम चलाया जा सकता है। यह चीज हम बहुतसे, शायद अधिकांश, देशोंके राजनीतिक कार्योंके प्रबन्धमें देख रहे हैं; यह बात हमें बड़े-बड़े अुद्योगों और व्यवसाय-सम्बन्धी संगठनोंके कामकाजमें भी दिखाअी देती है। अमरीका, रूस, आर्जेण्टीना और ब्राजिल आदि बड़े देशोंमें तो यह

अवश्य ही फैली हुअी है; और छोटे देशोंमें भी पाअी जाती है। राज-नीतिज्ञ और कूटनीतिज्ञ अकसर झूठ बोलते या अर्ध-सत्य कहते हैं, क्योंकि अुनके खयालमें राष्ट्र या राज्यके हित सत्यसे अधिक महत्त्वपूर्ण होते है, या अुनके पास समय बहुत थोड़ा होता है, या और कोअी कारण होता है। परन्तु यह दिलचस्प बात है कि जब अुनकी अनैतिकताका पूरी तरह भंडाफोड़ हो जाता है तब अुनका प्रभाव किस प्रकार घट जाता है या अुन्हें कितनी बार सार्वजनिक जीवनसे निवृत्ति लेनी पड़ती है। लोग अुस आदमीको क्षमा कर देते है और अुसका विश्वास भी कर लेते है, जो खुले तौर पर यह स्वीकार कर लेता है कि अुससे प्रामाणिक भूल हो गअी है; परन्तु यदि वह झूठ बोला हो या अुसने धोखा दिया हो और जानते हुअे भी अिस चीजको अुसने छिपानेकी कोशिश की हो, तो कलअी खुलने पर अुसकी साख जाती रहती है और अुसकी निन्दा होती है।

यह सत्य है कि किसी समूह या समाजके मनुष्योंमें आपसी अेकता या सम्बन्ध अितना घनिष्ठ, अितना सम्पूर्ण, अितना सूक्ष्म सन्तुलन-वाला और अितना कोमल नहीं होता, जितना किसी अेक मानव-प्राणीके भीतरी मानसिक, नैतिक और शारीरिक तत्त्वोंमें परस्पर होता है। समाज अभी तक अेक वास्तविक सजीव शरीर नहीं बना है। अेक सूक्ष्म सत्ताके रूपमें समाजका अपना कोअी अन्तःकरण नहीं होता। जैसा कि कहा जाता है, "किसी संगठनके आत्मा नहीं होती"। परन्तु किसी समाजके दुरा-चारोंसे अुसके चरित्रका ह्रास और यदि वे चालू रहें तो अन्तमें विनाश अुतना ही निश्चित है, जितना किसी व्यक्तिका विनाश निश्चित है। अिसलिअे यदि समाजको कभी भी सुधरना है, तो यह बात और ज्यादा महत्त्वकी है कि नेताओंको अपने समूह और समाजकी ओरसे काम करते समय अधिक विवेकशील और सारे नैतिक नियमोंके पालनके लिअे अत्यंत आग्रही होना चाहिये। किसी नेताके दिल और दिमागमें व्यक्तिगत सदाचरण और समूहके हितोंके बीचकी वफादारियोंका संघर्ष हो, तो अुससे

अुनका व्यक्तित्व खंडित हो जाता है, जिसका परिणाम कुछ अुदाहरणोंमें पागलपन तक पहुंच सकता है। यह सच है कि सामूहिक कार्यमें अकसर पेचीदा और परस्पर विरोधी स्वार्थ होते हैं। बहुधा अपना मार्ग स्पष्ट देख सकना अत्यन्त कठिन हो जाता है और मनुष्यसे गलतियां हो जाती हैं। परन्तु आध्यात्मिक और नैतिक सिद्धान्त बहुत समयसे जाने हुअे हैं और वे काफी सीधे-सादे हैं। सबसे बड़ी कठिनाअी तो समझौताके कोलाहलमें और भूतकालकी बुरी विरासतोंमें पैदा होती है। यदि अितिहास कोअी पाठ सिखाता है तो वह यह है कि समूहोंके नेताओंकी नैतिक असफलताअें समाजके लिअे गंभीर खतरे हैं।

आत्माकी अेकतामें अश्रद्धाका खतरा

अुपर्युक्त सूचीमें अंतिम खतरा है नेताओंमें, पुस्तकीय शिक्षा पाये हुअे लोगोंमें और वाचाल लोगोंमें आध्यात्मिक अेकताके अस्तित्व और सर्वोपरि सामर्थ्यमें अविश्वास।

केवल मार्क्सवादी और साम्यवादी ही नहीं, बहुतसे दूसरे समझदार लोग भी आत्माकी वास्तविकतासे अिनकार करते हैं और अैसा मानते हैं कि अर्वाचीन वैज्ञानिक ज्ञानने आत्मा और अुसके फलितार्थोंको बिलकुल दकियानूसी सिद्ध कर दिया है। अुनमें से कुछ संदेहवादी होते हैं, कुछ अज्ञेयवादी और कुछ नास्तिक होते हैं। और कुछ लोगोंको धर्मके प्रति तिरस्कार या घृणा होती है। मार्क्सने धर्मको 'लोगोंकी अफीम' बताया था और साम्यवादी अुसीकी बातको मानते हैं। बहुतोंको अैसा लगता है कि शिल्प-विज्ञान और विज्ञानने धर्मकी जड़ें नष्ट कर दी हैं। विज्ञान और शिल्प-विज्ञानने अनेक लोगोंके ध्यान और दिलचस्पीको बेशक आन्तरिक जगतसे हटाकर बाह्य जगतकी ओर मोड़ दिया है। सचमुच बहुतसे लोगोंके लिअे अब आन्तरिक जगतका अस्तित्व ही तर्कशुद्ध नहीं रह गया है।

गणितको अकसर "विज्ञानोंकी सम्राज्ञी" या "विज्ञानोंकी जननी" कहा जाता है, अिसलिअे हम देखें कि वह हमें कहां ले जाता है। अब

यह अनुभव कर लिया गया है कि गणितकी प्रत्येक शाखा आरंभमें कुछ बातें मान लेती है और अुन पर आधार रखकर फिर तर्कशास्त्रके नियमोंके अनुसार आगे बढ़ती है। जिन्होंने रेखागणितका अध्ययन किया है अुन्हें यूक्लिडकी मान्यताअें (गृहीत सत्य) याद होंगी — अुदाहरणके लिअे, "कोअी भी दो बिन्दुओंको जोड़कर सरल रेखा खींची जा सकती है", या "समानान्तर रेखायें कभी आपसमें मिलती नहीं"। ये गृहीत सत्य न तो सही सिद्ध किये जा सकते हैं, न गलत। यह प्रयत्न कोअी दो हजार वर्षसे हो रहा है। अब यह समझ लिया गया है कि मानव-मस्तिष्कको हर क्षेत्रमें किसी न किसी जगहसे आरंभ करना पड़ता है। वह खुद ही अपना प्रारम्भ करता है। यह बात बर्ट्रॅण्ड रसेल जैसे अत्यन्त संदेहवादी दार्शनिकने भी साफ तौर पर मानी है। अुदाहरणके लिअे, हममें से प्रत्येक अज्ञात रूपसे अपने मनमें यह मान लेता है कि 'मैं हूं'। मार्क्सने भी अज्ञात रूपमें यह मान लिया था। यह 'मैं' शरीर नहीं है। यह वह अिन्द्रियातीत सूक्ष्म अस्तित्व है, जिससे हम सब सुपरिचित हैं। वह हमारे संपूर्ण जाग्रत जीवनमें हममें अुपस्थित रहता है। अिस घनिष्ठ 'मैं' के अस्तित्वको तर्क या वैज्ञानिक यंत्र या क्रिया द्वारा हममें से कोअी दूसरे मनुष्यके सामने सचमुच सिद्ध नहीं कर सकता। फिर भी हममें से प्रत्येक बिलकुल निश्चयपूर्वक यह मानकर चलता है कि 'मैं हूं'। यह अेक पूर्व-स्वीकृत धारणा ही है, परन्तु अिस पर हमारे सारे जीवनका आधार है। अच्छा, तो यह हमें कहां ले जाती है?

अगर हम आग्रहपूर्वक सावधानी और प्रामाणिकतासे सोचें तो हम सब महसूस करेंगे कि हम अेक और अधिक गहन मान्यताको स्वीकार करके चलते हैं। हम यह मानकर चलते हैं कि बाह्य जगतकी समस्त घटनाओं और शक्तियोंकी तहमें अेक सूक्ष्म अेकता है। वह ज्योतिष-शास्त्रके तथ्योंको भूगर्भशास्त्र, भौतिक विज्ञान और रसायनशास्त्रके तथ्योंके साथ बांधकर रखती है। वह रसायनशास्त्र, जीवशास्त्र, शरीरशास्त्र और मानसशास्त्रके सत्योंका मूल आधार है। वह शरीरशास्त्र, मानव तत्त्व-

विज्ञान और मानव वंश-विज्ञानको जोड़ती है। वह गुरुत्वाकर्षण, बिजली तथा चुम्बककी शक्तियों और हरअेक परमाणुकी शक्तियोंको अेक-दूसरेसे बांधती है। अिसी सर्वव्यापक अेकताके कारण हम अपने विश्वकी बात कहते हैं। अिसी धारणाके साथ-साथ अेक और धारणा यह है कि "प्रकृतिके कानून समान हैं"।

और अगर हम अिससे भी गहरे जाकर विचार करें तो हमें पता चलता है कि हम यह भी मानकर चलते हैं कि अेक और भी अैसी गहरी अेकता है जो प्रकृतिकी अुन समग्र शक्तियों और घटनाओंको हमारे अप्रत्यक्ष, अदृश्य और सूक्ष्म आन्तरिक जगतके साथ — हमारे विचारों, मनोभावों, भयों, आशाओं और आकांक्षाओंके जगतके साथ — जोड़ती और बांधती है। अगर आन्तरिक और बाह्य जगतके बीच अैसा कोअी बन्धन न हो, तो हम बाह्य जगतको कुछ भी न समझ सकें।

सारी अेकताओं और सारी धारणाओंमें यह सबसे गहरी अेकता और धारणा है, जो सिद्ध नहीं की जा सकती। परन्तु हमारे जीवन, कार्यों और विश्वासोंका आधार अुस पर है। समग्र अितिहास-कालमें प्रत्येक जाति और प्रत्येक युगके विचारशील लोगोंने अिसे स्वीकार किया है। अुन्होंने अनुभव किया है कि वह सब लोगोंके लिअे मूल्यवान और महत्त्वपूर्ण है और हम सबको जाग्रत रहकर अपने जीवनका मेल अुसके साथ बैठाना चाहिये। यह वही वस्तु है जिसे हम आत्मा कहते हैं। कुछ लोग यह भी मानते हैं कि यह गहनतम अेकता निर्गुण है, कुछ लोग मानते हैं कि वह सगुण है। अिन दोनोंमें से अेक भी मान्यता प्रमाणित या अप्रमाणित नहीं की जा सकती। आत्माकी समझ और अनुभूतिकी शोधको तथा अपने जीवनमें अुसका अस्तित्व स्पष्टतः स्वीकार करनेको ही धर्म या दार्शनिक परम्परा कहा जाता है। अिसलिअे धारणाओंके अस्तित्वको मानना और अुस धारणाको स्वीकार करना, जो जीवनको सबसे अधिक सार्थक बनाती है और अधिकतर समस्याओंका स्पष्टीकरण करती है, पूरी तरह वैज्ञानिक और आधुनिक है।

यह सार्वभौम सत्य है कि बहुतसे लोगोंको, जिन्होंने जिस मूल-भूत अेकताको समझनेमें विशेष योग्यता प्राप्त की है और जिसके पीछे अपना सारा समय लगाया है और अुसे समझानेकी कोशिश की है, अपने बारेमें और अपने ज्ञानके बारेमें घमण्ड हो गया है और वे स्वार्थी, लोभी और अत्याचारी बन गये है। जिस प्रकारकी गलती सभी तरहके पेशेवर लोगोंमें — अध्यापकों, चिकित्सकों, वकीलों, अिंजीनियरों और कूटनीतिज्ञों आदिमें समान रूपसे पाअी जाती है। परन्तु अेक चिकित्सक या बहुतसे चिकित्सकोंके अहंकार, लोभ या दुराचरणसे रोग-निवारण करनेवाली कलाकी कीमत और सचाअी नष्ट नहीं हो जाती। अनेक शिक्षकोंकी संकुचितता और अहंकारसे सच्ची शिक्षाका महत्त्व घट नही जाता। अनेक धर्मगुरुओं और पेशेवर धार्मिक लोगोंके अहंकार, असहिष्णुता, अत्याचार, लोभ, अप्रा-माणिकतासे — वे बड़ी संख्यामें हों तो भी — आत्माका और सच्चे धर्म या सच्चे तत्त्वज्ञानका महत्त्व, मूल्य और वास्तविकता नष्ट नहीं हो जाती।

बहुत संभव है कि भ्रष्ट धार्मिक संस्थाअें धन-दौलत और साम्पत्तिक अधिकारोंमें फंसकर दीर्घ कालसे लोगोंके लिअे अफीमका काम करती रही हों। परन्तु हमें धार्मिक संगठनों और संस्थाओंमें तथा आत्मारूपी अुस साध्यमें, जिसके लिअे मूलतः वे सब केवल साधन थे, भेद करना पड़ेगा। और जैसे हम नीमहकीमों और सच्चे डॉक्टरोंमें भेद करते हैं, वैसे ही हमें भ्रष्ट और सच्चे धर्ममें भी भेद करना पड़ेगा। धर्म स्वयं अफीम नहीं है।

परन्तु मार्क्सवादी और साम्यवादी लोग यदि धर्म और अुसके अनेक पापों पर नाक-भौंह सिकोड़ें और खुद वही काम करें, जिससे धर्ममें खराबी आअी है, तो अिससे काम नहीं चलेगा। मेरा मतलब यहां आर्थिक सत्ता और सामाजिक प्रतिष्ठाके पीछे पड़नेसे है। सत्ता धर्मगुरुओं और धर्मशास्त्रियोंको ही भ्रष्ट नहीं करती; वह मार्क्सवादियों और साम्यवादियोंको भी भ्रष्ट कर सकती है।

धारणाओंमें प्रचंड और दीर्घजीवी शक्ति होती है। अुदाहरणके लिअे, अुन धारणाओंकी तीव्र और सतत शक्तिका विचार कीजिये जो यहूदियों, चीनियों और अंग्रेजोंने अपनी अपनी सांस्कृतिक श्रेष्ठताके बारेमें बना रखी थीं। गोरोंने जो यह धारणा बना रखी है कि वे रंगीन जातियोंसे श्रेष्ठ हैं अुससे आज संसार भरमें कितना भयंकर विनाश हो रहा है अुसे देखिये। अिस प्रचलित धारणाके परिणामोंको देखिये कि मूल्यका सबसे महत्त्वपूर्ण मापदंड पैसा है और पैसेकी सम्पत्ति रखनेवाले लोगोंके हाथोंमें समाजका नियंत्रण रहना चाहिये। हिन्दू, बौद्ध, अिस्लाम और अीसाअी धर्मकी परम्पराओंकी वास्तविकता और भावनाके बारेमें अलग अलग धारणाओंके जबरदस्त और स्थायी सांस्कृतिक परिणामोंको देख लीजिये। गांधीजीकी अिस धारणाकी शक्ति पर भी विचार कीजिये कि परमात्मा सर्वत्र मौजूद है और वह सारे मानव-व्यवहारोंका असरकारक मार्गदर्शन करता है। अिस प्रश्न पर अधिक तर्क करनेकी जरूरत नहीं।

हम सब अनुभव करते हैं कि बाहरी और भीतरी खतरोंके सामने टिके रहनेके लिअे समाजमें अेकता और सूत्रबद्धता होनी चाहिये। मनुष्यकी धारणाओं, विचारों, भावनाओं, आशाओं और आवेगोंके आन्तरिक और बाह्य जगत दोनों सूक्ष्म, पेचीदा, विविध और गहन होते हैं। परमाणुके पदार्थविज्ञानके नये आविष्कारोंसे जाहिर होता है कि परमाणुके भीतर रही शक्तिकी गतिविधियां अुन तत्त्वोंसे संचालित होती हैं जो काल और स्थानसे परे हैं।

अिन सब तथ्योंको देखते हुअे वह असरकारी अेकता, जो किसी विशेष मानव-समाजके सारे तत्त्वों और अंगोंको सम्बद्ध रखे, अैसी होनी चाहिये जिसमें ये सारे तत्त्व और अंग समाये हुअे हों, अर्थात् वह पूरी तरह अव्यक्त और स्थान तथा कालसे भी परे होनी चाहिये। अिन शर्तोंको पूरा करनेवाली अेकमात्र वस्तु वह है जिसे मनुष्यने आत्मा कहा है। अिसलिअे आत्माको अनुभव करने और समझनेकी शोध — अर्थात् धर्म और आध्यात्मिक दर्शनकी परम्परा — किसी राष्ट्रके स्थायी जीवनके लिअे अत्यन्त

आवश्यक है। मानव-प्राणियोंमें अितनी अूपरी विभिन्नताअें होने पर भी, वे चाहें या न चाहें तो भी, अुनकी अेक विशिष्ट जाति है। अुनमें सजीव सृष्टिकी निराली अेकता है। अधिक गहरी और अधिक व्यापक आध्यात्मिक अेकताको स्वीकार करके अिस अेकताको बढ़ाना चाहिये। अिस मान्यतासे और अिसके विकाससे अुस अलौकिक अेकताके भीतर रही विभिन्नताओंको केवल सहन करना ही संभव नहीं होता, बल्कि अुनका आदर करना और आनन्द लेना भी सम्भव बनता है।

चूंकि आत्मा बाह्य प्रकृतिके जगतमें और मनुष्यके भीतर भी विद्यमान है, अिसलिअे मनुष्यके मनमें प्रकृतिके प्रति आदर और पूजाका भाव पैदा करने तथा प्रकृतिके विरुद्ध अुसकी लूट-खसोटको मर्यादित और नियंत्रित बनानेके लिअे धर्मकी आवश्यकता है, अर्थात् सच्चा धर्म और बुद्धि दोनों नीरोग और अुपजाअू भूमिकी रक्षा करनेवाले हैं। विज्ञान प्रकृतिका आदर करवा सकता है, परन्तु अुसकी पूजा और अुससे प्रेम करनेकी प्रेरणा नहीं दे सकता। अिस प्रकार मनुष्यके लिअे स्थायी अन्न-व्यवस्था करने और मनुष्य तथा पृथ्वी और अुसके अन्य सब प्राणियोंके बीच घनिष्ठ अन्योन्याश्रय सम्बन्ध बनाये रखनेके लिअे धर्मकी आवश्यकता है। याद रखिये, मैं धार्मिक संस्थाओंकी बात नहीं कर रहा हूं, परन्तु धर्मकी बात कर रहा हूं।

अिन कारणोंसे आत्माके अस्तित्व और सर्वोपरि सत्तामें विश्वास होना किसी भी राष्ट्रके लिअे बड़े महत्त्वकी बात है। अिस विश्वासके क्षीण होने या नष्ट होनेसे अुसकी अेकता, अुसकी स्वतंत्रता और अुसके अन्न-जलकी व्यवस्थाके लिअे बड़ा खतरा पैदा हो जाता है।

सामाजिक व्यवस्थाओंकी तुलनामें सावधानीकी जरूरत

भारतके सामने प्रस्तुत खतरोंकी चर्चा करनेके बाद अब हम अुनके साथ निपटनेके और भारतीय समाजकी रक्षाके भिन्न भिन्न संभव अुपायोंका विचार करें। अैसा करते समय और समाजकी व्यवस्थाकी अलग अलग पद्धतियोंकी तुलना करते हुअे हमें समझ लेना चाहिये कि

समाजका कोअी रूप संपूर्ण नहीं हो सकता। प्रत्येक सामाजिक गुणके साथ कोअी न कोअी दोष, त्रुटि या कमजोरी अनिवार्य रूपसे लगी हुअी रहती है। अुदाहरणके लिअे, भारतवर्षमें आत्म-साक्षात्कारकी शोध अर्थात 'साधना' को अितना महत्त्व दिया गया है कि भारतीय समाज, अिस बातको निश्चित बनानेके लिअे कि अनेक लोग अुस आदर्शको सिद्ध कर सकें, हजारों अैसे दंभी भिखमंगोंका पालन करता है और अुन्हें सहता है जो दूसरोंसे अन्न-वस्त्र प्राप्त करनेके लिअे साधु होनेका बहाना मात्र करते हैं। प्रत्येक सामाजिक व्यवस्थाके विशेष गुणोंके साथ साथ दोष भी लगे हुअे रहते हैं। हमें विभिन्न व्यवस्थाओंके गुण-दोषोंकी तुलना करके देखना होगा और फिर जो सबसे बुद्धिमत्तापूर्ण दिखाअी दे अुसे चुनना होगा।

हरअेक समाज-व्यवस्थाका विवेचन दूसरी समाज-व्यवस्थाओं पर प्रकाश डालता है और अुन्हें समझनेमें हमारी मदद करता है। हरअेक व्यवस्था दूसरी व्यवस्थाओंकी आलोचना करने और अुनका मूल्यांकन करनेमें सहायक होती है और अिस तरह हमें अपना तत्सम्बन्धी ज्ञान स्पष्ट कर लेनेमें मदद करती है। यह स्पष्टीकरण हममें विश्वास पैदा करता है और रोज-ब-रोज सही चुनाव करनेमें हमारी मदद करता है।

२
पूंजीवाद
पूंजीवादके मुख्य लक्षण

पूंजीवाद अेक सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था है, जो अितने दीर्घ कालसे और अितनी अलग अलग परिस्थितियोंमें चलती आ रही है कि अुसकी व्याख्या करना कठिन है। लेकिन यह वाद अितना सुपरिचित है और अुसके बारेमें हमें अितना व्यापक अनुभव हो चुका है कि निश्चित व्याख्याका प्रयत्न किये बिना भी अुसकी चर्चा की जा सकती है। अुसके अनेक प्रकार हैं और अुसकी कम-अधिक मात्राअें हैं। आजकल वह संसारके अधिकांश देशोंमें कम-अधिक शक्तिमें और भिन्न भिन्न रूपोंमें प्रचलित है। अुसके कुछ मुख्य लक्षण ये हैं: (१) व्यक्तिगत सम्पत्ति और स्पर्धा पर जोर; (२) बढ़ता हुआ शिल्प-विज्ञान और अुद्योगवाद; (३) सतत बढ़ता हुआ श्रम-विभाजन और श्रम-विशेषज्ञता; (४) सतत बढ़ता हुआ वाणिज्य-व्यवसाय; (५) शहरीकरण या गांवोंकी जनताको शहरोंमें खींचनेकी प्रवृत्ति; (६) अधिकांश वस्तुओं और कार्योंका पैसेमें मूल्यांकन और अुन पर पैसेका नियंत्रण; (७) कर्मके लिअे पैसेके नफेकी वृत्तिको सबसे विश्वस्त और सर्वोत्तम प्रेरणा समझकर अुस पर आधार; (८) पुलिस, थलसेना, जलसेना और हवाअी-सेनाके रूपमें संगठित हिंसाका व्यापक अुपयोग; (९) भूमिका वितरण, भूमिका अधिकार, भूमिकर और ब्याज आदिसे सम्बन्धित अैसी व्यवस्थाअें, जो खेतीके खिलाफ अुद्योग और व्यवसायको लाभ पहुंचाती हैं और मौजूदा कानूनी और सामाजिक प्रणालीके साथ पक्षपात करती हैं, और अिसलिअे किसानोंमें गरीबी और अरक्षितताकी भावनाको तथा धरती-कटाव और भूमिकी अुर्वरताके नाशको बढ़ाती हैं। पूंजीवादका सबसे अधिक विकास यूरोप, ग्रेट ब्रिटेन, अमरीका और जापानमें हुआ है।

अुसकी सफलतायें

पूंजीवादमें पैसे, विज्ञान और शिल्प-विज्ञानके मेलने संसारकी काया-पलट कर दी है। भौतिक और अल्पकालीन दृष्टिसे अुसकी सफलता भव्य और अत्यन्त प्रभावशाली है। अुसके अधीन नैसर्गिक शक्तियों और अुन शक्तियोंके नियंत्रणका खूब विकास हुआ है। कुल मिलाकर भौतिक सम्पत्तिमें भारी वृद्धि हुअी है। जिन राष्ट्रोंमें पूंजीवादका अत्यंत अुच्च श्रेणीका विकास हुआ है, अुन्होंने अपने अधिकांश लोगोंके पोषण, निवास-स्थान और वस्त्रोंकी मात्रा और गुणवत्तामें बहुत सुधार किया है; अुन्होंने अपनी प्रजाकी औसत आयु काफी बढ़ा ली है और अपनी जनताके तमाम संक्रामक रोगोंको बहुत कम कर दिया है। अुन्होंने साक्षरताको लगभग सार्वत्रिक और अुच्च शिक्षाको बहुत व्यापक बना दिया है। अुन्होंने गणितका व्यापक प्रचार किया है, जिसमें बुद्धिवाद पर जोर दिया जाता है। कुछ समयके लिअे अैसा लगा मानो पूंजीवाद और अुसके भाअी-बन्दोंने यह पता लगा लिया है कि संसार भरमें दारिद्र्य पर कैसे विजय पाअी जाय और भूखका खतरा कैसे दूर किया जाय। परन्तु अब ये आशायें, जहां तक पूंजीवादका सम्बन्ध है, क्षीण हो गअी हैं। अब तो अिस विषयमें भी स्पष्ट शंका है कि वह कब तक टिकेगा।

आत्म-पराजयके लक्षण

पूंजीवादी अुद्योगवादके कुछ खास परिणाम दिखाअी देते हैं, जिनसे अुसकी अपनी सत्ताके लिअे ही नहीं, बल्कि अुसका अस्तित्व बने रहनेके लिअे भी खतरे पैदा होते हैं। अिनकी चर्चा करते हुअे मैं संयुक्त राज्य अमरीकासे कअी अुदाहरण चुनूंगा। कुछ अंश तक अिसका कारण यह है कि वहां अन्य किसी भी देशकी अपेक्षा पूंजीवादी अुद्योगवादका अधिक विकास हुआ है और अिसलिअे वहां अिस प्रक्रियाके प्रवाह अत्यंत स्पष्ट रूपमें प्रगट होते हैं। कुछ अंश तक अिसका कारण यह भी है कि संयुक्त राज्य अमरीका और भारत लगभग अेक ही आकारके महाद्वीप हैं

और अिसलिअे जहां तक आकारका सम्बन्ध है अिन दोनों देशोंमें अुद्योग-वादका विकास बहुत कुछ अेकसा होना संभव है।

(क) जंगलोंका विनाश

जंगलोंके विनाशकी बात लीजिये, जिसका पहले अुल्लेख हो चुका है। सारे पहाड़ों, पहाड़ियों और अत्यंत ढालू जमीनोंका जंगलोंसे अच्छी तरह ढका रहना भूमिकी रक्षा, अन्नकी पैदावार और अुससे पैदा होनेवाली सुरक्षितता, निश्चितता तथा समृद्धिके लिअे और प्रत्येक राष्ट्र, संस्कृति या सभ्यताके टिके रहनेके लिअे अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। जैसा जॉन स्टीवार्ट कोलिसने लिखा है, "वृक्ष पहाड़ोंको जमाये रखते हैं। वे मेंह-आंधीके तूफानोंको हलका करते हैं। वे नदियोंको संयममें रखते हैं। वे बाढ़ पर काबू रखते हैं। वे झरनोंका पोषण करते हैं। वे पक्षियोंका पालन करते हैं।"* जंगल वायुके तापमानको सौम्य बनाते हैं, वर्षाको बढ़ाने और समान बनाये रखनेमें सहायता देते हैं और दलदलोंको सुखानेमें मददगार होते हैं। जंगलोंके विनाशसे कअी महान प्राचीन सभ्यतायें कैसे नष्ट हो गअीं, अिसकी कहानी 'टॉपसॉअिल अेण्ड सिविलाअिज़ेशन' नामक पुस्तकमें कही गअी है।

यद्यपि जंगलोंका विनाश पूंजीवादी अुद्योगवादका जन्मजात और आवश्यक परिणाम नहीं है, जैसा कि स्वीडन और पश्चिमी जर्मनीमें सिद्ध हुआ है, फिर भी अधिकांश अुद्योग-प्रधान पूंजीवादी देशोंमें यह विनाश सचमुच हुआ है और हो रहा है। चीनकी तरह यह विनाश मनुष्य और शेष प्रकृतिके सम्बन्धोंके अज्ञान, दूरदर्शिताके अभाव, लापरवाही, जनसंख्याकी अत्यधिकता या सरकारोंकी कमजोरीके कारण भी हुआ है। परन्तु संयुक्त राज्य अमरीकाके अुदाहरणमें, जहां जंगलोंका विनाश अितना भारी और अितना तेज हुआ है, अब अिसकी काफी शास्त्रीय जानकारी हो गअी है कि अिस नाशके परिणाम क्या होंगे। फिर भी लकड़ीका व्यापार करनेवाली बड़ी बड़ी कम्पनियों तथा मांसके

* 'दि ट्रायम्फ ऑफ दि ट्री', पृ० १४९।

लिये पशुपालन करनेवाले और भेड़ें चरानेवाले समूहोंका तात्कालिक आर्थिक लाभका प्रलोभन और असके साथ छोटे जमींदारोंकी लापरवाही जंगलोंकी अुचित देखभाल और स्थिर अुत्पादनकी रक्षामें बाधक होती है और पशुओंकी चराओी पर पर्याप्त प्रतिबंध नहीं लगाने देती। संयुक्त राज्य अमरीका यह सिद्ध करता है कि किसी देशके अन्न-जलकी रक्षा करनेवाले जंगलोंको और धरतीको अनियंत्रित पूंजीवादी अुद्योगवाद किस तरह नष्ट कर देता है।

मि० ओगोन लेसिंगरने, जो हालमें संयुक्त राष्ट्रसंघकी खुराक और खेती-सम्बन्धी संस्थाके वन-अुत्पादन विभागके मुख्य अधिकारी थे, १९४७ में लिखा है

> "लकड़ीके अुपयोगकी अिन आदिम पद्धतियोंके बावजूद और खराब जंगल-व्यवस्थाके बावजूद, अमरीका वनस्पतिमें अब भी सम्पन्न है। फिर भी अिन सुन्दर साधनोंका अितनी लापरवाहीसे दुरुपयोग होता है कि अिस राष्ट्रके सामने महाविपत्ति मुंह बाये खड़ी है। संयुक्त राज्य अमरीका आज कार्यरूपमें अिस बातका श्रेष्ठ अुदाहरण पेश करता है कि अपने जंगलोंके साथ कैसा व्यवहार नहीं करना चाहिये। अगर यही आजकी पद्धति बनी रही तो राष्ट्रकी अर्थ-व्यवस्थाको जल्दी ही जो हानि पहुंचेगी अुसकी क्षतिपूर्ति नहीं हो सकेगी। . . संयुक्त राज्य अमरीकाकी अर्थ-व्यवस्थाके सामने लकड़ीकी कमीका भयंकर खतरा खड़ा है, जिससे अुसके घर-निर्माणके कार्यक्रमको बड़ी हानि पहुंच रही है और युद्ध-जर्जरित यूरोप और अेशियाको आवश्यक मदद देनेमें अुस राष्ट्रके सामने बाधा खड़ी हो रही है।"*

(ख) धरती-कटाव

मैं धरती-कटावकी पहले ही संक्षिप्त चर्चा कर चुका हूं। यहां महत्त्वपूर्ण बात यह है कि अधिकसे अधिक कटाव पिछले २५० वर्षोंमें

* 'दि कमिंग अेज ऑफ वुड', पृ० २३, २७।

हुआ और यही काल आधुनिक अुद्योगवादके अुदय और विकासका काल था। बहुत स्पष्ट है कि पूंजीवादी अुद्योगवाद, जिसके साथ जनसंख्याकी बाढ़-सी आअी, अिस भयंकर धरती-कटावका कारण था और यह कटाव आज भी विपत्तिकी दिशामें आगे बढ़ रहा है।

(ग) पानीकी मात्रा घटी है

पानीके मामलेको लीजिये, जो कि जीवनका अत्यन्त आवश्यक तत्त्व है। नीचे दो पैरेग्राफोंमें दी गअी जानकारी आर्थर अेच० कर्हर्ट द्वारा लिखित 'वाटर ऑर योर लाअिफ' नामक पुस्तकसे ली गअी है।

(१) अेक गैलन पेट्रोल बनानेमें ७ से १० गैलन तक पानी लगता है। अेक टन नकली रेशम (रेयॉन) बनानेकी प्रक्रियामें दोसे तीन लाख गैलन पानीकी जरूरत होती है। अेक टन कृत्रिम रबर तैयार करनेमें अिससे तिगुना पानी चाहिये। आधुनिक कागजके कारखानोंमें अेक टन कागज बनानेके लिअे ५० से ६० हजार गैलन पानी जरूरी होता है। दूसरे महायुद्धके शुरूमें संयुक्त राज्य अमरीकामें लगभग कागजके २०० कारखाने थे, जो अेक करोड़ टन या अिससे अधिक बढ़िया कागज तैयार करते थे। अिसका अर्थ हुआ पांच खरब गैलन पानी। कपड़ा-मिलमें १ टन सूती कपड़ा धोनेमें ६० हजार गैलन पानीकी और अुसे रंगनेकी प्रक्रियामें ८० हजार गैलन पानीकी आवश्यकता होती है। अेक पौंड साफ की हुअी सफेद चीनी तैयार करनेमें ७ गैलन पानी जरूरी होता है। अेक पौण्ड अेल्युमिनियम बनानेके लिअे १६० गैलन पानीकी जरूरत रहती है। १ टन साबुन तैयार करनेमें ५०० ग़ैलन पानी लगता है। जब किसी हवाअी जहाजके अेंजिनकी परीक्षा की जाती है तो अुसे ठंडा करनेके लिअे ५० हजारसे १ लाख २५ हजार गैलन पानी लगता है।

(२) तमाम मशीनों, औजारों, बड़े बड़े पुलों और रेलमार्गोंको बनानेके लिअे फौलाद अेक आवश्यक चीज है। वह ज्यादा पानीके बिना तैयार हो सकता है। परन्तु आधुनिक तरीकोंसे बढ़िया किस्मका केवल अेक टन फौलाद तैयार करनेमें ६५,००० गैलन शुद्ध पानी चाहिये। आजकल धातुको गलाकर

अिस्पात बनानेमें पानीका अेक बड़ा अुपयोग बड़े बड़े भभकों और अुनके दरवाज़ोंको ठंडा करनेमें होता है, ताकि वे गले हुअे फौलाद और अीधनकी भयंकर गरमीको सह सकें और भट्ठोंके पास कर्मचारी काम कर सकें। अिस तरह १५० टनवाले अेक भट्ठेको ठंडा करनेके लिअे लगभग २८ लाख गैलन पानी रोजाना चाहिये। फौलादकी चादरें बनाने-वाले कारखानोंमें भी चादरें साफ करनेके लिअे बहुत पानी काममें लिया जाता है। हालमें मेरीलैण्डके स्पैरोज पाअिन्ट स्थित बेथलहेम स्टील कॉरपोरेशन अपना माल तैयार करनेके लिअे प्रति मिनट १५,००० गैलन पानी ज़मीनसे पंप द्वारा खींच रहा था। अवश्य ही यह सारा पानी अिन प्रक्रियाओंमें अितना खराब नहीं हो जाता कि बिलकुल बेकार हो जाय, परन्तु अधिकांश पानी मनुष्यके पीने या कपड़े धोने लायक नहीं रहता या कमसे कम खेतीके लायक तो नहीं ही रह जाता। १९५० में संयुक्त राज्य अमरीकामें लगभग ७०० भाप और बिजलीसे चलनेवाले बड़े कारखाने थे, जिनकी क्षमता कुल ४०,२५०,००० किलोवाट घंटोंकी थी। अिन सब कारखानोंको कुल मिलाकर प्रति मिनट ४४,८८३,००० गैलन पानीकी जरूरत होती थी। पानीकी यह मात्रा बहुत ज्यादा है। यह सारा पानी अेक बारमें ही खर्च नहीं हो जाता, क्योंकि अुसमें से बहुतसा बार बार काममें आता है। फिर भी ये आंकड़े आदमीको विचारमें डाल देते हैं। पानीकी व्यवस्था अब संयुक्त राज्य अमरीकामें अेक नअी गंभीर औद्योगिक समस्या बन गअी है, और १९५७ में राष्ट्रपति आअिज़नहॉवरने कांग्रेसके सामने दिये गये अपने पहले अभिभाषणके कअी पैरोंमें अिसका अुल्लेख किया था। ३ मार्च, १९५७ के 'न्यूयार्क टाअिम्स' के पृष्ठ १०८ पर अेक शीर्षक था "पानीकी कमीसे राष्ट्रके असीम विस्तारके स्वप्नको खतरा" और "सात राज्योंमें पानीकी भारी कमी"। अिंग्लैण्डमें लदंनका जल-प्रबन्ध अपर्याप्त सिद्ध हो रहा है।

शहरोंके गंदे पानी, कोयलेकी खानों, मिट्टीके तेल और पेट्रोलके क्षेत्रों, खाद्य-पदार्थोंको साफ करनेकी प्रक्रिया, कागजके गूदेकी मिलों,

फौलादके कारखानों, कपड़ेकी मिलों और रासायनिक अुद्योगोंसे नदियां और झरने गंदे और विपाक्त होते हैं। अिससे नदियोंकी तमाम मछलियां मर जाती हैं और पानी किसी भी घरेलू अुपयोग या खेतीके अुपयोगके लिअे बेकार और खतरनाक हो जाता है।

अुद्योगवादसे बड़े बड़े शहर बनते हैं। प्रत्येक मनुष्यको जिन्दा रहनेके लिअे ६ से ८ पिंट पानी रोज चाहिये। जितना बड़ा शहर होता है अुसमें अुतने ही अधिक कारखाने होते हैं, अुतना ही अुसका प्रति व्यक्ति पानीका खर्च अधिक होता है। संयुक्त राज्य अमरीकाके किसी बड़े अुद्योग-प्रधान नगरमें अेक आदमी पर अेक दिनमें १२५ से ३०० गैलन पानी खर्च होता है। वहां अेक आदमीके खाने-पीनेके पदार्थ पैदा करनेमें प्रतिवर्ष ५,००० टनसे अधिक पानी लगता है।

जैसा कृषि-अनुसंधानसे सिद्ध हुआ है, खेतीके लिअे भी विपुल मात्रामें पानीकी जरूरत होती है। अमरीकी कृषि-विभागकी १९५५ की वार्षिक पुस्तकमें पृष्ठ ३५८ पर कहा गया है: "बढ़ते हुअे पौधे बहुत अधिक पानी हवामें अुड़ाते हैं, जो वे जमीनमें से ग्रहण करते हैं। आयोवाका अनाजका अेक खेत फसलके मौसममें अितना पानी हवामें अुड़ाता है, जिससे १२ या १६ अिंच तक खेत पानीसे डूब जाय। ग्रेट प्लेन्स नामक मैदानोंमें अेक टन अल्फाल्फा नामक सूखी घास अुत्पन्न करनेमें हरे पौधों द्वारा ७०० टन पानी हवामें अुड़ाया जाता होगा। अिसका आधार वायुमंडलकी वाष्पीकरणकी शक्ति पर रहता है।" फिर पृष्ठ ३९६ पर कहा गया है: "अन्नका अेक ही पूरे पत्तोंवाला विकसित पौधा अेक सप्ताहमें ३२ क्वार्टर पानी हवामें फेंक सकता है।" जॉन स्टीवार्ट कोलिस, जिनका कथन हम पहले अुद्धृत कर चुके हैं, लिखते हैं, "गरमीके अेक ही दिनमें विलो नामका पूर्ण विकसित अेक पेड़ ५,२८० गैलन तक पानी हवामें फेंक सकता है। . . . अेक अेकड़ अन्नका खेत आम तौर पर पौधोंकी बढ़तीके कालमें लगभग ३,५०० टन पानी भापके रूपमें निकालता है।" अेफ० अेच० किंगने प्रयोगोंसे मालूम

किया है कि कुछ पौधोंके अेक पौंड सूखे द्रव्यके अुत्पादनके लिअे ओटको ३१० पौण्ड पानी, गरमीके दिनोंमें पकनेवाले राय नामके अनाजको ३५३ पौण्ड, जौको ३७६ पौण्ड, गरमीके गेहूंको ३३८ पौण्ड, फील्ड-बीन नामक दालको २८६ पौण्ड, सेमको २७३ पौण्ड, और बकह्वीट नामके गेहूंको ३६३ पौण्ड पानी चाहिये। अेक टन सूखा द्रव्य पैदा करनेके लिअे यह ३२५ टन पानीका औसत हिसाब है। अेक पेड़ द्वारा अेक पौण्ड सूखी लकड़ी पैदा करनेके लिअे १,००० पौण्ड तक पानी हवामें भाप बनकर अुड़ जाता है।

अुपलब्ध पानीकी कुल मात्राको मुख्यतः अुद्योग और खेतीमें बांटना पड़ता है। संयुक्त राज्य अमरीकामें विश्वस्त रूपसे अंदाज लगाया गया है कि कुल अुपलब्ध पानीका ४८ प्रतिशत सिंचाअीमें, ४३ प्रतिशत सीधा अुद्योगोंमें और ९ प्रतिशत घरके कामों आदिमें अुपयोग किया जाता है।

भारत जैसे देशमें, जहां वर्षाकी मात्रा प्रतिवर्ष अनियमित रहती है, प्रतिवर्ष तीन-चार महीनोंमें ही सारी वर्षा हो जाती है और जिसकी जनसंख्याका खुराकके लिअे जमीन पर बुरी तरह दबाव पड़ रहा है, अुद्योगवादके बहुत पीछे पड़नेमें खतरा ही है। अन्न औद्योगिक अुत्पादनसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। सरकारको जमीनकी सतह परके पानीका और सतहके नीचेके पानीका कृषि और अुद्योगके बीच बड़ी सावधानीसे बटवारा करना पड़ेगा।

फिर, अधिक पानीकी अनिश्चित मात्राके लिअे टयूबवेल (पाताल-कुअें) पर निर्भर करनेसे भी काम नहीं चलेगा। भारतीय मैदानोंमें जमीनके नीचेका पानी पहाड़ोंसे आनेवाली भूगर्भ-स्थित धाराओंसे मिलता हो या स्थानीय वर्षासे आसपासकी जमीनमें जज्ब हुअे पानीसे मिलता हो, अुस जमीनके नीचेके पानीकी मात्रा सीमित है।

संयुक्त राज्य अमरीकाके कैलीफोर्निया राज्यके लॉस अेंजीलिस शहरने अपने कामके लिअे नलों द्वारा जमीनके भीतरका अितना पानी खींचा है कि अुसके आसपासकी जमीनकी सतह कअी स्थानों पर आठ

आठ फुट तक नीचे बैठ गअी है। कैलीफोर्नियाके लांग वीच नामक क्षेत्रमें जमीनके भीतरके पानीको खींचनेसे अुसके जमीनके नीचेके पानीकी सतह समुद्रकी सतहसे ७५ फुट नीचे चली गअी है; और समुद्र-तटके अुस सारे भागमें कुअेंका पानी खारा होने लगा है। १९१० में कैलीफोर्नियाकी सान्ता क्लेरा घाटीमें भरपूर पानीवाले अेक हजार पाताल-कुअें थे, जो अधिकतर खेतीके काम आते थे; अुनके सिवा, कम गहरे पाताल-कुअें भी थे; पंपसे निकाला जानेवाला पानी १९१५ में २५,००० अेकड़-फुट था, जो वढ़कर १९३३ में १३४,००० अेकड़-फुट हो गया। जमीनके नीचेके पानीकी सतह हर साल ५ फुट गिरने लगी, यहां तक कि १९३३ में वह २१ फुट नीचे चली गअी! खुद घाटीकी धरती २० वर्षमें ५ फुट नीचे धंस गअी, जिससे मकानों, गलियों, नलों और फलोंकी वाड़ियोंको करोड़ों रुपयेका नुकसान हो गया। टेक्सास प्रान्तके टेक्सास नगरमें अुद्योग-सम्बन्धी कामोंके लिअे अितने अधिक पानीकी आवश्यकता हुअी कि वहुतसे पाताल-कुअें खोदने पड़े, जिनमें से कुछ तो १,१०० फुट तक गहरे गये। १९३९ में अिन कुओंसे पंप द्वारा रोज लगभग अेक करोड़ गैलन पानी खींचा जा रहा था। दूसरे महायुद्धने अुद्योगकी मांग अितनी ज्यादा वढ़ा दी कि १९४५ में ये कुअें २ करोड़ २५ लाख गैलन पानी प्रति दिन मुहैया कर रहे थे। नतीजा यह हुआ कि वहां अेक पाताल-कुअेंमें पानीका स्तर समुद्रकी सतहसे १०२ फुट नीचे चला गया; अेक और कुअेंने जमीनसे अितना अधिक पानी खींचा कि अुसकी सतह समुद्रकी सतहसे १६५ फुट नीची हो गअी। परिणामस्वरूप भूमिके अन्दरके पानीमें समुद्रका पानी घुस जानेसे वह खारा हो गया। अुसी प्रदेशमें स्वयं भूमिका स्तर हर साल औसतन् २.४ अिंच तक नीचे धंसा; कुछ स्थलों पर धंसनेकी यह क्रिया १.५ फुट तक वढ़ गअी। अन्य स्थानोंमें, जैसे लुअीविली, कैन्टकी आदिमें, जो समुद्रसे वहुत दूर हैं और जहां युद्धके कारण अुद्योग पर भारी दवाव पड़ा, पाताल-कुअें सूखने लगे। जितनी तेजीसे पानी जमीनमें आता अुससे कहीं ज्यादा जल्दी वह जमीनसे खींच लिया जाता था। कैलीफोर्नियामें

सिंचाअीके कामोंके लिअे जमीनमें से नीचे आनेवाले पानीसे कअी जगहों पर जमीनके भीतरके पानीकी सतह कअी सौ फुट नीचे चली गअी है और पपसे पानी सींचनेका खर्च दूनेसे बाहर होने लगा है, जिससे फलोंके बगीचे और खेत छोड देने पडे है।

(घ) अन्य प्राकृतिक साधनोंका अपव्यय

पूंजीवादी अुद्योगवाद कोयला, पेट्रोल और सब प्रकारके खनिज पदार्थ अपार मात्रामें खर्च कर रहा है। ग्रेट ब्रिटेनकी बची हुअी कोयलेकी खानें अब अितनी ज्यादा गहरी, ढालू तथा तंग हैं कि वहां कोयला निकालना दिनोंदिन अधिक कठिन और खर्चीला होता जा रहा है। अब अुसे अीधनके लिअे मुख्यत मध्य पूर्वके तेल पर निर्भर रहना पडता है। अुसे अपने अुद्योगोंके लिअे लगभग सारा ही कच्चा माल बाहरसे मंगाना पडता है।

संयुक्त राज्य अमरीकाने १९०० की अपेक्षा १९५० में जलनेवाला कोयला अढाअी गुना, तांबा तीन गुना, जस्ता चार गुना और बिना साफ किया हुआ तेल (क्रूड ऑअिल) तीस गुना अधिक जमीनसे निकाला। राष्ट्रपति ट्रूमेन द्वारा नियुक्त सामग्री-नीति-आयोगकी १९५२ की रिपोर्टके अनुसार अधिकांश धातुओंकी और खनिज अींधनोंकी जो मात्रा पहले विश्वयुद्धके बाद संयुक्त राज्य अमरीकाने काममें ली है, वह १९१४ से पहलेके समस्त अितिहासमें सारे संसार द्वारा काममें ली हुअी संपूर्ण मात्रासे अधिक है। जहां अमरीकाकी जनसंख्या पिछले ५० वर्षमें दुगुनी हुअी, वहां सारे खनिज पदार्थोंका अुत्पादन आठ गुना बढ़ा, विद्युत्-शक्तिका अुपयोग ग्यारह गुना बढा, और अुसी कालमें कागज और पुट्ठेका खर्च चौदह गुना बढा। १९०० में संयुक्त राज्य अमरीकाने (अन्नके सिवा) अपने खर्चसे लगभग १५ प्रतिशत अधिक अुत्पादन किया, १९५० में वह अपने अुत्पादनसे १० प्रतिशत अधिक सामग्री खर्च कर रहा था।

संयुक्त राज्य अमरीकाके पास संसारकी गैर-साम्यवादी जनसंख्याका १० प्रतिशतसे कम हिस्सा है और गैर-साम्यवादी क्षेत्रफलका केवल ८

प्रतिशत हिस्सा है, परंतु १९५० में वह पेट्रोल, रबर, कच्चा लोहा, मेंगेनीज और जस्ता जैसे बुनियादी कच्चे मालकी समूचे संसारकी अुत्पन्न मात्राका आधेसे ज्यादा खर्च करता था। यह आधारभूत अनुमान लगाया गया है कि १९५० और १९७५ के बीच संयुक्त राज्य अमरीकाकी कच्चे मालकी मांग सम्भवत: अिस प्रकार बढ़ जायगी: कुल मिलाकर खनिज पदार्थोंकी जरूरत, जिनमें धातुअें, अींधन और अन्य पदार्थ शामिल हैं, लगभग ९० प्रतिशत या करीब करीब दुगनी; खेतीकी सारी पैदावारकी लगभग ४० प्रतिशत; अुद्योगोंके लिअे आवश्यक पानी लगभग १७० प्रतिशत। अिस अवधिमें संयुक्त राज्य अमरीकाकी जनसंख्या जितनी बढ़नेकी आशा है अुससे ये वृद्धियां बहुत अधिक है।

१९३९ से संयुक्त राज्य अमरीकाने कच्चे मालके निर्यातकी अपेक्षा आयात अधिक किया है और यह घाटा बढ़ता जा रहा है। १९५० में *संयुक्त राज्य अमरीकाने अिन महत्त्वपूर्ण कच्चे पदार्थोंका आयात किया था:* कच्चा पेट्रोल, अुपयोगमें आने योग्य कच्चा लोहा, मैगनेशियम, टंगस्टन, फ्लोअर स्पार, तांवा, जस्ता, सीसा, वौक्साअिट, पारा, ग्रेफाअिट, अेन्टी-मनी, कोवाल्ट, मेंगेनीजकी कच्ची धातु, आस्वेस्टस, गिलट, टीन, क्रोमाअिट, तथा औद्योगिक अुपयोगके हीरे।

अिन आंकड़ोंसे केवल दुनियाके सबसे ज्यादा अुद्योग-प्रधान राष्ट्रमें कच्चे मालकी अदम्य भूख और अुसके अविचारपूर्ण खर्च तथा पूंजीवादकी अिस विशेष प्रवृत्तिका ही प्रमाण नहीं मिलता; अुनसे यह भी सिद्ध होता है कि पूंजीवादमें मर्यादाका कोअी सिद्धान्त नहीं होता, कोअी आत्म-संयम नहीं होता। निरन्तर बढ़ते रहनेवाले बाजारका सिद्धान्त पूंजीवादका मूलभूत सिद्धान्त है। पूंजीवादी अुद्योगवाद प्राकृतिक साधनोंको अितनी तेजीसे खर्च कर रहा है कि न्यायपूर्वक यह कहा जा सकता है कि वह हमारी भावी सन्तानों, कमजोर राष्ट्रों और जातियोंकी सम्पत्ति पर मौज अुड़ा रहा है और अच्छे जीवनकी सामग्रीसे अुन्हें वंचित कर रहा है।

सिद्धान्त रूपसे अैसा नहीं मालूम होता कि आत्म-संयमका यह अभाव पूंजीवादका आवश्यक और अनिवार्य तत्त्व है। परन्तु व्यवहारमें पूंजीपतियों और अुद्योग-व्यवस्थापकोंकी सत्ताकी भूख, सफलताके प्रचलित आर्थिक मापदण्ड, सब वर्गोंके अधिकांश लोगोंकी अत्यन्त आराम और सुविधा भोगनेकी अिच्छायें तथा शहरी जीवनके नीरस और यांत्रिक क्रमसे बाहर निकलकर मनोरंजन करनेकी आकांक्षा — ये सब बातें मनुष्य पर काबू कर लेती हैं। अिन हेतुओंकी प्रधानता अखबारों, मासिक पत्रों, आकाशवाणी, टेलीविजन, चलचित्रों, खेलकूद, शिक्षा, विधान-सभाओं और राजनीतिमें अितनी अधिक है कि लगभग प्रत्येक मनुष्य यह देखनेमें असफल रहता है कि अैसी सभ्यता किस दिशामें जा रही है और अपनी अिस पसंदकी वह क्या कीमत चुका रही है। अमरीकाके रहन-सहनका अूंचा स्तर अधिकतर बरबादीका ही अूंचा स्तर है।

समग्र पूंजीवादी अुद्योगवाद अपना विनाश स्वयं कर रहा है। सत्तामें मनुष्यको भ्रष्ट करनेकी प्रवृत्ति होती है, लॉर्ड अेक्टनके अिस कथनका यह दूसरा अुदाहरण मालूम होता है। अिस अुदाहरणमें भ्रष्टता कल्पनाकी, दूरदर्शिताकी, निर्णयकी और आत्म-संयमकी मालूम होती है।

(ड) स्वास्थ्यकी हानि

अिनकी अेक और कमजोरी सामने आ रही है।

यद्यपि हमारे पास अिसके निश्चित आंकड़े नहीं हैं कि अुद्योग-प्रधान समाजमें कम अुद्योगवाले या अुद्योग-रहित समाजकी तुलनामें तंदुरुस्ती या बीमारी अधिक है या कम, फिर भी यह संभव है कि अुद्योग-प्रधान राष्ट्रोंमें संक्रामक या छूतकी बीमारियां या पराश्रयी बीमारियां कम हों। पैदा होने पर शिशुओंके जीवनकी आशा अधिक अुद्योग-प्रधान समाजोंमें अल्प अुद्योग-प्रधान समाजोंकी अपेक्षा अधिक होती है। परन्तु जिन्हें शरीरका क्षय करनेवाले रोग कहा जाता है — अुदाहरणार्थ, नासूर, हृदयरोग, रक्तचाप, बहुमूत्र और गुर्देकी बीमारी — वे अन्य स्थानोंकी अपेक्षा अति अुद्योग-प्रधान राष्ट्रोंमें अधिक होते हैं। संयुक्त

राज्य अमरीकामें पेटके फोड़ेकी बीमारी अन्य किसी राष्ट्रसे अधिक मात्रामें होती है।

अमरीकन मेडिकल अेसोसियेशनके मुखपत्रके अनुसार यदि १५ वर्ष और अुससे अूपरकी आयुवाले १,००० अमरीकियोंके समूहकी पांडु-रोग, हृदयरोग, नासूर, मुटापा, क्षयरोग और कोअी २० अन्य शारीरिक दोषों और व्याधियोंके लिअे जांच की जाय, तो ९७६ मनुष्योंमें रोग या व्याधि पाअी जायगी। दूसरे महायुद्धके पहले और अुसके दौरानमें जिन १४,०००,००० के लगभग अमरीकी नौजवानोंकी फौजी भरतीके लिअे परीक्षा की गअी थी, अुनमें से केवल २,०००,००० ही पूरी तरह योग्य निकले। प्रथम महायुद्धमें जो अमरीकी नौजवान सेनामें भरती किये गये थे अुनमें से १५ प्रतिशतसे कुछ कम शारीरिक परीक्षामें अयोग्य माने जाकर अस्वीकार कर दिये गये थे; दूसरे महायुद्धमें ४१ प्रतिशतसे कुछ अधिक नौजवानोंको नहीं लिया गया था। यह परिणाम जांचके बाद युद्धकालीन स्वास्थ्य अेवं शिक्षा-संबंधी अेक अमरीकी संसदीय अुपसमितिने निकाला था। संयुक्त राज्योंमें मधुमेहके रोगियोंका अनुपात जन्मसंख्याके अनुपातसे अधिक है। ७० लाखसे अधिक अमरीकी संधि-प्रदाहके शिकार हैं। तथाकथित 'स्वस्थ' अमरीकी पुरुषोंमें से १० प्रतिशतके पेटमें फोड़ा होता है। हर छहमें से अेक अमरीकी नपुंसक होता है। जो देश सामान्यतः भौतिक मापदण्डसे दुनियाका सबसे बलशाली, 'प्रगतिशील' और खुशहाल देश माना जाता है, अुसका यह कोअी सुन्दर चित्र नहीं है।

अगर आपको यह आश्चर्य हो रहा हो कि बुरे स्वास्थ्यका दोष पूंजीवादी अुद्योगवादके मत्थे कैसे और क्यों मढ़ा जा सकता है, तो अिसका अेक अुत्तर यह है कि धरतीका कटना और अुसका कस घटना तथा मिट्टीके क्षारोंका कम होना, जिसकी चर्चा पहले की जा चुकी है, अैसे खाद्यान्न अुत्पन्न करता है जिनमें प्रोटीन तत्त्व, क्षार और जीवन-तत्त्व (विटामिन) कम होते हैं। अुद्योगवादसे भूमिके तत्त्वोंका नाश हुआ है और अिसलिअे वह अेक हद तक अुन लोगोंकी स्वास्थ्यहानिके लिअे जिम्मेदार है, जिन्हें

जैसी जमीनसे अुत्पन्न हुअी कम पोषणवाली खुराक काममें लेनी पड़ती है।

अुदाहरणके लिअे, प्राध्यापक विलियम आल्ब्रेगने, जो मिसूरी विश्वविद्यालयमें कृषि-महाविद्यालयके भूमि-विभागके अध्यक्ष हैं, दूसरे महायुद्धमें अमरीकी सेनाके दन्तरोगोंके आंकड़ोंका विश्लेषण किया है। अिस सेनामें कअी लाख नौजवान थे। अिसलिअे यह सामग्री अितनी बड़ी है कि अुससे निर्णयके लिअे ठोस आधार मिलता है। कमसे कम खोखले दांतोंवाले लोग कॉलोराडो और विओमिंग जैसे अूंचे, सूखे पश्चिमी राज्योंसे आये थे, जहांकी धरतीमें क्षार खूब हैं और जिसके क्षार भारी वर्षासे बहे नहीं हैं या दीर्घकालीन अथवा विस्तृत खेतीके कारण नष्ट नहीं हो गये हैं। काफी बड़ी संख्यामें खोखले दांत रखनेवाले आदमी अुन राज्योंसे आये थे, जिनमें वर्षा अधिक होती है और जहां जमीनकी खेती व्यापक रूपमें और दीर्घकालसे होती रही है। सबसे ज्यादा खोखले दांत और दन्तरोग अुन जवानोंमें पाये गये, जो दक्षिण-पूर्वी राज्योंसे आये थे, जहां धरतीका कटाव सबसे अधिक है, वर्षा भारी होती है, क्षार पानीमें बह जाते हैं और खेती — ज्यादातर कपास और तम्बाकूकी — अुसी समयसे होती रही है, जबसे गोरे लोग पहले-पहल अिस देशमें आकर बसे थे।

अुद्योगवाद बीमारियोंके लिअे क्यों जिम्मेदार है, अिसका दूसरा कारण यह है कि अुद्योगसे पैदा होनेवाला शहरीकरण अन्नके अुत्पादकोंको अुसके अुपभोक्ताओंसे अलग कर देता है। रहन-सहनके शहरी ढंगके साथ विज्ञापनबाजी और यंत्रीकरणका परिणाम यह होता है कि अधिकांश गृहस्वामिनियोंमें अपना आटा आप पीस लेनेकी अिच्छा या शक्ति नहीं रहती। वे अुसे बनियेकी दुकानसे खरीद लेती हैं। शायद ज्यादातर गृहिणियां — पश्चिममें तो अवश्य ही — रोटीके कारखानोंसे डबल रोटी खरीद लेती हैं। अधिक रुपया बटोरनेके लिअे चक्कीवाले गेहूंका सारा चोकर पीसते समय छानकर निकाल देते हैं, जिसमें फॉस्फोरस जैसे खनिज तत्त्व जो मानव-स्वास्थ्यके लिअे आवश्यक हैं, अधिकांश

प्रोटीन तथा विटामिन 'बी' जैसे पोषक तत्त्व होते हैं। यह सत्त्वहीन आटा पूर्ण गेहूंके मोटे आटेकी तरह जल्दी खट्टा नहीं होता और न कृमि या कीटाणुओंको ही आकर्षित करता है। ये छोटे जीव-जन्तु अितने समझदार हैं कि वे भी अैसे निःसत्त्व आटेको खानेकी कोशिश नहीं करते! अिस तरहका निःसत्त्व आटा दूर दूर तक भेजा जा सकता है और दुकानदारके यहां महीनों रखा रह सकता है; और फिर भी अुन मानव-प्राणियोंके हाथों बेचनेके काबिल रह सकता है, जिनमें कीटाणुओं जितनी भी बुद्धिमानी नहीं होती। अिसके सिवा, अैसे आटेकी रोटी खानेवाले बेवकूफ मानव यह समझते हैं कि मैदेकी रोटी हाथचक्कीसे रोज घरमें पीसे हुअे साधारण भूरे आटेकी रोटीसे ज्यादा शानदार चीज है। अिस प्रकार वे अपने पेट और अहंकार दोनोंको मूर्खताके भोजनसे तृप्त करते हैं। अितना ही नहीं, चक्कीवाले आटेको रासायनिक पदार्थोंसे साफ करके ज्यादा सफेद बनाते हैं और रोटीके कारखाने रोटीको हलकी और गीली रखनेके लिअे आटेमें दूसरे रासायनिक पदार्थ मिलाते हैं। अैसी निःसत्त्व रोटी, जिसमें हानिकारक रासायनिक पदार्थ मिले होते हैं, पश्चिममें लोगोंका स्वास्थ्य बिगाड़नेवाले कारणोंमें से अेक है। यही बात मिलमें कूटे और पालिश किये हुअे चावल और सफेद 'बढ़िया' शक्कर पर लागू होती है। अधिकांश लोग अब यह जानते हैं कि मुख्यतः पालिश किये हुअे चावल खानेसे बेरीबेरीका रोग हो जाता है। प्राकृतिक विटा-मिन और क्षार निकाल लेनेके बाद कृत्रिम विटामिन मिलानेसे पोषक तत्त्वोंकी कमी पूरी नहीं होती। पश्चिममें शहरी लोग डिब्बोंमें बन्द खुराक बड़ी मात्रामें खाते हैं, मगर अुसमें विटामिन और मानव-स्वास्थ्यके लिअे आवश्यक अन्य तत्त्व बहुत कम होते हैं। पूंजीवाद बड़े बड़े शहर खड़े करता है और शहरवासियोंका भोजन ज्यादातर दूर दूरसे आता है और वह बासी तथा सत्त्वहीन होता है। हालके वर्षोंमें टीनके डिब्बों, बोतलों या कागजके डिब्बोंमें बन्द खुराकमें खाद्योंकी रक्षाके लिअे कअी हानिकारक रासायनिक पदार्थ मिला दिये जाते हैं। शाक-

भाजी और फलों पर सीसा, गंधक, मक्षिका अथवा डी० डी० टी० जैसे कृमि-नाशक द्रव्य छिड़के जाते हैं, जो मानव-प्राणियोंके लिअे अुतने ही जहरीले होते हैं जितने कीटाणुओंके लिअे। अुनमें से अधिकांश धोकर साफ नहीं किये जा सकते और कुछ तो पौधोंके तन्तुओंमें गहरे पैठ जाते हैं। रासायनिक पद्धतिसे खाद्य-पदार्थ बनानेवाले अुद्योगोंने अुपभोक्ताओंकी रक्षाके लिअे बनाये गये कानूनोंको दो अर्थवाली भाषामें प्रस्तुत करवा कर अथवा विधान-सभाओंको यह समझाकर कि कानूनका अमल करानेवाले शासकोंको पर्याप्त धनसे वंचित रखा जाय, अुन कानूनोंको पंगु बना दिया है। रासायनिक पद्धतिसे तैयार किये जानेवाले अैसे खाद्योंसे होनेवाली हानिके काफी प्रमाण मिलते हैं। घटिया खुराकके अलावा स्पर्धा, कारखानेके कामके अस्वाभाविक दबाव, यांत्रिक जीवनकी थकान, धुअेंसे भरी हवा, रहनेके तंग और पिचपिच मकान, स्वास्थ्यको हानि पहुंचानेवाली अुत्तेजनायें और शहरी जिन्दगीकी निराशायें सब मानसिक तनाव पैदा करते हैं।

यद्यपि संयुक्त राज्य अमरीकामें अस्पतालोंके आधे बिस्तर मानसिक बीमारियोंसे पीड़ित रोगियोंके होते हैं, फिर भी अभी तक अिस बातका कोअी स्पष्ट प्रमाण नहीं मिला है कि किसी समाजमें मानसिक रोगोंकी मात्रा अुद्योगीकरणके कारण बढ़ती है। बहुत संभव है कि अुद्योगीकरणसे अिन रोगोंकी वृद्धि होती हो, परन्तु अभी तक यह साफ तौर पर साबित नहीं हुआ है।

(घ) शिक्षाकी हानि

जंगलोंके विनाशकी ही तरह पूंजीवादी अुद्योगवादमें जन्मजात अैसा कोअी दोष नहीं है जिसके कारण शिक्षाकी हानि हो। परन्तु वस्तुस्थिति यह है कि सबसे अधिक अुद्योग-प्रधान देशोंमें से दो देशोंमें, अर्थात् संयुक्त राज्य अमरीका और ग्रेट ब्रिटेनमें, स्कूलों और कॉलेजोंकी अिमारतोंकी और प्राथमिक शालाओं, हाअीस्कूलों और कॉलेजोंके लिअे शिक्षकोंकी बड़ी कमी है। औद्योगिक कर्मचारियोंसे शिक्षकोंका सामाजिक दर्जा और वेतन बहुत नीचा है; और संयुक्त राज्य अमरीकामें तो वह सचमुच अेक अच्छे

बढ़अी, नलसाज (प्लम्बर) या कुशल यंत्रकारसे भी अकसर नीचा होता है। संयुक्त राज्य अमरीकामें कअी हजार शिक्षक हर साल शिक्षाका धंधा छोड़कर अैसे दूसरे धंधोंमें जा रहे हैं, जिनमें सभ्य जीवनके लिअे आवश्यक पर्याप्त जीविका मिल सके। अमरीकामें आबादीके बढ़नेके कारण शिक्षाके क्षेत्रमें ये कठिनाअियां लगातार अधिकाधिक भारी होती जायंगी।

मुझे पता नहीं कि पश्चिम जर्मनी, स्वीडन और यूरोपके दूसरे अुद्योग-प्रधान देशोंका भी यही हाल है या नहीं। अिसका कारण संभवतः लड़ाअीकी तैयारियों पर होनेवाला बहुत भारी सरकारी खर्च हो। फिर भी सोवियट संघमें, जहां फौजी खर्च बहुत भारी है, शिक्षा पर, खास कर विज्ञान और शिल्प-विज्ञानकी शिक्षा पर, अूपरसे नीचे तक ज्यादा ध्यान दिया जाता है तथा शिक्षकोंको वेतन और सामाजिक प्रतिष्ठा भी ज्यादा अच्छी दी जाती है। सोवियट रूस अमरीका और ग्रेट ब्रिटेन दोनोंसे कहीं अधिक नौजवान वैज्ञानिकों और यंत्र-निष्णातोंको शिक्षा दे रहा है।

(छ) अुपभोक्ताओंको भ्रष्ट किया जाता है

पूंजीवादी अुद्योगवादमें मशीनों पर अितना अधिक रुपया लगा दिया गया है कि संभव हो तो वे अैसी व्यवस्था करना चाहेंगे जिसमें लोग मशीनोंसे तैयार हुआ माल खरीदते ही रहें। ज्यों ज्यों आदमीकी सहायताके विना ही अपना काम करनेवाली मशीनोंकी संख्या बढ़ेगी, त्यों त्यों अुपभोक्ताओं पर यह दबाव बढ़ेगा। अखबारों, मासिक पत्रों, रास्तेके किनारे लगी तख्तियों, आकाशवाणी, टेलिवीजनों और चलचित्रोंमें विज्ञापनों और बिक्रीकी चर्चाओंकी लोगों पर वर्षा की जाती है। किस्तोंके आधार पर भारी मात्रामें खरीदारी होती है, थोड़ी थोड़ी अदायगी हर महीने की जाती है और अिस प्रकार अुपभोक्ताओंकी भावी आय गिरवी रख ली जाती है। कभी कभी माल जान-बूझकर घटिया बनाया जाता है, ताकि वह जल्दी घिस जाय और लोगोंको मजबूर होकर फिरसे खरीदना पड़े। अिस प्रकार अधिकाधिक महंगी और अनेक चीजोंके मालिक बनकर और

अुनका प्रदर्शन करके अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ानेकी मूर्खतापूर्ण अिच्छा और झूठा दिखावा करनेकी वृत्ति प्रजामें बढ़ती है। अिस तरह अुपभोक्ताओंको भ्रष्ट किया जाता है।

(ज) नीरस जीवन

अुद्योगवादमें लाखों मजदूरोंको केवल नीरस और निस्तेज जीवन मिलता है। वे परम्परागत जीवन-क्रमकी शान्ति, सुरक्षा और सुंदरतासे वंचित हो गये हैं। अुनके जीवन मशीनोंसे और मशीनों द्वारा विशाल पैमाने पर तैयार होनेवाले मालसे यांत्रिक बनते हैं और अेक ही सांचेमें ढलते जाते हैं। नगरवासी होनेके कारण अुनके जीवन अितने कृत्रिम होते हैं कि अुनमें वास्तविकता या सौन्दर्य बहुत ही कम हो जाता है। वे जीवनके सच्चे मूल्योंसे और अेक-दूसरेसे अलग हो जाते हैं। अुन्हें अपना जीवन तुच्छ प्रतीत होता है, अुनका जीवन नीरस और दुःखी होता है। अिस नीरसतासे बचनेके लिअे अनेक लोग शराब, दूसरी नशीली चीजों या जुअेका आश्रय लेते हैं। १९५१ में १००,००० की आबादी पर आत्महत्याओंके सबसे अूंचे आंकड़ोंवाले पांच देश थे — डेन्मार्क, स्विट्ज़रलैंड, फिनलैण्ड, स्वीडन और संयुक्त राज्य अमरीका। अिनमें से तीन बहुत ज्यादा विकसित अुद्योगोंवाले देश हैं। अिंग्लैण्डमें घुड़दौड़, फुटबॉल और क्रिकेटके मैचों पर जबरदस्त जुआ खेला जाता है। और किसी भी देशके बनिस्बत अमरीकामें अेक लाखकी आबादी पर सबसे अधिक शराब पीनेवाले हैं। मेरे खयालसे संयुक्त राज्योंमें नीरसताका अेक चिह्न यह था कि प्रारंभिक अनिच्छा दूर हो जानेके बाद सभी वर्गके लोग दोनों महायुद्धोंमें अुत्साहके साथ शामिल हो गये।

(झ) अतिशीघ्र होनेवाले परिवर्तन

अुद्योग-प्रधान समाजमें समाज-व्यवस्था परम्परागत या स्थिर नहीं रह गयी है। अिसके बजाय अुसका आधार परिवर्तनके साथ शीघ्र ही मेल बैठानेकी क्षमता पर रहता है। सामाजिक प्रक्रियाओंमें बाह्य परिवर्तन मुख्यतः यातायात तथा संपर्कके साधनोंकी गतिमें हुअे परिवर्तनों

और शिल्प-विज्ञान सम्बन्धी दूसरे परिवर्तनोंके फलस्वरूप होते हैं। अवश्य ही अंतिम कारण तो विचारों और ज्ञानमें होनेवाला परिवर्तन ही है। परन्तु जब तक ये परिवर्तन शिल्प-विज्ञान द्वारा मूर्त रूप नहीं ग्रहण करते तब तक अुनसे समाज नहीं बदलता। यातायात और सम्पर्कके साधनोंमें होनेवाले अिन परिवर्तनोंकी गति लगातार तीव्र होती जा रही है और सारी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक प्रक्रियाअें भी जल्दी जल्दी बदल रही हैं।

और अब तो बिजलीकी अैसी मशीनोंका भी विकास हो गया है, जिनमें अत्यंत पेचीदा गणितकी समस्याअें जल्दीसे जल्दी हल कर देनेकी तथा अमुक प्रकारके निर्णय देने और नियंत्रण करनेकी भी क्षमता होती है। अिन्होंने न केवल अनेक शरीर-श्रम करनेवाले मजदूरोंकी, बल्कि कलमके मजदूरों और 'सफेदपोश' मजदूरोंकी भी जगह ले ली है और कअी मिलों, फेक्टरियों, तेल साफ करनेवाले कारखानों और रासायनिक कारखानोंको लगभग पूरी तरह स्वयंचालित बना दिया है। मनुष्यकी सहायताके बिना केवल मशीनोंसे सारा काम करनेकी अिस प्रणालीमें अिस बातकी जरूरत होती है कि जो भी व्यवसाय अिस प्रणालीका अुपयोग करे अुसकी प्रक्रियाओंका पूर्ण पृथक्करण और संयोजन किया जाय; अिसके लिअे अेक अैसी मंडीकी भी आवश्यकता होती है, जिसमें अुतार-चढ़ाव बहुत कम हों और जो सतत बढ़ती ही रहे। अिसका सामाजिक परिणाम कदाचित् स्थायी बेरोजगारीके रूपमें अितना नहीं आयेगा, जितना अिन मशीनोंको चलानेके लिअे अुच्च शिक्षित और कुशल कर्मचारियोंकी जबरदस्त मांगके रूपमें आयेगा। अिससे संयुक्त राज्य अमरीकामें शिक्षाके क्षेत्रमें संकट बढ़ जायगा। परन्तु अैसी स्वयंचालित मशीनोंके अुपयोगसे बेशक कअी अन्य महत्त्वपूर्ण तथा शीघ्रगामी परिवर्तन होंगे। यह पद्धति अेक दूसरी औद्योगिक क्रान्तिका रूप भी ले सकती है।

आधुनिक अुद्योग-प्रधान राष्ट्रोंमें सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तनोंकी गतिसे कुछ अत्यन्त गंभीर समस्याअें और शंकाअें पैदा होती

है। जैसा सर ज्यॉर्ज विकर्स (वी० सी०) ने अेक ब्रिटिश रेडियो-भाषणमें कहा है

"हम यह बहस करते रह सकते हैं कि यह या वह परिवर्तन अच्छा है या बुरा। हम क्वचित् ही यह देख पाते हैं कि परिवर्तनकी गति स्वयं ही निर्णायक हो सकती है। मान लीजिये कि मानव-जातिमें परिवर्तनोंके अनुसार बदलनेकी, अुनके अनुकूल बननेकी असीम शक्ति है — यद्यपि हम यह मानते और प्रार्थना करते हैं कि अैसा नहीं है। परन्तु अुसमें अैसी शक्ति हो तो भी अुपस्थित परिस्थितियोंके साथ सुमेल साधनेकी अुसकी शक्ति अेक पीढ़ी दूसरी पीढ़ीका स्थान जिस गतिसे ले अुसके अनुरूप होनी चाहिये। हममें से प्रत्येक जो कुछ सीख सकता है वह सीमित है; परन्तु प्रत्येक पीढ़ी अेक नअी जानकारी और अनुभवकी सामग्री लेकर शुरू होती है। सामाजिक और प्राणिसृष्टि सम्बन्धी परिवर्तनोंका क्रम पीढ़ियोंकी संख्याके अनुसार होता है, न कि केवल वर्षोंकी संख्याके अनुसार। जल्दी जल्दी होनेवाले परिवर्तनोंके लिअे जल्दी जल्दी बदलनेवाली पीढ़ियां जरूरी होती हैं। परन्तु पीढ़ियां अधिक जल्दी नहीं बदल रही हैं। यद्यपि अन्य सब परिवर्तनोंकी गति बढ़ती जा रही है, फिर भी मानव-जीवन अधिक लम्बा होता जा रहा है और प्रत्येक पीढ़ीका प्रभाव पहलेसे अधिक काल तक महसूस किया जाता है। जब यह स्थिति है तब अेक पीढ़ीकी परिवर्तनकी क्षमताकी सीमा अवश्य होगी और अुसका अुल्लंघन निर्भय होकर नहीं किया जा सकता।

"अुदाहरणार्थ, मान लीजिये कि वस्तुओंका परिवर्तन अितनी तेजीसे होने लगे कि जो कुछ प्रत्येक पीढ़ी तीस वर्षकी अुम्रमें सीखे वह बाकीके तीस या चालीस वर्षमें अुसकी सन्तानोंका या स्वयं अुस पीढ़ीका ही मार्गदर्शन करनेमें असमर्थ हो। यह स्थिति आत्म-पराजयकी स्थिति होगी; हम अेक अैसी दुनियाका सर्जन करेंगे

जिसमें हमें अपने मार्गका कोअी चिह्न दिखाअी नहीं देगा। क्या यह दूरकी संभावना है? काश, मुझे यह विश्वास होता कि आज हमारी अैसी स्थिति नहीं है! . . . हम अेक अैसी आर्थिक प्रणालीमें फंसे हुअे हैं, जिसमें अुत्तरोत्तर बढ़ता हुआ माल, बढ़ती हुअी जरूरतें और बढ़ती हुअी जनसंख्या अेक-दूसरेको निरन्तर अुत्तेजित करते हैं। . . . मानव-जातिकी आर्थिक समस्या यह नहीं है कि हम सम्पन्न बने रह सकते हैं या नहीं, परन्तु यह है कि हम मनुष्य और प्रकृतिके आपसी संबंधोंको अितना स्थायी बना सकते हैं या नहीं, जिससे मानव-जीवनका कोअी स्वीकार करने योग्य आधार मिल जाय।

"हम अिस समस्याका सामना अेक बुनियादी मुश्किलके साथ कर रहे हैं। हम अस्पष्ट रूपमें यह महसूस करते हैं कि हमें जिस सुख या कल्याणकी अिच्छा है, अुसकी कल्पना अुस समृद्धिसे अधिक व्यापक है जिसके पीछे हम पड़े हुअे हैं। हमें धुंधला-सा यह दिखाअी पड़ता है कि हमारे सुख या कल्याणके लिअे समृद्धिके अलावा कुछ और संयोग भी आवश्यक हैं — अैसे संयोग जो हमारी समृद्ध होनेकी शक्तिका निर्माण भी कर सकते हैं और नाश भी। परन्तु अभी तक हम अिन संयोगोंको अितना स्पष्ट नहीं देख पा रहे हैं कि हमारे हाथमें सीमित मात्रामें जो नियंत्रण-शक्ति है, अुसकी मर्यादामें रह कर भी समृद्धिको हम अुनका सेवक बना सकें।"*

(ञ) समाजकी अेकता और संगठन पर कुठाराघात

अुद्योगवाद और शहरीकरण पारिवारिक जीवनको बहुत अधिक कमजोर कर रहे हैं और अिसके परिणामस्वरूप सदाचार और समाजकी अेकताको चिन्ताकी हद तक कमजोर बना रहे हैं। जैसा अेल्टन मेयोने बताया है, "हमारी सभ्यताका सिद्धान्त अिस धारणाको लेकर चलता है कि यदि

* 'दि लिसनर', लंदन, २९ सितम्बर, १९५५।

शिल्प-विज्ञान सम्बन्धी अुन्नति तथा भौतिक अुन्नति कायम रखी जाय, तो किसी न किसी तरह मानव-सहयोग अनिवार्य होगा।" परन्तु "किसी औद्योगिक समाजमें सहयोगको भाग्यके भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता।" अुद्योग-सम्बन्धी प्रक्रियाओंमें सतत और शीघ्रतासे होनेवाले परिवर्तनोंने मजदूरोंको अुन दीर्घकालीन सतत सम्बन्ध सम्बन्धोंसे वंचित कर दिया है, जिनके द्वारा परिणामकारी सम्पर्क और सहयोग प्राप्त होते थे।

"लगभग दो सदियोंसे आधुनिक सभ्यताने मानवकी सहकारी शक्तियोंके विस्तार और विकासके लिअे कुछ नहीं किया है और सच तो यह है कि अुसने भौतिक विकासके शस्त्रोंके पवित्र नाम पर अनजानमें सामूहिक कार्य और सामाजिक दक्षताके विकासको हतोत्साह करनेका काम किया है।" सब लोग सक्रिय स्वयंप्रेरित सहयोगके साथ दुनियाका काम करें, यह सभ्य समाज-व्यवस्था और प्रवृत्तिके लिअे अत्यन्त आवश्यक है। "सामाजिक जीवन कमसे कम अेक दृष्टिसे तो प्राणी-जीवनसे मिलता-जुलता है; जब सहज प्रक्रिया बन्द हो जाती है तब अस्वाभाविक वृद्धि—सड़ांध—शुरू होती है।" "हम शिल्प-विज्ञानकी दृष्टिसे आज जितने दक्ष हैं अुतना अितिहासका कोअी और युग नहीं रहा, और साथ ही हममें बड़ीसे बड़ी सामाजिक अदक्षता भी है।"* हम मजदूरोंसे अीसाका यह कथन याद करते हैं, "अुनके फलोंसे तुम अुन्हें जान लोगे।"

---

* अेल्टन मेयोकी पुस्तकमें से लिये गये ये अुद्धरण केवल अुन्हींके मत नहीं हैं, यद्यपि वे वजनदार और अधिकारपूर्ण हैं। लगभग बीस वर्ष तक वे हार्वर्ड बिजिनेस स्कूलके औद्योगिक संशोधन-विभागमें मुख्य अध्यापक थे। यह पुस्तक (दि सोशल प्रॉब्लेम्स ऑफ अेन अिंडस्ट्रियल सिविलिजेशन) अेक पंचवर्षीय प्रायोगिक संशोधन पर आधारित है, जो वेस्टर्न अिलेक्ट्रिक कंपनीमें और अुसीके द्वारा किया गया था। यह कंपनी अमरीकाकी विशाल टेलीफोन प्रणालीमें काम आनेवाले यंत्र बनाती है। साथ ही अिस पुस्तकमें मानस-शास्त्र और समाज-शास्त्रके क्षेत्रोंमें जो अध्ययन और विचार हुआ है, अुसका भी अुपयोग किया गया है।

(ड) प्रकृति पर आक्रमण

पूंजीवादी अुद्योगवादकी अेक धारणा यह है कि प्रकृति अेक वाधा है जिसे जीतना है और कच्चे मालका अनन्त स्रोत है जिसका मनुष्य अपनी अिच्छाके अनुसार अुपयोग या अपव्यय कर सकता है। अुसकी यह धारणा भी है कि मनुष्य 'प्रकृतिका स्वामी' है। अिस धारणाके दोनों पहलू अत्यन्त भ्रमपूर्ण हैं। मनुष्य प्रकृतिकी संतान और अुसका अंग है, अुसका स्वामी नहीं। वह अुसके खजानेको लूटकर वरवाद कर सकता है और यह काम अुसने तेज गतिसे किया है; परन्तु प्रकृति अुससे अधिक वलवती है और वह मनुष्यसे अिसकी कीमत लेकर रहेगी। यह कीमत भारी और कटु होगी। पूंजीवादकी यह धारणा मनुष्य और प्रकृतिके सम्बन्धोंके वारेमें अुसकी भयंकर भूल है। मनुष्य अधिकसे अधिक स्थायी रूपमें प्रकृतिका अेक विनीत, भक्तिशील और अधीन साझेदार हो सकता है। जॉन स्टीवार्ट कोलिसको फिर अुद्धृत करें तो "अब हम अैसी स्थितिमें आ पहुंचे हैं जब या तो हमें प्रकृतिमें मनुष्यके स्थानकी अपनी कल्पना वदल लेनी होगी, या हमें अैसे परिणाम भुगतने होंगे जिनका हमें अपनी विजयोंकी प्रक्रियामें कभी ध्यान भी नहीं आया होगा। . . . अन्तमें जीत प्रकृतिकी ही होगी।"* और चूंकि सारी प्रक्रियायें, जिनमें प्राकृतिक साधनोंका विनाश भी शामिल है, सतत तीव्र गतिसे होती जा रही हैं, अिसलिअे पूंजीवादी अुद्योगवादके पास अितना समय ही नहीं रह गया है, जिसमें वह प्रकृतिके प्रति अपने दृष्टिकोणमें आवश्यक वड़ा परिवर्तन कर सके।

(ठ) अुसके अपने ही अेक सिद्धान्तका भंग

पूंजीवादके दोषोंका यह अंग पहलेवाले कुछ अंगोंका पुनःकथन या सार है, जिससे अुनका सिद्धान्त और अर्थ समझमें आ जाय तथा अुनकी विनाशक असंगतता प्रगट हो जाय।

पूंजीवादको यह गर्व है कि अुसने हिसाव-किताव सम्बंधी कुशल पद्धतियोंका विकास किया है। हिसाव-कितावकी विद्यासे किसी भी

* 'दि ट्रायम्फ ऑफ दि ट्री'।

व्यवसाय पर निश्चित नियंत्रण रहता है। ध्यानपूर्वक और पूरा पूरा हिसाब रखे बिना कोअी व्यवसाय नहीं किया जा सकता। बैंक जो रुपया अुधार देते हैं और सरकार जो व्यवसायोंके परवाने देती है और अुन पर कर लगाती है — दोनों पूरा हिसाब रखनेका आग्रह रखते हैं।

अच्छे हिसाब-किताब और वित्तीय बुद्धिमत्ताके सिद्धान्तोंमें से अेक यह है कि किसी व्यक्ति या संगठनको अपनी पूंजीरूपी साधन-सम्पत्ति दैनिक जीवन और कार्यों पर खर्च नहीं करनी चाहिये। चालू खर्च — व्यवस्था खर्च — पूंजीकी आयसे लिया जा सकता है, न कि स्वयं पूंजीसे। अगर अिस नियमका भंग होता है तो आगे-पीछे वह व्यक्ति या व्यवसाय दिवालिया हो जाता है।

पूंजीवादी अुद्योगवाद अिस नियमका भंग कर रहा है, और दिनों-दिन कोयला, तेल, खनिज पदार्थ और दूसरे प्राकृतिक साधनोंकी पूंजी खर्च कर रहा है, साथ ही अपने लोगोंकी शिक्षा और अेकताको भी नष्ट कर रहा है। जिसे वह आमदनी कहता है अुसका खासा हिस्सा असलमें घिसाअी और घाटा ही है। प्रकृतिके हिसाबकी हमेशा पूरी अुपेक्षा की जाती है और जब अुसका विचार किया भी जाता है तो अुसे गलत रूपमें पेश किया जाता है। यहां कोअी अमीर चाचा नहीं बैठा है जो अपने नौजवान फिजूलखर्च भतीजेके लिअे कोअी जायदाद छोड़ जायगा, जिसके बल पर वह मूर्खताका अपना व्यवहार चालू रख सकेगा।

(ङ) सैनिकवाद

अपने प्रास्ताविकमें हमने सारे राष्ट्रोंके लिअे जो सात खतरे बताये थे, अुनमें 'हिंसा' भी अेक खतरा था। परन्तु पूंजीवादी अुद्योग-प्रधान देशोंमें हिंसाके साथ अेक और वस्तु भी जुड़ी रहती है। मेरा आशय भावी युद्धोंकी लगातार चलनेवाली तैयारियोंसे है। यह वस्तु आज पश्चिमी देशोंमें जैसे व्यापक बन गअी है अुसी तरह जब सारे समाजमें फैल जाती है तब यह सैनिकवादका रूप ले लेती है। और अिसके परिणाम खुली हिंसासे अधिक सतत होते हैं और कुछ भिन्न प्रकारके होते हैं।

ये तैयारियां रचनात्मक नहीं हैं; अुनका अुद्देश्य विनाश है। और आजके हाअिड्रोजन वमसे तो विनाश केवल हमारे शत्रुका ही नहीं होगा, वल्कि अपने राष्ट्रका, अपना और सारी मानव-जातिका होगा। अब तो अिसने सामूहिक पागलपनका रूप ले लिया है और अिसका नतीजा सामूहिक आत्मघात होगा।

संयुक्त राज्य अमरीकाके १९५७ के वजटमें संपूर्ण सरकारी आयका दो-तिहाअी भाग युद्धके खर्चके लिअे रखा गया है। पश्चिमके अधिकांश देश अपनी २५ से ६६ प्रतिशत आय अिसी तरह खर्च कर रहे हैं। सरकारें अपने प्रजाजनोंको संभावित युद्धके खतरोंके वारेमें सतत डराती रहती हैं और कहती रहती हैं कि सैनिक तैयारियोंसे ही राष्ट्रकी रक्षा हो सकती है। अिसके फलस्वरूप विधान-सभाओंमें जनताके प्रतिनिधि ये विशाल धनराशियां मंजूर कर देते हैं। जो धातुअें अुत्पन्न की जाती हैं अुनका वड़ा भाग जल और स्थलसेनाके हथियारों और दूसरी सामग्री तैयार करनेके काम आता है। आजकल संयुक्त राज्य अमरीकाकी सारी अर्थ-व्यवस्था लड़ाअीकी तैयारियोंके अनुरूप की जाती है। अगर ये तैयारियां अचानक बन्द कर दी जायं तो वहां भयंकर आर्थिक मंदी आ जायगी।

यह सैनिकवाद राष्ट्र-जीवनके सभी पहलुओं पर हमला करता और अुन्हें नुकसान पहुंचाता है। नौजवानोंको अेक या दो सालकी सैनिक नौकरीके लिअे अैसे समय भरती किया जाता है, जब अुन्हें किसी काममें लग जाना चाहिये और अपनी शादी कर डालनी चाहिये। फौजी कवायदसे अुनका दिमाग जड़ हो जाता है। अुन्हें दूसरे राष्ट्रोंसे अरुचि या द्वेष करना सिखाया जाता है; वे अपनी सूझ-वूझसे कार्य करनेकी शक्तिसे वंचित किये जाते हैं; कहा जाता है कि वे स्वतंत्र विचार न करे, वल्कि अंधे वनकर आज्ञा-पालन करें। सैनिक जवानों और अनुभवी सेनाधिकारियोंको विशेष डॉक्टरी, आर्थिक और शिक्षा-सम्बन्धी सुविधायें दी जाती हैं; वे विशेषाधिकार भोगनेवाले वर्ग वन जाते हैं। समाज अुनके रचनात्मक कार्यसे वंचित रहता है; वे समाज पर अेक वड़ा आर्थिक भार वन जाते

है। स्त्रियोंसे सर्वथा अैसी अुमरमें दूर रहनेके कारण वेश्यावृत्ति और गुप्त रोगोंकी वृद्धि होती है। स्कूल और कॉलेज दोनोंकी शिक्षाको सैनिक-वादकी वृत्तिसे ओतप्रोत बना दिया जाता है। विज्ञानको सैनिकवादके लिये ही सीमित कर दिया जाता है और अुसीके लिये अुसका दुरुपयोग किया जाता है। सारा सामाजिक और राजनीतिक जीवन गुप्तता, टाल-मटूलकी वृत्ति और सन्देहसे भर जाता है। स्वतन्त्रता और लोकतन्त्रके ध्येयोंको गंभीर हानि पहुंचती है। सरकारकी विदेश-नीति पर युद्ध-सम्बन्धी विचार हावी हो जाते हैं। नेताओंकी निर्णय-शक्ति भ्रष्ट हो जाती है।

अितना ही सैनिकवाद अब साम्यवादी देशोंमें भी पाया जाता है, परन्तु अिसका प्रारंभ पूंजीवादी देशोंने किया। १९१८ में सोवियट शासनके शुरू होते ही ब्रिटिश और अमरीकी सेनाओंने रूस पर हमला कर दिया और नओी सरकारको कुचल देनेकी कोशिश की। कुछ समय रूसी फौजोंने जर्मनोंसे लड़ाओी बन्द कर दी थी और वे बिखर गओी थीं। रूसी सैनिक संगठनका विकास पूंजीवादी आक्रमणसे रक्षा करनेके हेतुसे आरम्भ हुआ था।

यह सब कितनी भयंकर मूर्खता है! शायद यह अुद्योगवादकी सबसे बड़ी मूर्खता है, जो पाश्चात्य औद्योगिक सभ्यताके विनाशमें बहुत बड़ा योग दे रही है। मुझे यह बुद्धके अिस कथनका अेक प्रबल और ताज़ा अुदाहरण मालूम होता है कि "क्रोध हवामें थूकनेकी तरह है; यह सदा तुम पर ही आकर गिरता है।" डर, सन्देह, घमण्ड आदि सभी भेदवर्धक भावनाओंका यही हाल है। "जो तलवार अुठाता है वह तलवारसे ही नष्ट होगा।" संघर्षसे निपटनेका अेकमात्र सुरक्षित और व्यावहारिक अुपाय गांधीजीकी पद्धति ही है।

(ढ) सार

पूंजीवादी अुद्योगवादके अिन १३ हानिकारक परिणामोंको मैं अेक बार फिर गिना दूं: वनोंका विनाश, पानीका अंधाधुन्ध दुरुपयोग, धरती-

कटाव, दूसरे प्राकृतिक साधनोंका अपव्यय, स्वास्थ्यकी हानि, शिक्षाकी हानि, अुपभोक्ताओंका कुशिक्षण, शहरों और कारखानोंके जीवनकी नीरसता, अतिशीघ्र परिवर्तन, समाजकी अेकता पर कुठाराघात, प्रकृति पर आक्रमण, हिसाब-किताबके सिद्धान्तोंका भंग और सैनिकवाद। अिनमें से अेक भी वस्तु प्राचीन कालके स्वर्णयुगकी भावनापूर्ण आकांक्षाको नहीं बताती; ये सब आजके युगके वास्तविक और बहुत अंशमें भौतिक खतरे हैं।

प्रतिस्पर्धा

प्रतिस्पर्धा पूंजीवादके आवश्यक सिद्धान्तोंमें से अेक है। पूजीवादकी वादकी मंजिलोंमें छोटी छोटी स्पर्धाशील अिकाअियां अेकत्र होकर अेकाधिकारयुक्त व्यवसाय-संघों, ट्रस्टों, कार्टेलों और मंडलोंका रूप ले लेती हैं। परन्तु अिन बड़े संघोंके बीचकी प्रतिस्पर्धा पहलेकी छोटी छोटी अिकाअियों या व्यक्तियोंके बीचकी प्रतिस्पर्धासे कहीं अधिक भयंकर रूप ले लेती है। युद्धोंकी वृद्धिसे यह साफ हो जाता है।

दूसरे खतरे

अिस निबंधके आरम्भमें बताये गये भारतके सात खतरोंमें से पहला खतरा पूंजीवादका पैदा किया हुआ है और दूसरे सब खतरे अुसके बढ़ाये हुअे हैं—खास तौर पर अुसने दुनिया भरमें सैनिक हिंसाका खतरा बढ़ाया है।

पूंजीवाद द्वारा धर्मका नाश

पूंजीवाद धर्मका मौखिक गुणगान करता है और अुसके कर्मकांड-रूपी शरीरकी रक्षा करता है—कुछ हद तक शायद जान-बूझ कर 'जैसे थे' की स्थितिको कायम रखनेके लिअे, परन्तु अनजानमें शायद अिसलिअे भी कि सारे युगोंमें—पूंजीवादके पहले भी—मुट्ठीभर शासकवर्ग पुराणपंथी हो जाते हैं और बाहरी कर्मकांडके भक्त बन जाते हैं। परंतु व्यवहारमें पूंजीवाद तमाम धार्मिक सिद्धान्तोंका भंग करता है और सारी धार्मिक धारणाओंका खंडन करता है। पूंजीवादके परिणामोंसे यह जाना

जा सकता है। सिद्धान्तमें और बहुत हद तक व्यवहारमें भी पूंजीवाद अुतना ही भौतिकवादी है जितना भौतिकवादी होनेका साम्यवाद पर दोष लगाया जाता है। विचारोंकी इस लड़ाईमें पूंजीवादी राष्ट्रोंके प्रयत्न अितने निष्फल साबित हो रहे हैं अिसका अेक कारण यह भी है। शिल्प-विज्ञान अथवा पूंजीके आधार पर होनेवाले व्यापक अुत्पादनकी कार्य-क्षमताके सदाचार या बुद्धिमत्ताका अुच्च होना आवश्यक नहीं है। नात्सियोंका अुदाहरण अिसका प्रमाण है।

अुत्तरोत्तर घटते अुत्पादनके नियमके अधीन

पूंजीवादकी सफलताओंको अब घटते अुत्पादनके नियमका सामना करना पड़ रहा है। ये सफलतायें बड़ी हद तक अिस कारण मिलीं कि अमरीका, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड जैसे प्रदेशोंके द्वार नये अुपनिवेश बनाने और वहांकी साधन-सम्पत्तिके अुपयोगके लिअे खुले, यूरोप और ग्रेट ब्रिटेनने अेशिया और अफ्रीकाका शोषण किया और विज्ञान तथा शिल्प-विज्ञानकी अुन्नति हुअी। अब कोअी खाली अुपजाअू प्रदेश नहीं रह गया है। यूरोप और ग्रेट ब्रिटेनके बाहर अुद्योगवादका विकास हो जाने और युद्धोंके कारण राजनीतिक परिवर्तन होने तथा दरिद्रता फैलनेसे सब जगह बाजारोंका क्षेत्र संकुचित हो गया है। यूरोप और अिंग्लैंडके सिवा सब जगह धरती-कटावके कारण अन्न-अुत्पादनका आधार लगातार कम हो रहा है। सत्ता दिनोंदिन थोड़ेसे लोगोंके हाथोंमें केन्द्रित होती जा रही है, विभिन्न दलोंमें विरोध बढ़ रहा है, सत्ताका भ्रष्टाचार बढ़ रहा है; सरकारोंकी हृदयहीनता बढ़ रही है, युद्ध बार बार होते हैं, अुनकी व्यापकता बढ़ती है और वे अधिकाधिक विनाशकारी होते जाते हैं। शोषण सिर्फ लोगोंके ही विरुद्ध काम नहीं करता, परन्तु भूमि तथा जंगलोंके विरुद्ध और अिसलिअे अन्न तथा जलके साधनोंके विरुद्ध भी काम करता है। लगभग यह कहा जा सकता है कि अेशिया, अिंडोनेशिया, अेशिया माअिनर और यूरोपमें किसानोंके विद्रोह और अफ्रीकामें घिर रहे तूफानी बादल असलमें शोषित भूमि और अत्याचारसे पीड़ित प्रकृतिके विद्रोह हैं।

किसान तो केवल अुसे मूर्त रूप देनेवाले अुसके साधन हैं। पूंजीवादी अुद्योगवाद लगभग २५० वर्ष तक फूला-फला है। सभ्यताओंके अितिहासमें यह काल छोटा ही माना जायगा।

आत्मघाती स्वरूप

पूंजीवाद पैसे और सत्ताको अपना अीश्वर बना लेता है और फिर अुस अीश्वरको प्रसन्न करनेके लिअे लगभग सब कुछ कुर्बान कर देता है। अुसने सारी संस्कृतियों और धर्मोंको गम्भीर हानि पहुंचायी है और अब मेरे विचारसे वह अपना ही विनाश कर रहा है। अुसका आधार कअी सापेक्ष धारणायें हैं, जिनको तर्क तो नहीं परन्तु अितिहास झूठी साबित कर रहा है। अिन धारणाओंमें से कुछ ये हैं: मानव-प्रगति भौतिक पदार्थ अेकत्र करनेमें ही है; स्पर्धा मानव-प्राणियोंके बीचका आवश्यक और सबसे मजबूत सम्बंध है; बाजार चाहे जिस सीमा तक बढ़ाये जा सकते हैं; अन्तमें पैसा ही सब मूल्योंका अुचित माप है; और राजनीतिक तथा आर्थिक सत्ताका संचालन सर्वोच्च मानव-प्रवृत्ति है।

नहीं; अनियंत्रित पूंजीवाद पर अब और विश्वास नहीं किया जा सकता। वह अब असह्य हो गया है। अपनी आरम्भिक अवस्थामें शायद अुसने मानव-जातिके लिअे अनेक कीमती काम किये। जिस विज्ञान और शिल्प-विज्ञानका अुसने प्रयोग किया, वे मानव-जातिकी महान मूल्यवान और स्थायी सिद्धियां हैं। परन्तु अब हर जगह पूंजीवाद पर अंकुश लगाया जा रहा है। सिद्धान्तके रूपमें पूंजीवाद आत्मघातक है। मैं मानता हूं कि अुसमें गहरा सुधार नहीं हो सकता। अुसमें आत्म-संयम या आत्म-मर्यादाका कोअी सिद्धान्त नहीं है। अुसके सिद्धान्त और अुसकी बुनियादें ही गलत हैं। अिसका यह अर्थ नहीं कि अुसका समर्थन करनेवालोंको दुष्ट समझा जाय; वे केवल अदूरदर्शी हैं और गहरी गलतीमें हैं। पूंजीवादके विरुद्ध घोर युद्ध करके शक्ति बरबाद करनेकी कोअी जरूरत नहीं, क्योंकि वह अपने ही जन्मजात दोषोंके कारण लगातार और अब तो सचमुच तेजीसे टूट रहा है। अुस पर क्रोध करना भी अेक मनोवैज्ञानिक,

नैतिक और राजनैतिक भूल होगी। अिसके बजाय हम अपनी शक्ति कोअी ज्यादा अच्छी चीज बनानेमें लगावें। संयुक्त राज्य अमरीकाकी विशाल भौतिक शक्ति अपने भीतर अत्यन्त गम्भीर भीतरी कमजोरियोंको छिपाये हुअे है ये कमजोरियां थोड़े ही वर्षोंमें प्रगट हो जायगी। अुसमें प्रायः आज भी प्रकृतिकी कुछ साधन-सम्पत्ति सुरक्षित है; वहांके लोगोंका खयाल है कि वे अुसे बरबाद करते रह सकते हैं। हिन्दुस्तानके पास अैसे अपव्ययके लिअे कोअी साधन-सम्पत्ति नहीं है। कुल मिलाकर पूंजीवादकी अच्छाअियोंसे अुसकी बुराअियां कहीं अधिक हैं।

पूंजीवादी अुद्योगवादकी प्रणाली पर अपना भविष्य छोड़ देना भारतको पुसा नहीं सकता। थोड़ी मात्रामें पूंजीवादी अुद्योगवादको अपनानेमें समझदारी हो सकती है। पुस्तकके अंतिम दो परिच्छेदोंमें अिसे मर्यादित रखनेका तरीका सोचा जायगा।

३

साम्यवाद

अच्छा, अगर पूंजीवादी अुद्योगवाद भारतके लिअे बेहद खतरनाक है, तो साम्यवाद कैसा रहेगा?

साम्यवाद कुछ लोगोंको आकर्षक क्यों लगता है?

साम्यवादके बहुत आकर्षक लगनेके कअी कारण हैं:

१. अुसमें पूंजीवाद द्वारा पैदा की गअी बुराअियोंकी स्पष्ट और प्रबल प्रतीति है और अुसके विरुद्ध साम्यवाद द्वारा दिया गया न्याय और निष्पक्षताका वचन है।

२. मध्यम श्रेणीके अेक कोमल स्वभाववाले नम्र मनुष्यमें अक्सर यह भावना होती है कि अुसने अपनेसे दुर्बल और गरीब लोगोंको हानि पहुंचाकर आराम और विशेषाधिकार भोगनेका सामाजिक और व्यक्तिगत अपराध किया है।

३. अितिहासकी साम्यवादी व्याख्या अेक वैज्ञानिक निश्चितता तथा सत्य और न्यायकी भावना प्रदान करती है।

४. साम्यवादी सिद्धान्त कुल मिलाकर अूपरसे तो वास्तविकताको, मनुष्योंको और संसारमें जो कुछ हो चुका है और वर्तमानमें हो रहा है अुसे समझनेकी प्रतीति पैदा करता है और भविष्यमें निश्चित रूपसे क्या होनेवाला है अिसकी भविष्य-वाणी करनेका सामर्थ्य देता है।*

५. किसानों और शहरी मजदूरोंको साम्यवाद बलपूर्वक यह आश्वासन देता है कि प्राचीन अन्याय दूर किये जा सकते हैं। वह रहन-सहनके स्तरमें काफी वृद्धिका और अधिक न्यायका भी वचन देता है।

६. बेकारोंको — चाहे वे शहरी मजदूर हों, किसान हों या पढ़े-लिखे लोग हों — साम्यवाद स्थायी रोजगारका आश्वासन देता है और अिस प्रकार फिरसे स्वाभिमान, मनुष्यके आदर और प्रतिष्ठाकी स्थापना करनेका वचन देता है। अिन सूक्ष्म और अप्रत्यक्ष वस्तुओंकी भूख मनुष्यमें गहरी, तेज और स्थ।
तौर पर शिक्षित समुदायमें जो अितनी
कटुता और दीर्घ-प्रयत्न दिख

७. सर्व
और अपनी
प्रगति

८ साम्यवादके साथ अनिष्टोंवाले भूतकालके खिलाफ विद्रोहका विचार जुड़ा हुआ है। अुसमें अेक नये साहसकी अुत्तेजना पूरी तरह मौजूद रहती है।

९ वह तीन विचार देता है, जो अितने अर्थपूर्ण हैं कि मनुष्य अुत्तेजित हो जाय (१) समाजका व्यक्तिसे अधिक महत्त्व है, (२) साधनसे साध्य अधिक महत्त्वपूर्ण है और (३) विचारोंकी अपेक्षा वातावरणका अधिक महत्त्व है।

१० साम्यवादी दलमें शरीक होनेसे मनुष्यके मनमें यह भावना पैदा होती है कि वह अेक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ध्येयका अंग है, समाजमें और अेक महान अैतिहासिक प्रक्रियामें अुसका निश्चित और सार्थक हाथ है, तथा अुसे अपने मानव-बन्धुओंके साथ आध्यात्मिक अेकता साधनेका और अुसके अनुसार कार्य करनेका आनंद प्राप्त होता है। वह कठिन कार्य करनेका और साहस, दृढ़ता और हौसला दिखानेका मौका देता है। अुससे सामान्य अनुशासनकी और व्यवस्था तथा स्वयंपूर्णताकी भावना प्राप्त होती है।

११ साम्यवादी दलमें सम्मिलित होनेसे अेक महान ध्येयके लिअे पूरी तरह समर्पित होनेका सन्तोष और सुख प्राप्त करनेका आश्वासन मिलता है और हमेशा अूपरी चुनाव करते रहनेके बोझसे मुक्ति मिल जाती है। अुसमें किनारेका सहारा छोड़कर मझधारमें कूदनेकी बात है, जिसका अर्थ यह है कि मनुष्य 'स्वतंत्रताके भारसे मुक्त है'।

१२ संघटन-बद्ध धर्मकी असंगतियों और अुसके अैसे विधानोंसे, जो सत्यको स्पष्ट करनेके बजाय अुसे छिपानेका काम ही अधिक करते हैं, कअी लोग अितने अूब गये हैं कि वे अैसे शब्दों या वाक्योंका प्रयोग तक सहन नहीं कर सकते जिनमें नैतिक अर्थकी ध्वनि हो। लेकिन अुनमें भी अनेक मानवीय वृत्तियां तो हैं ही। मार्क्सवाद अुन्हें ये वृत्तियां तृप्त करनेमें समर्थ बनाता है,

लेकिन वह अुन्हें विज्ञान और नैसर्गिक अैतिहासिक प्रक्रियाओंके छद्मवेशमें पेश करता है, जैसा कि मार्क्सने स्वयं किया था।

साम्यवादका मूल्यांकन

अब हम साम्यवादका विस्तारसे मूल्यांकन करनेकी कोशिश करें। अुसके दरिद्रता और शोषणको कम करने तथा सार्वत्रिक सामाजिक न्यायकी स्थापनाके अुद्देश्य अुत्तम हैं। अब अुन अुपायोंकी छानबीन करनी चाहिये जिन्हें वह अिनकी सिद्धिके लिअे काममें लेना चाहता है। पहले हम साम्यवादी सिद्धान्तोंका विचार करेंगे और फिर अिस बातका विचार करेंगे कि व्यवहारमें अुनका अमल कैसे किया जाता है।

अुसका अेक तत्त्वज्ञान है

पूंजीवादका कुछ हद तक अेक ही समयमें अव्यवस्थित तथा अुतावलीवाले अवसरवादमें से विकास हुआ। परन्तु समाजवाद और साम्यवाद मार्क्स, अेंजल्स, लेनिन और स्टालिन द्वारा निर्मित तत्त्वज्ञानसे अुत्पन्न हुअे। अुनकी रचनाअें निश्चित ही महान और अत्यंत प्रभावशाली दस्तावेज हैं। अपने प्रश्नोंका अुत्तर देने और बुद्धिमत्तासे चुनाव करनेके लिअे हमें स्थानकी मर्यादामें रहकर अिस तत्त्वज्ञानकी परीक्षा करनी चाहिये। हम साम्यवाद या अुसकी शक्तिको तब तक नहीं समझ सकते, जब तक कि हम अुसके आधारभूत और अत्यंत संश्लिष्ट तथा स्पष्ट दार्शनिक, अैतिहासिक, आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक तत्त्वज्ञानको — सिद्धान्तोंको — भी न समझ लें।

साम्यवाद मानव-स्वभावका और संसारका वर्णन है। वह पिछले अितिहास और वर्तमान घटनाओंका स्पष्टीकरण है और भविष्यका अेक निश्चित पूर्व-कथन है। अुसमें प्रकृति और मानव-घटनाओंके नियंत्रणका और मानव-कल्याण तथा सार्वभौम न्यायका आश्वासन है। अुसके वर्णन और स्पष्टीकरण कहां तक सत्य हैं? अुसने कहां तक अपने वचनोंका पालन किया है? चूंकि किसान और ज्यादातर शहरी मजदूर मूक और असंगठित हैं, अिसलिअे शिक्षित मध्यम वर्गके आरम्भ और नेतृत्वके बिना

कोअी बडे सामाजिक, आर्थिक या राजनीतिक परिवर्तन नहीं हो सकते। अिसलिअे अैसे भावी नेताओंके लिअे यह महत्त्वपूर्ण है कि वे साम्यवादके सिद्धान्तोंका बहुत ध्यानपूर्वक परीक्षण करें और अुन्हें समझनेकी कोशिश करें। या दूसरे शब्दोंमें कहूं तो दूसरोंके लिअे यह विस्तारसे समझ लेना महत्त्वपूर्ण है कि अिन भावी नेताओंको साम्यवाद क्यों आकर्षित करता है। आपके मनमें यह प्रश्न अुठता होगा कि साम्यवाद कोअी सही तत्त्वज्ञान भी है या नहीं, अथवा आप किसी समय बुद्धिपूर्वक अिसकी चर्चा करना चाहते होंगे, अथवा अुसके बारेमें पक्ष या विपक्षमें तर्क करना चाहते होंगे। यह परिच्छेद शायद अिसमें आपकी मदद करेगा। स्थानाभावके कारण मेरी आलोचनाअें संक्षिप्त और साररूप होंगी।

साम्यवादी सिद्धान्त

मार्क्सके संपूर्ण सिद्धान्तका आधार दो बिन्दुओं पर है: (१) चित्त और पदार्थके सम्बन्धके विषयमें अुसकी कल्पना, (२) वह वस्तु जिसे मार्क्स 'द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद' (dialectical materialism) कहता था।

पहले बिन्दुके बारेमें मार्क्स और अेंजल्सने अपने संवेदन-सिद्धान्तका निरूपण किया और अुसके आधार पर यह दलील दी कि मुख्य सत्य पदार्थ है और चित्त पदार्थका परिणाम या गौण अुपज है। यह विचार दार्शनिक भौतिकवादके नामसे प्रसिद्ध है। अिस धारणाके आधार पर कि पदार्थने चित्तको अुत्पन्न किया, मार्क्सने यह तर्क पेश किया कि मनुष्यके औजार और अुत्पादन-यंत्र मनुष्यकी अन्य सब प्रवृत्तियोंका कारण हैं और आर्थिक बल ही समस्त अैतिहासिक घटनाओंका नियंत्रण करते हैं। अिस-लिअे जिनके हाथमें अुत्पादन-तंत्रका नियंत्रण होता है, अुनके हाथमें अन्य सब बातोंका नियंत्रण होता है।

क्या यह वैज्ञानिक है?

मार्क्स यह मानता था कि पदार्थके साथ चित्तके अिसी विशेष संबंधके कारण हमें भौतिक जगतका ज्ञान हो सकता है और अिसी लिअे हमें विज्ञानकी प्राप्ति हो सकती है।

मार्क्सका यह दावा था कि अुसके सब सिद्धान्त वैज्ञानिक हैं। जहां तक अुसका सिद्धान्त गृहीत धारणाओंके समूहसे निकाली हुआी निष्कर्ष-माला है, वहां तक अुसकी पद्धति वैज्ञानिक अवश्य है। सारे विज्ञानों और विज्ञानोंके राजा गणितमें अैसा ही होता है। यही कारण है कि अनेक लोगोंको अुसके सिद्धान्तने अितने व्यापक रूपमें आकर्षित किया है।* परन्तु जैसा हम देखेंगे, अुसका सिद्धान्त या तत्त्वज्ञान अपनी मूल धारणाओंमें ही अवैज्ञानिक है; और वह अपने अिस दुराग्रहपूर्ण दावेमें भी अत्यंत अवैज्ञानिक है कि वह सत्यकी अंतिम और सम्पूर्ण अभिव्यक्ति और मार्गदर्शक है। विज्ञानमें अन्तिम सत्य होता ही नहीं।

मार्क्सकी और लेनिनकी भी पदार्थकी कल्पनाका आधार न्यूटनके द्रव्य-सम्बन्धी नियमों और विचारों पर तथा यूक्लिडकी भूमिति पर था। परंतु आधुनिक भौतिकशास्त्रने न्यूटनकी कल्पनाओंको छोड़कर आअि-न्स्टीनकी कल्पनाओंको अपना लिया है और यूक्लिडकी भूमिति अब अति विशाल या अति सूक्ष्म वस्तुओंके बारेमें भौतिक नियमोंके व्यापारका निश्चित चित्र नहीं देती। जो तत्त्वज्ञान सब घटनाओंका स्पष्टीकरण करनेका दावा करता है, अुसमें समस्त भौतिक क्षेत्रोंका समावेश होना ही चाहिये।

मार्क्सका संवेदन-सिद्धान्त

संवेदनके बारेमें मार्क्स और अेंजल्सका सिद्धान्त यह था कि हमारी अिन्द्रियोंके ज्ञानसे हमें भौतिक पदार्थोंकी और वस्तुगत सत्यकी हूबहू नकलें, परछाअीं या चित्र मिल जाता है। अुनका सिद्धान्त यह भी था कि ये पदार्थ जैसे हमें दिखाअी देते हैं वैसा ही वास्तवमें हमसे बाहर और हमसे स्वतंत्र रूपमें अुनका अस्तित्व होता है। चूंकि हमारे संवेदन

* विचारधाराओंके युद्धमें पूंजीवादी अुद्योगवाद अितना असफल साबित होता है, अिसका अेक कारण यह है कि जैसा सम्पूर्ण और सुगठित तत्त्वज्ञान साम्यवादका मालूम होता है वैसा पूंजीवादी अुद्योग-वादका नहीं है।

बाह्य जगतके पदार्थोकी हूबहू नकल है, अिसलिअे अुनका कहना था कि हम बाह्य सत्यके जगतको निश्चित रूपसे जानते हैं। वह ठीक वैसा ही है जैसा वह हमें दिखाओ देता है।

परन्तु हालका विज्ञान और अुस पर आधारित तत्त्वज्ञान हमें बताता है कि यद्यपि स्वतन्त्र बाह्य सत्य विद्यमान हैं और वे हमारी अिन्द्रियोंको प्रेरित करते और हमारे संवेदनोंका आरम्भ करते हैं, फिर भी वास्तवमें ये बाह्य सत्य क्या हैं यह जानना हमारे लिअे सदा असंभव होगा।

डॉ० अेडेल्बर्ट अेमीज (जूनियर) तथा संयुक्त राज्य अमरीकाके न्यू जरसी प्रदेशके प्रिंसटन स्थित असोसिअेटेड रिसर्च अिंस्टिटयूटके हालके सहायकोंने भौतिक साधनोंकी मददसे कुछ बीसेक पूर्णतया वस्तुगत प्रदर्शनों या प्रयोगों द्वारा यह बताया है कि किसी विशेष भौतिक पदार्थके हमारे संवेदन वैसे पदार्थोंकी नकलें या चित्र या प्रतिच्छाया नहीं हैं, परन्तु वास्तवमें अुनके द्वारा हमारी अिन्द्रिया पर अुत्पन्न प्रभावके अर्थकी व्याख्याअें हैं। अिन प्रदर्शनोंसे प्रगट होता है कि ये व्याख्याअें दो अपरपक्ष मानव-शक्तियोंसे निश्चित होती हैं। वे हैं (१) हमारी धारणाअें और (२) हमारे हेतु। अिन प्रदर्शनोंसे यह भी प्रगट होता है कि हम यह नहीं जानते और न जान सकते हैं कि जिन वस्तुओंसे हम अिन्द्रिय-संवेदन प्राप्त करते हैं और जिन्हें हम बाह्य भौतिक अस्तित्व रखनेवाली समझते हैं, अुनका सच्चा स्वरूप क्या है।* अिन अिन्द्रिय-संवेदनोंकी सत्यता जिसे लेनिन अभ्यास (Practice) कहते थे अुससे नहीं जाची जाती। परन्तु अुनकी सत्यताकी संभावनाकी जांच क्रिया द्वारा की जाती है। अेक महान अंग्रेज तत्त्वज्ञानी बर्ट्रांण्ड रसेलने, जो आधुनिक विज्ञान, गणित और तर्कशास्त्रमें पारंगत हैं, भी कहा है कि हम भौतिक पदार्थोंके बाह्य जगतके स्वरूपको नहीं जान सकते।

* अिन प्रदर्शनोंके अधिक ब्यौरेवार वर्णनके लिअे मेरी पुस्तक 'अे यम्पास फॉर सिविलिजेशन' का 'वास्तविक क्या है' नामक चौथा परिच्छेद देखिये।

अिन्द्रिय-संवेदनके अनुसंधानका यह परिणाम प्रथम महत्त्व पदार्थको नहीं देता, परंतु चित्तको देता है; क्योंकि चित्त ही हमारे अिन बोधोंकी व्याख्या करता है।

अिन्द्रियोंकी मर्यादाअें

हमारी अिंद्रियां सत्यको बतानेके लिअे पर्याप्त निश्चित साधन नहीं हैं। प्रमाणित न की जा सकें अैसी धारणाअें, गणित, तर्कशास्त्र, प्रयोग और अवलोकन सभी अिसके लिअे जरूरी हैं और अिस शोधका कोअी अन्त नहीं है। अुदाहरणके लिअे, हमारी अिंद्रियां हमें बताती हैं कि सूर्य पृथ्वीके आसपास चक्कर लगाता है, परंतु खगोल-शास्त्र और कोपरनीकस, केपलर, न्यूटन और आअिन्स्टीनका गणितशास्त्र अिसके विपरीत बताता है।

पुराने जमानेका भौतिकशास्त्र, जिसका आधार मार्क्स, अेंजल्स और लेनिनने लिया था, साधनोंकी सहायतासे वंचित अिंद्रियोंके लिअे ही सच है। परंतु जब हम अिंद्रियोंको केमरों, अेक्स-रेवाले अणुवीक्षण-यंत्रों, साअि-क्लोट्रोन और दूसरे साधनोंकी मदद पहुंचाते हैं, तब हम परमाणुओंके केन्द्रमें — प्रोटोन, अेलेक्ट्रोन और न्यूट्रोनके जगतमें — पहुंच जाते हैं और वहां पुराने भौतिकशास्त्रके नियम लागू नहीं होते। अुस जगतमें यूक्लिडकी भूमिति भी सही नहीं अुतरती। अिन अणुओंसे निकलनेवाली शक्तिका जिन बलों द्वारा नियंत्रण होता है वे कालके क्षेत्रसे परे हैं।

मार्क्सवादियोंको आधुनिक विज्ञानके परिणाम मानने ही होंगे

मार्क्स, अेंजल्स, लेनिन और स्टालिन सबने विज्ञान और वैज्ञानिक पद्धतिके अत्यधिक महत्त्व पर जोर दिया है। अगर अैसा है तो मार्क्सके सिद्धान्तको आधुनिक विज्ञानके निर्णयोंका और पदार्थके अुसके द्वारा किये गये विश्लेषणका अनुसरण करना होगा। मार्क्सवादी अैसा कहकर नहीं बच सकते कि पाश्चात्य परमाणु-वैज्ञानिकोंके आविष्कार और विचार झूठे हैं, क्योंकि वे 'बुर्जुआ' या 'आदर्शवादी' दिमागोंकी अुपज हैं। यदि सोवियट

सरकार और साम्यवादी दल अणुबमोंको वास्तविक चीज समझते हैं (और वे जरूर समझते हैं, क्योंकि सोवियट सरकारने अुनका बनाना स्वीकार किया है और वह अुन्हें काममें लेनेकी धमकी भी देती है), तो मार्क्स-वादियोंका पहले-पहल अिन बमोंको बनानेवाले बुर्जुआ लोगोंके भौतिक विज्ञानको और अुस विज्ञानके तात्त्विक परिणामोंको स्वीकार करना ही होगा। अन्यथा मार्क्सवादियोंकी भी वैसी ही अटपटी और असमंजस स्थिति हो जायगी, जैसी रोमन कैथोलिक सम्प्रदायकी गैलीलियोके खगोल-संबंधी सिद्धान्तोंके बारेमें हुआी थी। यह सम्प्रदाय गैलीलियोको अिस शर्त पर अपने विचार प्रतिपादित करने देनेको तैयार था कि वह पृथ्वीके घूमनेको केवल खगोल-मंडकी अेक सिद्धान्तके रूपमें माने, न कि हकीकतके तौर पर। अिसी तरह सोवियट सरकार क्वेन्टम-सिद्धान्तको यंत्र-विज्ञानके प्रकाशनोंमें शोधकी अेक प्रणालीके रूपमें प्रयुक्त होने देती है, परंतु अुसके तात्त्विक परिणामोंको माननेसे अिनकार करती है।

पदार्थकी आधुनिक कल्पना

परमाणु-सम्बन्धी भौतिकशास्त्र बताता है कि अिन्द्रियगम्य तथाकथित 'पदार्थ' अंकशास्त्र पर आधारित अेक कल्पना है; अेक तात्त्विक कल्पना है, अेलेक्ट्रोन, प्रोटोन तथा न्यूट्रोनसे बने असंख्य परमाणुओंकी संभाव्य क्रियाका परिणाम है। अेलेक्ट्रोन, प्रोटोन और न्यूट्रोन प्रकट रूपमें विद्युत्‌की गतिसे युक्त या अुससे रहित शक्तिकेन्द्र हैं। और कभी वे कणोंकी तरह तथा कभी तरंगोंकी तरह व्यापार करते हैं। जो चीज अेक भौतिक-रासायनिक तत्त्व या अेक प्रकारके 'पदार्थ'को, जिसका हमारी अनघड़ अिन्द्रियां अनुभव करती हैं, दूसरे अैसे तत्त्व या 'पदार्थ' से अलग करती है, वह है अुन अुन तत्त्वोंके परमाणुओंमें रहे प्रोटोनों, अेलेक्ट्रोनों तथा अन्य परमाणु-कणोंकी संख्या और व्यवस्था या रचना।

अिन अंतिम कणों या तरंगोंके निश्चित व्यवहारका वर्णन शब्दोंमें नहीं किया जा सकता और न अुसे किसी प्रकारके यांत्रिक साधनोंसे समझाया जा सकता है, क्योंकि जिन नियमोंसे अुनकी क्रिया निश्चित

होती है वे प्रत्यक्ष रूपमें हमारे परिचित स्थान और कालके क्षेत्रसे परे या बाहर है। अिस व्यवहारका वर्णन अैसे पेचीदा गणित-सूत्रों द्वारा ही किया जा सकता है, जिनमें स्थान और कालके तत्त्व नही होते। जिस गणितसे अणुबमोंका बनाना संभव हुआ, अुसे 'आदर्शवादी' कहकर मार्क्सवादी और लेनिनवादी सिद्धान्त द्वारा अुसकी निंदा की जानी चाहिये और अुसे गलत ठहराया जाना चाहिये। हमारी अिन्द्रियां अितनी स्थूल हैं कि वे हमें तथाकथित 'पदार्थ' की सच्ची या ठीक नकल अथवा प्रतिमूर्ति नहीं दे सकतीं। मार्क्स और लेनिनका खयाल बिलकुल गलत था और अुनके सिद्धान्त आजके युगमें वैज्ञानिक नहीं रहे।

अगस्त १९५२ के अणु-वैज्ञानिकोंके बुलेटिन (शिकागो, संयुक्त राज्य अमरीका) में 'दि डायमैट अेण्ड मॉडर्न साअिस' पर प्रकाशित अेक लेखमें कहा गया है कि: "'पदार्थ' प्रकृतिके अनिश्चित और विविध गुणोंके लिअे अेक अति व्यापक शब्द है। यह शब्द और 'भौतिक' शब्द १८ वीं सदीके विचारोंके अवशेष है और आधुनिक विज्ञानके कोअी भी नियम बनानेमें अंगभूत नही है।"

चित्त और पदार्थ दोनों शक्तिके प्रकार हैं

भौतिक तत्त्वोंमें से अेक तत्त्व — यूरेनियम — जिसे हम सामान्यतः पदार्थ समझते हैं, शक्तिमें बदल दिया गया है, जैसी कि आअिन्स्टीनके प्रसिद्ध समीकरणमें भविष्य-वाणी की गअी थी, और अणुबमने अुसे प्रत्यक्ष सिद्ध कर दिखाया है। अिसके विपरीत, शक्तिको साअिक्लोट्रोनमें 'पदार्थ' के रूपमें बदल दिया गया है। आधुनिक शरीरशास्त्र और मनोविज्ञानने सिद्ध कर दिया हे कि विचारके साथ साथ मस्तिष्कमें विद्युत्-प्रवाह भी पैदा होता है और वह शक्तिका ही अेक स्वरूप है और प्रगट रूपसे अवकाशमें अेक स्थानसे दूसरे स्थानको भेजा जा सकता है। अिन दोनों निर्णयोंसे यह सम्भव प्रतीत होता है कि चित्त और पदार्थ दो विरोधी तत्त्व नहीं है, परंतु अेक ही मौलिक सत्यके केवल दो अलग अलग पहलू हैं। अगर अैसा है तो अिससे मार्क्स और लेनिनका यह

दावा सदिग्ध हो जाता है कि अन्तिम सत्य 'पदार्थ' है। अन्तिम सत्यको 'पदार्थ' कहनेके बजाय शक्ति भी कहा जा सकता है, और हमारी कौनसी अिन्द्रिय हमें शक्तिकी सच्ची नकल या अुसका सच्चा चित्र प्रदान करती है?

अिसके सिवा, हमारे चित्तोंको बौद्धिक कल्पनाओंका और जिसे हम 'पदार्थ' कहते हैं अुसका भान होता है और वे दोनोंके साथ काम ले सकते हैं। परन्तु जहा तक हम जानते हैं 'पदार्थ' को अपना भान नही होता और न वह स्वय अपने साथ या बौद्धिक कल्पनाओंके साथ काम ले सकता है (यद्यपि वह दोनोंसे प्रभावित हो सकता है), अिसलिअे सत्यके अमूर्त पहलूका अर्थात् चित्तका सर्वोपरि महत्त्व मालूम होता है।

यह सच है कि मानव-शरीरके कुछ या सब भागोंके दोषोंके कारण या अुनके स्थगित हो जानेके कारण चित्तके कार्यमें गंभीर बाधा पहुच सकती है, अथवा कभी कभी पहुचती है। परतु अुससे यह सिद्ध नही होता कि पदार्थ चित्तसे श्रेष्ठ है। किसी बढ़अीको खराब औजार देनेसे या सारे औजार अुससे छीन लेनेसे यह प्रमाणित नही होता कि औजारोंका अस्तित्व बढ़अीके अस्तित्वसे पहले था या औजारोंने बढ़अीको बनाया या औजार बढ़अीसे श्रेष्ठ हैं अथवा अुसका नियत्रण करते हैं। अिस प्रकारका अेक अुदाहरण कुमारी हेलन केलरका है, जो शिशुकालसे ही बिल्कुल बहरी, गूगी और अधी थी। अेक प्रतिभावान और निष्ठावान शिक्षिकाकी मददसे और अपने अदम्य सकल्प-बलसे अुसने पढना-लिखना सीख लिया है और अपना विकास अेक अत्यत बुद्धिशाली और सुसस्कृत व्यक्तिके रूपमें, वस्तुत अेक महान महिलाके रूपमें, कर लिया है। अुसके चित्तने कठोर शारीरिक बाधाओ पर विजय प्राप्त की है।

जीवधारियोंके क्रमिक अैतिहासिक विकासमें चित्तके प्रगट विकाससे भी यह सिद्ध नही होता कि चित्त पदार्थका परिणाम है, जैसे किसी बढ़अीको धीरे धीरे अधिकाधिक अच्छे औजार देनेसे यह सिद्ध नही होता कि बढ़अी औजारोंकी गौण अुपज है अथवा अुनका परिणाम है।

पदार्थ चित्तका मूल नहीं है

महान भौतिकशास्त्री श्री० श्रोडिंगरने अपनी मनोहर छोटीसी पुस्तक 'वॉट अिज़ लाअिफ'* में सिद्ध किया है कि प्रत्येक नये जीव-धारीका रूप माता-पिताके रज और वीर्यके अणु-परमाणुओंसे निश्चित नहीं होता, परंतु अुनकी अिन्द्रियातीत रचना या व्यवस्थासे निश्चित होता है। किसी प्राणीके जीवनमें जिन अणुओंसे अुसके तंतु बनते हैं वे सतत प्राणीके भीतर आते और जाते रहते हैं। कोषके अिन अणुओंकी अिन्द्रियातीत रचनासे या व्यवस्थासे ही अुस जीवके विशेष रूपका आरम्भ हुआ था और अुसीसे वह टिका हुआ है। जीवित शरीरके ढांचेका नियंत्रण 'पदार्थ' नहीं करता, परंतु अिन्द्रियातीत रचना करती है। अिसी तरह, अुदाहरणार्थ, सीसेको तांबेसे भिन्न बनानेवाले प्रोटोन अथवा अेलेक्ट्रोन नहीं हैं, परन्तु प्रत्येक धातुके अणुओंमें रहे अेलेक्ट्रोन और प्रोटोनोंकी संख्या और रचना है। यह रचना अिन्द्रियातीत है और अुसका ज्ञान निरी अिन्द्रियोंसे नही होता। केवल चित्त ही अुसे समझ सकता है।

अिन सब विचारोंसे दार्शनिक भौतिकवादकी सत्यतामें, अिस सिद्धान्तकी सत्यतामें कि मूल सत्य पदार्थ है और चित्त पदार्थकी गौण अुपज या परिणाम है, गहरी शंका अुत्पन्न होती है। अगर पदार्थ पुरानी पड़ चुकी तात्त्विक कल्पना ही हो, पुराणपंथी लोगोंकी मानसिक अुपज ही हो, तो वह चित्तका मूल कैसे हो सकता है? व्यक्तिगत रूपमें मेरा तो यह विचार है कि यह मार्क्सवादी सिद्धान्त तथ्यों, विज्ञान या तर्ककी कसौटी पर टिक नहीं सकता। अगर अैसा हो तो अब वह अितिहास या समाजके किसी सिद्धान्तके लिअे सही आधार नहीं समझा जा सकता।

भौतिक अुत्पादनके बलों द्वारा पूर्ण नियंत्रित अितिहासका सिद्धान्त

पदार्थकी प्राथमिकताका प्रतिपादन करके मार्क्स अपने अिस सिद्धान्त पर पहुंचा (परन्तु अुसने अिसे सिद्ध नहीं किया) कि वातावरण विचारोंसे

---

* कैम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस, लन्दन।

श्रेष्ठ है, और अिसलिये मानव-अितिहासमें सारे परिवर्तन आर्थिक अुत्पादनकी पद्धतियां या साधनोंके परिवर्तनोंके कारण हुअे हैं। परन्तु मालूम होता है अुसने अिस हकीकत पर ध्यान नहीं दिया कि मनुष्यकी विचार-शक्तिने ही नये नये औजारों और मशीनोंका आविष्कार किया है और अुत्पादनके साधनोंको बदल दिया है। आर्कराअिटकी बुद्धिने कताअी-यंत्र पैदा किया, जॉर्ज वाटने भापके अेंजिनका आविष्कार किया, अेक चीनीने छपाअीकी कला खोज निकाली और मानवोंकी सर्जन-शक्तिने ही अिन आविष्कारोंका अुपयोग किया। मानव-अितिहासमें आर्थिक अुत्पादनमें होनेवाले परिवर्तन सदा बहुत महत्त्वपूर्ण तो होते हैं, लेकिन वे ही अेकमात्र या अंतिम या सदा सबसे महत्त्वपूर्ण तत्त्व नहीं होते। कोअी अेक तत्त्व अैसा नहीं है जो सदा अंतिम या सबसे महत्त्वपूर्ण हो। जीवन और जगत अितने पेचीदा और परिवर्तनशील हैं कि अुनमें अैसी स्थिति रह ही नहीं सकती। यह तो हुअी चित्त और पदार्थके सम्बन्धकी मार्क्स-वादी कल्पनाकी बात।

द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद

चित्त और पदार्थके सम्बन्धकी चर्चा करनेके बाद मार्क्सने दार्शनिक हेगलका अनुसरण करते हुअे बताया कि विचारोंमें कोअी भी परिवर्तन 'द्वन्द्वात्मक' प्रक्रिया द्वारा आगे बढ़ता है। अर्थात् पहले अेक कथन होता है, फिर अुसका खंडन होता है, फिर दोनों विचारोंमें संघर्ष होता है और अुसमें से अेक तीसरा कथन निकलता है, जो पहलेके दोनों विचारोंकी भूलोंको अस्वीकार करके अुनके सत्योंको अपने भीतर समा लेता है। यह तीसरा कथन पहलेके दोनों कथनोंका सुधार होता है। अिन तीन स्थितियोंको हेगलने पूर्वपक्ष, अुत्तर पक्ष और समन्वय कहा है। ज्यों ही समन्वय सिद्ध हो जाता है त्यों ही वह अेक नया पूर्वपक्ष बन जाता है और यह प्रक्रिया बार बार दोहराअी जाती है और अनन्त रूपमें चलती रहती है। मार्क्सने अिस बौद्धिक प्रक्रियाको पुराने तर्कशास्त्रके स्वरूपोंसे श्रेष्ठ समझकर अपनाया। अुसका यह भी दावा था कि तमाम मानव-व्यवहार

और अितिहास भी अिसी प्रक्रियासे आगे बढ़ते हैं। अिसे अुसने द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद कहा और बताया कि यह सारे अितिहासका बुनियादी कानून है। और अुसकी तथा अुसके अनुयायियोंकी विचारणामें द्वन्द्वात्मक भौतिक-वादका आधार दार्शनिक भौतिकवाद पर है और अिन दोनोंका अकाट्य सम्बंध है।

यह सिद्धान्त कि सारा अितिहास अेक द्वन्द्वात्मक प्रक्रिया है अुन्हें अिस विचार तक ले गया कि परिवर्तनमात्र प्रगति है और प्रगति अनिवार्य है। अिसका गूढ़ार्थ यह भी हुआ कि संघर्षमात्र, जिसमें हिंसा शामिल है, अच्छा है। और बेशक यह भी कि साम्यवादियों द्वारा किया हुआ कोअी भी परिवर्तन अच्छा है।

दार्शनिक भौतिकवाद और अितिहासकी द्वन्द्वात्मक प्रक्रियामें कोअी जरूरी सम्बन्ध नहीं

दार्शनिक भौतिकवाद और अितिहासकी द्वन्द्वात्मक प्रक्रियाका सम्बंध जोड़नेकी जो कोशिश की गअी है, अुसकी अुत्तम चर्चा मैंने अेच० बी० अेक्टन कृत 'दि अिल्यूज़न ऑफ दि अिपॉक' नामक पुस्तकके १४२ और १४३ पृष्ठों पर देखी है। वह अिस प्रकार है:

> "लेनिनका अनुसरण करते हुअे स्टालिन तर्क करता है कि (१) यदि पदार्थ मूल तत्त्व और चित्त अुसकी अुपज है, तो 'समाजका भौतिक जीवन, अुसका अस्तित्व, भी मुख्य वस्तु है और अुसका आध्यात्मिक जीवन गौण वस्तु है'; और (२) अगर चित्त अेक वास्तविक भौतिक जगतका 'प्रतिबिम्ब' है, तो 'समाजका आध्यात्मिक जीवन' 'समाजके भौतिक जीवन' का प्रतिबिम्ब है, जो 'मनुष्यकी अिच्छासे स्वतंत्र अेक वास्तविक सत्यके रूपमें विद्यमान है।'
>
> "तो हम पहली बातका विचार करें। अुसका आशय यह है कि पदार्थ प्रथम अस्तित्वमें था और चित्त बादमें अुससे अुत्पन्न

हुआ — अिस भौतिकवादी पूर्वपक्षसे यह निष्कर्ष निकलता है कि 'समाजके भौतिक जीवनमें' यानी अुत्पादक शक्तियोंमें होनेवाले परिवर्तन सामाजिक जीवनमें तथा कला, धर्म और तत्त्वज्ञानमें महत्त्वपूर्ण परिवर्तन करते हैं। अधिक संक्षेपमें कहें तो अिसका मतलब यह है कि अैतिहासिक भौतिकवाद दार्शनिक भौतिकवादका परिणाम है। किन्तु यह समझमें आना कठिन नहीं कि बात अैसी नही है। दार्शनिक भौतिकवादमें जिस पदार्थको 'आदि तत्त्व' माना गया है वह गैसों, समुद्रों और चट्टानों जैसी वस्तुओंमें है, परन्तु 'समाजके भौतिक जीवन' में औजारों, आविष्कारों और कुशलताओंका समावेश होता है। अिसलिअे 'समाजके भौतिक जीवन' की तथाकथित सामाजिक प्राथमिकता चित्त पर पदार्थकी तथाकथित प्राथमिकतासे बिल्कुल भिन्न वस्तु है, क्योंकि 'समाजके जिस भौतिक जीवन' से राजनीतिक और विचारधारा-सम्बन्धी स्वरूपोंका निर्माण होता है वह खुद मानसिक तत्त्वोंसे बनता है, जब कि मार्क्सवादी दृष्टिसे चित्तरहित पदार्थसे चित्तकी अुत्पत्ति हुअी है। अिस पूर्वपक्षसे कि चित्तकी अुत्पत्ति पदार्थसे हुअी, सामाजिक विकासके कारणोंके बारेमें कोअी परिणाम नहीं निकाला जा सकता।

"(१) के विरुद्ध मेरी दलीलसे जिसे प्रतीति हो गअी हो वह (२) को भी नहीं मानेगा, क्योंकि (१) की तरह (२) का आधार भी 'विशुद्ध भौतिक' के अर्थमें 'भौतिक' और 'शिल्प-संबंधी' के अर्थमें 'भौतिक' के बीचकी संदिग्धता है। वास्तवमें समाजका भौतिक जीवन वह वस्तु है जिसके बीच मनुष्य व्यक्तियोंके रूपमें जन्म लेते हैं और जिसे अुन्हें वैसे ही स्वीकार करना पड़ता है जैसे स्वयं भौतिक जगतको वे स्वीकार करते हैं। परन्तु जिस प्रकार समाजका भौतिक जीवन सारी मानव-जाति पर निर्भर करता है, अुसी प्रकार भौतिक प्रकृति नहीं करती। अेक बार यह स्पष्ट हो

गया कि 'समाजके भौतिक जीवन' में सामाजिक अुत्तराधिकारमें प्राप्त कुशलताअें और अनुभव शामिल हैं, फिर तो अितिहासकी भौतिकवादी कल्पनाका और कॉम्प्ट जैसोंके सिद्धान्तोंका — जिनके अनुसार सामाजिक प्रगतिका कारण बौद्धिक विकास है — अन्तर बहुत कम हो जाता है।"

मार्क्स और अेंजल्स तथा लेनिन और स्टालिन सबका यह विचार था कि आपने अेक बार दार्शनिक भौतिकवादको स्वीकार कर लिया कि द्वन्द्वात्मक भौतिकवादकी सत्यता पूरी तरह स्पष्ट हो जाती है; क्योंकि यह अितिहासकी भौतिकवादी कल्पनाका अर्थ देनेवाला दूसरा शब्द ही है। सच पूछा जाय तो दोनोंका यह सम्बन्ध केवल मनभाती-सी बात है। अिनमें कोअी तर्कसिद्ध सम्बंध नही है। अेक परसे निकाला गया दूसरा अनुमान सत्य नहीं है।

फिर जैसा बर्ट्रण्ड रसेलने बताया, दार्शनिक और द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद अेक-दूसरे पर निर्भर या आवश्यक रूपमें परस्पर सम्बद्ध नहीं हैं। तर्ककी दृष्टिसे दोनोंका अेक-दूसरेके साथ कोअी मेल नही है। यदि दार्शनिक भौतिकवाद सच भी हो तो अिससे यह साबित नहीं हो सकता कि राजनीतिमें आर्थिक कारण आधारभूत होते हैं। अुदाहरणार्थ, किसी अैतिहासिक घटनामें निर्णायक तत्त्व जलवायु, भूगोल या स्त्री-पुरुषका आकर्षण हो सकता है। ये सब भौतिक हैं, परन्तु आर्थिक नहीं है। अगर दार्शनिक भौतिकवाद सही हो तो भी द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद (अितिहासकी भौतिकवादी कल्पना) गलत हो सकती है। अिसके विपरीत, दार्शनिक भौतिकवाद गलत हो तो भी अधिकांश राजनीतिक घटनाअें आर्थिक कारणोंसे हो सकती है। आर्थिक कारणोंके कार्यके पीछे स्त्री-पुरुषोंकी अधिकार और सत्ताकी अभिलाषाअें काम करती है; फिर भी संभवतः अुन अभिलाषाओंका पूरा स्पष्टीकरण अधिकतर भौतिकवादी शब्दोंके बजाय बौद्धिक और भावनामय शब्दोंमें किया जा सकता है। समस्त अभिलाषाओंका मूल या हेतु शारीरिक नहीं होता।

द्वन्द्वात्मक भौतिकवादके विषयमें अन्य शंकाअें

द्वन्द्वात्मक भौतिकवादके सही होनेमें और भी शंकाअें हैं। परस्पर विरोधी बातोंके बारेमें अुसकी व्याख्या दो अर्थवाली, भिन्न भिन्न, अस्पष्ट और कभी कभी बिल्कुल नहीं होती। मार्क्स और अुसके अनुयायी अकसर जोर देकर कहते हैं कि कुछ दृष्टान्त अेक-दूसरेके विपरीत होते हैं, जब कि वास्तवमें वे केवल अेक-दूसरेसे भिन्न होते हैं। वे बार बार यह दावा करते हैं कि जो केवल परिवर्तन है वह असलमें प्रगति है। पूर्वपक्ष या अुत्तर पक्षके सम्बन्धमें कोअी समन्वय परिवर्तन हो सकता है, परन्तु यह जरूरी नहीं कि वह प्रगति ही हो। 'प्रगति' शब्द वैज्ञानिक नहीं है; वह नैतिकताका सूचक है। जिसका अर्थ केवल संग्रहसे अधिक है। कुछ सामाजिक परिवर्तन निरे समझौते होते हैं और सच्चे समन्वय बिलकुल नहीं होते। किसी भी संघर्षका सच्चा हल मूल सतह पर नहीं होता। सच्चे हलके लिअे अुसे सार्थकताको किसी अूची सतह पर ले जाना पड़ता है।

दलीलके लिअे माना जा सकता है कि तर्कशास्त्रमें द्वन्द्वात्मकताकी कल्पना और अितिहासमें द्वन्द्वात्मकताकी कल्पना अुचित है। परन्तु दोनों द्वन्द्वात्मक पद्धतियां अनिवार्य रूपसे समानान्तर या परस्परावलम्बी नहीं होंगी। किसी परिस्थिति-विशेषमें अुनमें से अेक कल्पना दूसरीकी यथार्थता पर असर डाले बिना अयथार्थ हो सकती है।

वर्गविहीन समाज

अिसके सिवा, अितिहास पर लागू किया जानेवाला द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद यह मान लेता है कि परिवर्तन सतत होता है और अुसका कभी अन्त नहीं होता। अगर अैसी बात हो और अैतिहासिक प्रक्रियाअोंसे हम किसी दूरके भविष्यमें अेक वर्गविहीन समाज तक पहुंच जायं, तो क्या वहीं अितिहासका अन्त हो जायगा? क्या परिवर्तन होना ही बन्द हो जायगा? क्या वह स्थिति अेक अचल, अपरिवर्तनशील, स्वर्गकी स्थिति होगी? कुछ रूसियोंका दावा है कि अुन्होंने वर्गविहीन समाज सिद्ध कर

लिया है। परन्तु अितिहास और परिवर्तन रूसमें बन्द नही हो गये हैं। जैसा जॉन बीवर्स और प्रा० कार्ल बैंकरका कहना है, अैसा मालूम होता है मानो द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद अेक प्रक्रियाके नाते वर्गविहीन समाजको नष्ट कर देगा और अुसकी जगह कोअी प्रतिपक्ष खड़ा कर देगा। अैसी सूरतमें यह सारी शक्ति लड़नेमें क्यो खर्च की जाय? अेक अमरीकी मार्क्सवादी, सिडनी हुक, का कहना है कि परिवर्तनसे अन्तिम वर्गविहीन समाजमें गड़बड़ नही होगी, बल्कि वह मनुष्यके मन और हृदयमें आर्थिकसे अधिक अूंचे स्तर पर काम करेगा। यदि अैसा हुआ तब तो, जैसा प्राध्यापक कार्ल बैंकर बताते हैं, हमारी दुनियामें स्वर्ग अुतर आयेगा। और मार्क्सको अैसे काल्पनिक स्वर्गसे और स्वर्गके स्वप्न देखनेवालोंसे हमेशा घृणा होती थी।

नियतिवाद शंकास्पद है

अैतिहासिक भौतिकवादके समर्थक कहते है कि वह नियतिवादका अेक रूप है और अुसका आधार विज्ञान पर है। परन्तु आधुनिक विज्ञानने कट्टर नियतिवादको छोड़ दिया है। विज्ञानके नियम अब स्थिर और अटल नही माने जाते, वे दृढ़ संभावनाके कथनमात्र है। तब अधिकसे अधिक मार्क्सवादी सिद्धान्त केवल अैतिहासिक संभावनाओंका अनुमान ही हो सकता है। अिसलिअे कोअी भी मार्क्सवादी भावी घटना-क्रमके बारेमें निश्चित रूपसे भविष्य-वाणी नही कर सकता। अैतिहासिक घटना-क्रममें कोअी अनिवार्यता नही होती। सच कहा जाय तो मार्क्सकी कअी भविष्य-वाणिया गलत सिद्ध हुअी है, जिनमें से अेक यह है कि पहली क्रान्ति किसी अुद्योग-प्रधान देशमे होगी।

मार्क्सवादी अितने निःशंक क्यों है?

यद्यपि दार्शनिक भौतिकवाद और द्वन्द्वात्मक या अैतिहासिक भौतिकवादके बीच जो सम्बंध जोर देकर बताया गया है वह तर्ककी दृष्टिसे झूठा है, दोनों परस्पर असंगत है और अलग अलग भी प्रत्येक यदि झूठा नही हो तो भी अत्यंत शंकास्पद तो है ही; फिर भी अुनके अलग अलग

सत्य होने पर और दोनोंके अनिवार्य सम्बंध पर बार बार जोर देनेसे मार्क्सवादियोंको यह लगता है कि दर्शन और अितिहासके क्षेत्रमें अिन सिद्धान्तोंमें गहरा और चिरस्थायी सत्य है। अिन सिद्धान्तोंकी प्रकट किन्तु भ्रमपूर्ण गहनता और सर्वग्राहिता घटनाओंको समझने और अुनका निरूपण करनेकी मार्क्सवादियोंकी भूखको तृप्त करनेकी आशा दिलाती है और अिसलिअे वे अत्यंत आवर्षक हैं। अिससे अुनको विश्वास हो जाता है कि अुन सिद्धान्तोंमें जो कुछ कहा गया है वह होगा, और अवश्य होगा। अिससे अुन्हें अपने पर और अपने निर्णयों तथा विचारों पर पूरा विश्वास हो जाता है। वे कट्टरतापूर्वक यह विश्वास करते हैं कि अुनकी बात हमेशा बिलकुल ठीक होती है और जो कोअी अुनके सिद्धान्तको स्वीकार नहीं करता वह सर्वथा गलत और दुष्ट है। वे अकसर सिद्धान्तके जड पूजक और घमंडी हो जाते हैं और मौका पड़ने पर निर्दय भी बन जाते हैं। विडम्बना तो देखिये कि मार्क्सवादी लोग वैसे ही कट्टरपंथी बन जाते हैं, जैसा अुनका अेक मुख्य विरोधी —रोमन कैथोलिक चर्च अपने प्रारंभिक कालमें था।

लेकिन अुपरोक्त कारणोंसे मेरा विश्वास है कि अिस बारेमें साम्यवादी विचारोंमें गहरी भूल है और अगर ये भूलें छोड़ी नहीं गअीं तो अुनके आधार पर बनी हुअी राजनीतिक प्रणाली असफल रहेगी। अितिहासकी प्रक्रियाओंमें आर्थिक बलोंका महत्त्वपूर्ण हाथ होता है। यह सिद्धान्तके द्वारा नहीं परन्तु घटनाओंकी सावधानीसे की गअी जांच और स्पष्टीकरणके द्वारा सिद्ध करके मार्क्सने अितिहासके अध्ययनकी बड़ी सेवा की। परन्तु अुसने अपने पक्षका निरूपण करनेमें अति कर दी और बहुतसे अैसे परिणाम निकाले जो गलत हैं। अगर दार्शनिक भौतिकवाद और अैतिहासिक भौतिकवाद यथार्थ न हों और अुनका आपसमें सम्बंध भी नहीं हो, तो साम्यवाद अितिहासका बिलकुल सही अर्थ नहीं देता या भविष्यकी बात बतानेके लिअे कोअी आधार नहीं देता है।

सत्यको प्रगट करनेके लिअे केवल तर्क काफी नहीं

मार्क्सवादी विचारधारा यह मान कर चलती है कि तर्क और बुद्धिसे हम पूर्ण सत्यको जान सकते हैं। परन्तु मार्क्सवादी अिस तथ्यको नहीं देखते कि गणितशास्त्रमें ही नहीं, बल्कि सारे क्षेत्रोंमें चित्त कुछ अैसी धारणायें बना लेता है जिन्हें बनाये बगैर वह रह नहीं सकता, परन्तु जिन्हें वह तर्क या विज्ञानसे सच या झूठ भी सिद्ध नहीं कर सकता। ये धारणायें हमारे सारे विचारके प्रारंभिक बिन्दु हैं। ये धारणायें तर्कसे पहलेकी चीज हैं और अन्तःप्रेरणासे बनती हैं। अुदाहरणार्थ, मार्क्सने भी मान लिया था कि अुसका अस्तित्व है, परन्तु वह अपनी दसों अिन्द्रियोंसे, तर्कसे या वैज्ञानिक यंत्रोंसे यह सिद्ध नहीं कर सकता था कि अिस आन्तरिक अिन्द्रियातीत आत्माका, जो सोचती है, अनुभव करती है, आशा करती है और भयभीत होती है, सचमुच अस्तित्त्व है। फिर भी मार्क्स यह जरूर मानता था कि अुसका अस्तित्व वास्तविक है। अिस प्रकार मार्क्सवादी तर्क भी हमें सत्यके बारेमें कोअी पूरा, समग्र और असंदिग्ध चित्र नहीं देता।

साम्यवादकी धारणायें

साम्यवाद पूंजीवादकी तरह कुछ धारणायें बनाता है, जिन्हें न तो अुसने सिद्ध किया है और न वह कर सकता है। ये श्रद्धाकी बातें हैं। अुनमें से कुछ ये हैं:

१. अितिहासकी भौतिक प्रक्रियायें तर्कके क्रमिक विकासको दोहराती हैं।

२. द्वन्द्वात्मक भौतिक प्रक्रियाओंका परिणाम सदा प्रगतिमें ही आता है।

३. मनुष्य सदा अपने वर्गीय स्वार्थोंसे प्रेरित होकर ही काम करते हैं।

४. अंतमें साम्यवादी पार्टी ही वर्गविहीन समाजकी स्थापना करेगी।

५ जब वर्गविहीन समाज कायम हो जायगा तब राज्यका अन्त हो जायगा और तब हिंसा बन्द हो जायगी।

(मेरी अपनी धारणा यह है कि जब तक मानव-जाति संघर्षका निपटारा करनेके अेक अुपायके रूपमें हिंसाको नहीं छोड़ देगी तब तक राज्यका अन्त नहीं होगा।)

चूंकि सभी मनुष्योंकी अपनी अपनी धारणायें होती हैं और अिसलिअे अुन्हें अज्ञात श्रद्धाके आधार पर जीना पड़ता है, और धारणाओंकी वास्तविकता तर्क या शास्त्रके बलसे सिद्ध नहीं की जा सकती, अिसलिअे साम्यवादी और मार्क्सवादी यह मानकर नहीं चल सकते कि अुनकी धारणायें दूसरे लोगोंकी धारणाओंसे अधिक सत्य हैं और न वे मानव-स्वभाव या अन्तःप्रेरणाको बदलकर सारी धारणाओंको अेकसी ही बना सकते हैं। दूसरे लोगोंको चाहिये कि मार्क्सवादियोंको अपनी धारणायें बनाने दें और मार्क्सवादियोंको चाहिये कि दूसरोंको अुनकी भिन्न धारणायें बनाने दें। धारणाओं और मनुष्योंके स्वभावकी प्रामाणिक और वैज्ञानिक स्वीकृति ही सहिष्णुता है।

समाजका महत्त्व अधिक या व्यक्तिका?

साम्यवादी और समाजवादी भी आग्रहके साथ कहते हैं कि समाज व्यक्तिसे अधिक महत्त्वपूर्ण है और चूंकि आज राज्य या सरकारका आम तौर पर सबसे बड़ा संगठन होता है, अतः अिस विश्वासका व्यावहारिक स्वरूप यह हो जाता है कि राज्य व्यक्तिसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। यह विश्वास तुरन्त ही राज्यकी पूजाका विषय बन जाता है। अिसी विचारसे फलित अेक मान्यताके रूपमें मार्क्सवादी आम तौर पर यह आरोप लगाते हैं कि पूंजीवाद व्यक्तिको समाजसे ज्यादा अूंचा स्थान देता है, और यह विश्वास झूठा और बुरा है।

समाजका महत्त्व अधिक है या व्यक्तिका, यह प्रश्न अेक हद तक जीवशास्त्रके अिस प्रश्नसे जुड़ा हुआ है कि वातावरण या आनुवंशिकतामें से कौन अधिक प्रभावशाली है। अिस बारेमें अधिकारपूर्ण जीवशास्त्री

दोनोंका प्रभाव लगभग बराबर बराबर बताते हैं। कोअी भी समझदार आदमी दोनोंमें से अेक भी तत्वके महत्त्वसे अिनकार करनेका प्रयत्न नहीं करता। किसी अेक पर यदि जरूरतसे ज्यादा जोर दिया जाता है, तो अुसके परिणामस्वरूप कठिनाअी पैदा होती है।

समाजका महत्त्व अधिक है या व्यक्तिका, अिस प्रश्नसे वह पुराना मूर्खतापूर्ण प्रश्न याद आ जाता है — मुर्गी पहले अस्तित्वमें आअी या अंडा? आज तक किसीने कोअी अेक ही व्यक्ति अैसा न तो देखा है, न सुना है, जिसके आसपास कोअी परिवार या समूह कभी नहीं रहा हो। समाज व्यक्तियोंसे बनता है। अेककी दूसरेको जरूरत है, अेकके बिना दूसरा कभी नहीं रहा है। शायद समस्याको हल करनेका सबसे बुद्धिमत्तापूर्ण तरीका यह है कि प्रकाशके स्वरूप-सम्बंधी सिद्धान्तके बारेमें भौतिकशास्त्रियोंके अुदाहरणका अनुसरण किया जाय। कुछ परिस्थितियोंमें प्रकाश अिस तरह काम करता है मानो वह शक्तिकी तरंगें हो; दूसरी परिस्थितियोंमें वह शक्तिके अणुओंकी तरह काम करता है। अिसलिअे भौतिकशास्त्रियोंने अिस बातका आग्रह छोड़ दिया कि प्रकाशको या तो तरंगरूप होना चाहिये या अणुरूप। किसी खास अवसर पर आप अुसे जिस तरह देखते हैं या काममें लेते हैं, अुसीके अनुसार प्रकाशमें दोनों गुण या कोअी अेक गुण होता है। अिसी तरह कभी व्यक्तिको ज्यादा महत्त्वपूर्ण समझना ठीक होगा; और कभी या किसी दूसरे हेतुके लिअे समाजको अधिक महत्त्व देना ज्यादा अुचित और बुद्धिमत्तापूर्ण होगा। किसी सभ्यताके व्यवहारमें दोनों सिद्धान्तोंका अपने अपने अुपयुक्त अवसर या हेतुके लिअे अुपयोग किया जायगा। अुदाहरणके लिअे, विचार और कार्य दोनोंमें पहल करनेके लिहाजसे व्यक्ति अधिक महत्त्वपूर्ण दिखाअी देता है; स्वीकृति और सातत्यके हेतुओंके लिअे समाजका अधिक महत्त्व है।

अिस सम्बंधमें यह बात विपरीत-सी मालूम होती है कि रूसी साम्यवादी दलने, जो समूहवाद और समाजके श्रेष्ठ महत्त्वके बारेमें अितना आग्रही है, आकाश-पाताल अेक करके कुछ अैसे प्रमुख साम्यवादी व्यक्तियोंका

सरकार द्वारा 'सफाया' यानी वध कराया, जिन पर १९३६–३८ में पार्टीकी नीतिसे विचलित होनेका अभियोग लगाया गया था। और अुसके बाद बेरियाके जैसे और वध भी हुअे हैं। यदि व्यक्ति महत्त्वहीन है तो थोड़ेसे नास्तिकोंको चुनकर मौतके घाट अुतारनेमें अितना अुत्साह क्यों दिखाया जाय? और मार्क्स, अेंजल्स, लेनिन और स्टालिन चारों व्यक्ति ही हैं, फिर भी दुनिया भरके साम्यवादी अुनके बारेमें बहुत अूंचे विचार रखते हैं। नहीं, विचार व्यक्तियोंके मस्तिष्कमें अुत्पन्न होते हैं और व्यक्तियोंके द्वारा ही प्रसारित किये जाते हैं। राजनीति, अर्थशास्त्र, कला, धर्म और दूसरे क्षेत्रोंमें श्रद्धासे स्वीकार किये जानेवाले आजके सिद्धान्त मूलतः व्यक्तियोंकी ही नास्तिकतायें थी। व्यक्ति सजीव अिकाअियां हैं और समाजकी अपेक्षा व अधिक पूर्ण रूपमें, अधिक दृढ़ रूपमें और अधिक भावनात्मक रूपमें संगठित हैं। व्यक्तिकी श्रेष्ठ आरम्भ-शक्ति और विचार-शक्तिका यह अेक महत्त्वपूर्ण कारण है।

असंगतताओंका विचार

मेरे कहनेका यह मतलब नहीं है कि मानव-आचरणकी कोअी भी प्रणाली या समाजका कोअी भी महान सिद्धान्त तार्किक असंगतताओंसे मुक्त है, अथवा अैसी तार्किक असंगतताओंका होना लाजिमी तौर पर समाजकी अैसी जीवन-प्रणाली या समाजके अैसे सिद्धान्तको अस्वीकार करनेके लिअे कोअी सच्चा कारण है। लेकिन कुछ असंगततायें बड़ी गंभीर दुर्बलता हो सकती हैं और सभी असंगततायें कमसे कम सिद्धान्तके विषयमें जड़ता और कट्टरताको दबानेका अेक कारण तो होनी ही चाहिये। सभी सामाजिक सिद्धान्तोंको अस्थायी और प्रयोगके रूपमें ही मानना चाहिये।

व्यवहारमें साम्यवाद

यह बात तो हुअी साम्यवादी सिद्धान्तकी। अब हम यह देखें कि व्यवहारमें अुसने कैसा कार्य किया है।

जैसे हमने पूंजीवादके गुण और दोष दोनोंको समझनेकी कोशिश की, अुसी तरह हमें साम्यवादकी भी अुतनी ही पूरी छानवीन करनी चाहिये। हमने पूंजीवादके नौ लक्षण बताये हैं: (१) निजी सम्पत्ति और स्पर्धा पर जोर; (२) बढ़ता हुआ शिल्प-विज्ञान और अुद्योगवाद; (३) निरन्तर बढ़नेवाला श्रम-विभाजन; (४) सदा बढ़नेवाला व्यापार-व्यवसाय; (५) शहरीकरण; (६) अधिकांश वस्तुओं और प्रवृत्तियोंका पैसेमें मूल्यांकन और अुन सब पर पैसेका नियंत्रण; (७) कर्मके लिअे अचूक और अुत्तम प्रेरणाके रूपमें पैसेके मुनाफेके हेतु पर आधार; (८) पुलिस, स्थलसेना, जलसेना और हवाअी सेनाके रूपमें संगठित हिंसाका विस्तृत अुपयोग; (९) भूमि-वितरण, भूमि-अधिकार, भूमिकर और पैसेके व्याजकी अैसी पद्धतियां जो कृषिके मुकाबलेमें अुद्योग और व्यवसायको प्रबल प्रोत्साहन देती है, मौजूदा कानूनी और सामाजिक प्रणालीका पक्ष लेती हैं और अिसलिअे किसानों और काश्तकारोंमें दरिद्रता और अरक्षितताको बढ़ाती है तथा धरती-कटावको बढ़ाती और जमीनके अुपजाअूपनको घटाती हैं।

व्यवहारमें साम्यवादने निजी सम्पत्तिके अलावा और सब बातें कायम रखी हैं। न्यायकी दृष्टिसे यह कहा जा सकता है कि साम्यवादके मूल अुद्देश्योंमें से व्यक्तिगत संपत्तिका अुन्मूलन ही अेकमात्र अैसा अुद्देश्य है, जो रूसमें पूरी तरह सिद्ध हुआ है। साम्यवाद पूंजीवादकी अपेक्षा समाजके नियंत्रणके साधनके रूपमें हिंसा और भयका अधिक सतत और खुले रूपमें अुपयोग करता है। साम्यवाद स्पर्धा और पैसेके रूपमें नफेके हेतु पर पूंजीवादसे कम जोर देता है, फिर भी अिन्हें काममें जरूर लेता है। अवश्य ही कोअी अैसा कह सकता है कि अिस समय जिसे साम्यवाद कहा जाता है वह केवल समाजवाद है और साम्यवाद अनिश्चित भविष्यमें ही किसी समय सिद्ध होगा। लेकिन चूंकि स्पर्धा और नफेके हेतुके ये तत्त्व अिस समय रूस, चीन, पोलैंड, हंगरी, बल्गेरिया, पूर्व जर्मनी, युगोस्लाविया और ज़ेकोस्लावाकियामें सचमुच काम कर रहे है, अिसलिअे हम आशा कर सकते हैं कि वे अपने साधारण परिणाम पैदा करेंगे ही। साम्यवाद

और पूंजीवाद दोनों भौतिकवादी हैं। रूसमें अुद्योगवादका अधिक विकास होगा तब मैं आशा रखता हूं कि वहां भी अुसी तरहके हानिकारक परिणाम पैदा होंगे, जिनका कि पूंजीवादके परिच्छेदमें वर्णन किया गया है, क्योंकि साम्यवादी अुद्योगवादका भी पूंजीवादी अुद्योगवादकी तरह मर्यादा या आत्मसंयमका कोअी सिद्धान्त नहीं होता।

साम्यवाद और पूंजीवाद बहुत हद तक अेकसे हैं

अिस परसे यह प्रकट होता है कि पूंजीवाद और साम्यवाद व्यवहारमें अनेक लोग अनुभव करते हैं अुससे कहीं ज्यादा समान हैं और अिसलिअे अुनसे बहुत हद तक वही परिणाम पैदा करनेकी आशा रखी जा सकती है। सोवियट रूसके अनुभवने यह साबित कर दिया है कि अुत्पादनके साधनोंमें व्यक्तिगत सम्पत्तिके बिना भी अुद्योगवादी समाज स्थापित हो सकता है। परन्तु व्यक्तिगत सम्पत्तिका स्वामित्व व्यक्तियोंके हाथसे निकल कर राज्यके पास चला जानेसे राज्यगत पूंजीवाद कायम हो सकता है। मौजूदा रूसी सरकारके कटु आलोचक मानते हैं कि वहांकी वर्तमान प्रणाली वास्तवमें राजकीय पूंजीवाद ही है। अवश्य ही अुत्पादनके साधन राज्यके हाथोंमें पूरी तरह आ जानेसे व्यक्तिगत पूंजीवादके परिणामोंकी अपेक्षा अिसके परिणाम भिन्न होंगे। लेकिन यह सवाल किया जा सकता है कि राजकीय पूंजीवाद या राजकीय समाजवादके दीर्घकालीन परिणाम नैतिक दृष्टिसे पूंजीवादी देशोंकी अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ होंगे, या अिस समय पूंजीवादी देशोंमें जितना न्याय है अुससे अधिक समग्र न्याय अुत्पन्न करेंगे या नहीं। बेशक, शुरूमें तो मनशा यही होगी कि अुत्पादनमें सबीका न्यायपूर्ण हिस्सा हो और सबको अपनी जरूरतके अनुसार मिले। और सचमुच, रूसमें मजदूरोंको बेकारी, बीमारी और असमर्थता सम्बन्धी जितने अधिक लाभ आज मिलते हैं अुतने पहले कभी किसी और देशमें नहीं मिले। कहा जाता है कि लिंग, जाति, धर्म या जन्मस्थानकी बिना पर रूसमें किसी नागरिकको किसी काम, पद वगैराके लिअे अयोग्य नहीं ठहराया जाता। शिक्षा वहां सार्वभौम है। सामाजिक जीवनमें मानवताकी भावनाका बडी

हद तक प्रवेश हो गया है। भोजनका स्तर कुछ अूंचा हो गया है। परन्तु अनेक रिपोर्टोंके अनुसार आम लोगोंके घरोंकी हालत वहुत नहीं सुधरी है। अिसके सिवा, वहां वहुत गरीवी है और वह ज्यादातर शायद अुत्पादक प्रयत्नकी दिशाको वदल कर अुसे शस्त्रास्त्रोंके निर्माणमें लगा देनेसे अुत्पन्न हुअी है।

सत्ताके केन्द्रित होनेका खतरा

परन्तु अेक नौकरशाहीके हाथोंमें, और अुससे भी ज्यादा, साम्यवादी दलकी अेक छोटीसी केन्द्रीय कार्यसमितिके हाथोंमें सत्ता केन्द्रित हो जानेके जहरीले और दूषित करनेवाले असरसे संकट खड़ा होनेका संकेत अैतिहासिक अनुभवसे मिलता है। चूंकि साम्यवादी अितिहासके महत्त्व पर अितना जोर देते हैं, अिसलिअे अुन्हें और अुनसे आकर्षित होनेवाले लोगोंको अिस निर्णयके लिअे युगोंका प्रमाण याद रखना चाहिये कि सत्ता सत्ताधारियोंको भ्रष्ट करती है। मुझे कठोर राजनीतिक और आर्थिक मान्यताओंके परिणामोंका भी भय है।

मुझे अिस वातका भी भय है कि साम्यवाद द्वारा लादे गये विचारोंकी समानता अंतमें कला, साहित्य और विज्ञानके क्षेत्रोंमें सारे सृजन-कार्यको वहुत सीमित कर देगी।

रूसमें खड़ा हो रहा नया शासकवर्ग

वर्गविहीन समाजके जिस आदर्शकी घोषणा की गअी है अुसके विपरीत रूसमें पहले ही अूंचे-नीचे सामाजिक और राजनीतिक दर्जे पैदा हो गये है और व्यवस्थापकों तथा टेकनिशियनोंका अेक नया वर्ग वन गया है। आर्थिक वेतनमें भी भारी फर्क हैं। व्यवस्थापकोंको साधारण मजदूरोंसे कहीं ज्यादा वेतन मिलता है। अेक रिपोर्टके अनुसार सर्वोच्च श्रेणीके व्यवस्थापकोंको मजदूरोंके वेतनसे साठ गुना अधिक वेतन मिलता है। कुछ अमरीकी क्वेकरोंने १९५६ में रूसके कुछ भागोंका दौरा किया था। अुनकी रिपोर्टके अनुसार मिन्स्कके ट्रेक्टरके कारखानेमें अेक अुम्मीदवार मजदूरकी

मासिक मजदूरी ३५० रूबल थी और मास्कोमें विश्वविद्यालयके अध्यक्षको १२,००० रूबल मासिक वेतन मिलता था, जो लगभग ३५ गुना अधिक है। संयुक्त राज्य अमरीकामें अेक चपरासी और अुसको नौकर रखनेवाली कम्पनीके अध्यक्षकी कमाअीमें लगभग अितना ही अन्तर है। सोवियट रूसमें आयकर अधिकतम अधिक १२ प्रतिशत है, परन्तु संयुक्त राज्य अमरीकामें सबसे अधिक धनवान वर्गके लोगोंसे ९१ प्रतिशत आयकर लिया जाता है। रूसमें साम्यवादी दलने अधिकृत रूपमें वेतन और अवसरकी समानताको तिलांजलि दे दी है। दूसरे साम्यवादी देशोंमें अिस सम्बन्धमें क्या स्थिति है अिसका मुझे पता नहीं है।

सोवियट राजनीतिके अेक प्रसिद्ध अभ्यासी प्रो० बैरिंगटन मूरे (जूनियर) का विश्वास है कि जान-बूझकर संगठित की गअी सामाजिक असमानता, असमान वेतनकी स्पर्धापूर्ण प्रेरणाका प्रयोग और आन्तर-राष्ट्रीय राजनीतिके प्रचलित नमूनेकी स्वीकृति आदि सब बातें शायद अुद्योगवादी समाजके बने रहनेके लिअे जरूरी हैं। अभी अिस बारेमें निश्चित रूपसे कुछ नहीं कहा जा सकता, मगर फिर भी रूसकी सोवियट सरकारने अपनी मूल योजनायें बदल डाली हैं और अिन नीतियोंको अपना लिया है।

आर्थिक शोषणका सवाल

पूंजीवादकी तुलनामें सब बातोंको देखते हुअे रूसमें मजदूरोंका आर्थिक शोषण कुल मिलाकर घटा है या नहीं, यह कहना कठिन है। कोअी प्रत्यक्ष कसौटियां तो हैं नहीं, जिनके आधार पर शोषणका निश्चित माप निकाला जा सके। अगर रूसमें शोषण हो तो वह राज्य द्वारा होता है। और मूल्यांकन तथा चुनावके खातिर स्वावलम्बन, आत्म-शक्ति तथा वाणी, विचार, अखबारों, धर्म और संगठनकी स्वतंत्रता तथा राज्यका दबाव आदि अन्य बातोंको भी तराजूमें रखनेकी जरूरत हो सकती है। और आर्थिक स्वतंत्रता तथा राजनीतिक दबाव या आर्थिक दबाव और राजनीतिक स्वतंत्रता, अथवा बौद्धिक दबाव और आर्थिक स्वतंत्रता अथवा अिसी तरहके अन्य तत्त्वोंके जोड़से अेक-दूसरेका सन्तुलन कैसे

विगड़ जाता है? मनुष्यके चुनाव — अगर वह चुनाव करनेकी स्थितिमें हो — प्रत्यक्ष कसौटियोंके आधार पर नही हुआ करते, परन्तु आत्मगत तथा भिन्न मूल्यांकनों, धारणाओं और हेतुओके आधार पर होते है।

संभव दीर्घकालीन परिणाम

मेरी आशा तो यह है कि समय पाकर अिस प्रकार सत्ताके केन्द्रित होनेका परिणाम यह होगा कि स्वामित्वके व्यक्तियोंके हाथोसे निकलकर राज्यके अधिकारमें जानेके लाभ पूरी तरह मिट जायंगे। मैं समझता हूं कि अैसी परिस्थितिमें राज्य आम जनताकी आवश्यकताओं और आशाओंका प्रतिनिधि नही रह जायगा। अितिहाससे यही शिक्षा मिलती है। मेरे विचारसे साम्यवाद और सम्पूर्ण समाजवाद दोनों व्यक्तिकी आरंभ-शक्ति, स्वावलम्वन, कल्पना-शक्ति और बौद्धिक स्वतंत्रताको और अिसलिअे परिवर्तनके अनुकूल वननेकी समाजकी क्षमताको कमजोर वना देंगे। हो सकता है कि रूसी समाजवादके कमसे कम कुछ दोष अुन विशेष भौतिक, आर्थिक, परम्परागत और मनोवैज्ञानिक तत्त्वोंके कारण हों जो रूसमें विद्यमान हैं और दूसरे देशोंमें नहीं हैं। निःसन्देह हर देश समाजवादकी अेक विशेष सुवास पैदा करेगा। परन्तु, जैसा सदा होता आया है, महान सत्ताके केन्द्रीकरणका दूषित प्रभाव तो हर जगह काम करेगा।

जनताके प्रति हिंसाका अुपयोग

साम्यवादकी कट्टरता, अुत्साह और अधीरताने शीघ्रगामी परिवर्तनके लिअे जवरदस्त दवाव पैदा किया है। चूंकि मनुष्यकी विचार और कार्यकी आदतें सदा धीरे धीरे वदलती रही हैं और अुनकी विकासकी अपनी ही सजीव गति रही है, अिसलिअे जो भी देश अुनके नियंत्रणमें आया है अुसीमें साम्यवादियोंकी जल्दवाजीका परिणाम विशाल पैमाने पर आम जनताके दमन और हिंसामें आया है। हालांकि हम मानते हैं कि प्रतिक्रियावादी पूंजीपति और भूस्वामी अपनी सत्ताको वनाये रखना चाहते है, फिर भी परिवर्तनकी अनिच्छा केवल अुन्हीके जान-वूझकर किये हुअे

दूषित विरोधके कारण नहीं रही है। यह अनिच्छा अधिकतर मानव-स्वभावकी जड़ता और किसी प्रकारकी प्रचलित परंपराके कारण होती है। यह मन्दता कुछ हद तक समाजकी सुव्यवस्थाकी गहरी जरूरतके कारण होती है, जिसका कारण यह भी होता है कि लोग नअी व्यवस्थाके प्रस्तावका स्वीकार करने और अुस पर विश्वास करनेमें मन्द होते हैं। लोग अेक बारमें अेक ही कदम और वह भी छोटा-सा कदम अुठाना चाहते हैं, और दूसरा कदम अुठानेसे पहले पहले कदमके परिणामको देख लेनेके लिअे ठहर जाते हैं।

यह संभव है कि बहुतसे साम्यवादी हिंसाका अुपयोग अिसलिअे नहीं करना चाहते कि अुनके ध्येयके लिअे हिंसा आवश्यक है, बल्कि अिसलिअे करना चाहते हैं कि मानव-स्वभावकी अुनकी दृष्टि बहुत छोटी है और वे न तो अुस पर विश्वास करते हैं और न अुसकी छिपी हुअी सूक्ष्म शक्तियोंको पहचानते हैं।

रूस और अुसके आश्रित देशोंमें अिस सारी असैनिक हिंसाने जनताको जबरदस्त दुःख पहुंचाया है। हमें यह कैसे मालूम हो कि अिसके परिणाम चुकाअी जानेवाली कीमतको अुचित ठहरानेवाले ही आयगे। अिस प्रश्नका साम्यवादी अुत्तर अभी तक अितिहास द्वारा अुचित सिद्ध नहीं हुआ है, यह निरी भविष्य-वाणी है। जैसा अेल्टन मेयोने कहा है, "अुत्सुक और हार्दिक सहयोग जाग्रत करनेमें जबरदस्ती कभी सफल नहीं हुअी है।" और स्थायी हार्दिक सहयोगके बिना हमें स्थायी दीर्घजीवी सभ्यता नहीं मिल सकती।

साम्यवादका सात बड़े खतरोंसे संबंध

अब अिस निबंधके आरंभके भागको फिरसे देखें, तो भारत पर जो सात बड़े खतरे मंडरा रहे हैं अुनमें से पहले खतरेसे — अर्थात् जमीनके कटाव और जरूरतसे ज्यादा आबादीके खतरेसे — निपटनेके लिअे शायद पूंजीवादकी अपेक्षा साम्यवाद अधिक अच्छी स्थितिमें है। परन्तु पूंजी-वादियोंकी तरह मार्क्सवादी भी अिस विचार पर मुग्ध हैं कि मनुष्य

प्रकृतिका प्रभु और स्वामी है। अिसलिअे पूंजीवादियोंकी तरह साम्यवादी भी शायद मानव-सृष्टिके साथ अन्य सृष्टिके सम्बन्धको भलीभांति न समझनेके कारण बड़ी बड़ी गलतियां करेंगे। किन्तु ये गलतियां दिखानेवाले परिणाम तो बहुत वर्षों बाद मालूम होंगे। रूसमें जमीनकी रक्षा और पानीकी व्यवस्थाका कुछ हद तक बढ़िया काम हुआ है, लेकिन शायद वह पूंजीवादी अमरीकासे अधिक अच्छा नहीं हुआ है। सोवियट रूसमें घासके समतल मैदानों पर जंगलोंकी कुछ बड़ी बड़ी रक्षापंक्तियां स्थापित की गअी हैं, परंतु यह बात अमरीकाके लिअे भी सही है।

जहां तक मुझे मालूम है साम्यवादने अभी तक कहीं भी अत्यधिक जनसंख्याके भयको दूर करनेका प्रयत्न नहीं किया है, यद्यपि रूसमें मेरा विश्वास है कि कुछ संतति-नियमन केन्द्रोंने काम किया है। परंतु दूसरी ओर रूसी सरकारने बड़े परिवारोंको बहुत बड़े बड़े 'बोनस' दिये हैं; और अिस प्रकार अुसने जनसंख्याको रोकनेके बजाय अुसकी वृद्धिको प्रोत्साहन दिया है। मैं नहीं जानता कि चीनी सरकारने आबादीके नियंत्रणके बारेमें क्या कदम अुठाये हैं। रूसी साम्यवादने पूंजीवादी देशोंकी अपेक्षा पैसे और सम्पत्तिके बंटवारेको शायद कम अन्यायपूर्ण बनाया है। परंतु अिस विषयमें दिये गये अपने शुरूके वचनोंको अुसने सरकारी तौर पर तिलांजलि दे दी है। रूसमें सत्ता पैसेके द्वारा कम और राजनीति तथा राज्यके दबावके द्वारा अधिक काम करती है। मुझे अैसी कोअी चीज दिखाअी नहीं देती, जो सत्ताके भ्रष्टाचारको अिस विषयमें सिद्ध किये गये सारे लाभोंका अंत करनेसे रोक सके।

अुदाहरणार्थ, हिंसाकी बात ली जाय तो वह अमरीकाकी अपेक्षा सोवियट रूसमें बेशक अपनी ही प्रजाके प्रति अधिक मात्रामें की जाती है। दोनोंने दूसरे महायुद्धमें भाग लिया था। दोनों अेक और युद्धकी धमकी दे रहे हैं। परन्तु अितना मैं कहूंगा कि दोनोंमें अमरीका अपनी रीति-नीतिमें नहीं तो व्यवहारमें जरूर युद्धका अधिक अिच्छुक है। सौभाग्यसे अणुबम दोनों देशोंको अेक-दूसरेके खिलाफ लड़नेसे रोक रहा

मालूम होता है। फिर भी अमरीकामें अब तक रूसकी तरह नजरबन्दी कैम्प और गुलामी बेगार नहीं है। अमरीकी सरकारने अभी तक जान-बूझकर लाखों किसानोंको — या बेशक अेक भी किसानको — भूखों नहीं मारा है। गहरे सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन जल्दी जल्दी करनेके लिअे साम्यवादके दबावका अनिवार्य परिणाम जबरदस्ती और हिंसाका रूप लेता है। परन्तु पूंजीवाद खास तौर पर काली जातियों और राष्ट्रोंके प्रति हिंसाका अपराधी रहा है। अमरीकाने सोवियट रूसके आरंभिक कालमें यानी १९१८ में अुसके खिलाफ हिंसाका अुपयोग किया था।

साम्यवादके पुजारी संगठनके बड़े आकारके अुतने ही भक्त हैं जितने पूंजीपति। चीनी साम्यवाद भिन्न होगा, मगर अुसका आरंभ हुअे अितना थोड़ा समय हुआ है कि अभी अुसके अुदाहरणसे सही निर्णय करनेका कोअी आधार नहीं मिलता। साम्यवाद यथार्थ रूपमें अिस विचारसे घृणा करता है कि जैसा साध्य हो वैसे ही अुसके साधन भी होने चाहिये।

साम्यवादी सदाचार

साम्यवादी सदाचार अपने ढंगका निराला ही है। अुसका अुन नैतिक सिद्धान्तोंसे कोअी संबंध नहीं है, जो संसारमें आज माने जाते हैं और पूंजीवाद या अुद्योगवादके जन्मसे बहुत पहलेसे माने जाते रहे हैं। सदाचारकी लेनिनकी परिभाषा यह थी : "सदाचार वह है जो पुराने शोषक समाजको नष्ट करनेमें और सारे श्रमजीवियोंको अुन मजदूरोंके पक्षमें, जो अेक नये साम्यवादी समाजका निर्माण कर रहे हैं, अेक करनेमें मदद दे सके।" और अखिल रूसी युवक-कांग्रेससे अुसने यह कहा था "हमारे लिअे सदाचार गरीबोंके वर्गयुद्धके हितोंकी तुलनामें बिलकुल गौण वस्तु है।" अुसने यह भी लिखा था : "हमें चालाकी, धोखाबाजी, कानून-भंग तथा सत्य न बोलने और सत्यको छिपानेके लिअे सदा तैयार रहना चाहिये।" अुसने यह भी कहा था : "तानाशाहीकी शास्त्रीय कल्पनाका अर्थ वह सत्ता है, जिसका आधार किसी कानूनकी

सीमामें न रहनेवाली हिंसा है। . . . तानाशाहीका अर्थ वह सत्ता है, जो कानून पर नहीं बल्कि हिंसा पर निर्भर करती है।" स्टालिनने कहा था : "अेक कूटनीतिज्ञके शब्दोंका अुसके कर्मोंसे कोअी संबंध नहीं होना चाहिये, अन्यथा वह कूटनीतिज्ञता ही क्या हुअी? शब्द अेक चीज है, कर्म दूसरी। शब्द दुष्कर्मोंको छिपानेके लिअे आवरणका काम करते हैं। प्रामाणिक कूट-नीतिज्ञता अुतनी ही असंभव है जितना सूखा पानी या लोहेका काठ।"

वचनों और वक्तव्योंकी यथार्थताका यह विनाश मुझे लगता है कि मानव-विश्वास और स्वेच्छापूर्ण सहयोगको नष्ट कर देगा। मेरा विश्वास है कि ये दोनों अेक स्थायी समाजके लिअे जरूरी हैं। मेरे खयालसे अिसका परिणाम यह होगा कि सरकार और साम्यवादी दलके भीतर अनन्त षड्यंत्र, अरक्षितता, डर और सत्ताके लिअे भयंकर कशमकश बढ़ेगी। यह तो सारी भारतीय संस्कृति और बुद्ध तथा गांधीकी शिक्षाके सर्वथा विपरीत है।

पूंजीवादी सदाचार

परन्तु पूंजीवादके बारेमें भी कठोर बातें कही जा सकती हैं। कुल मिलाकर पूंजीवादी गोरी सरकारों और प्रजाओंने हिंसा और छलसे काम लिया है, सैकड़ों बार अपना वचन भंग किया है, काली कमजोर जातियोंका यथासंभव अधिकसे अधिक शोषण किया है, अुपदेश तो अुन्होंने लोकतंत्र और अीसाअियतका दिया है, परन्तु रंगीन जातियोंके साथ निरंकुशता, अत्याचार और बड़ी निर्दयताका व्यवहार किया है; और यह सब तिरस्कारकी या श्रेष्ठताकी भावनासे किया है।

कहा जा सकता है कि साम्यवादी कमसे कम अीमानदारीसे यह स्वीकार तो करते है कि वे अपने अुद्देश्योंकी पूर्तिके लिअे हिंसा, छल-कपट, विश्वासघात और आतंकसे काम लेनेको तैयार हैं और लेते भी हैं। परन्तु यह अुल्लेखनीय है कि साम्यवादियोंका भी प्रचार और आचरण परस्पर असंगत है। वे कहते है कि 'अुनका लक्ष्य लोकतंत्र, मजदूरोंका

शासन और वर्गविहीन समाज स्थापित करना है, परन्तु वास्तवमें वे अेक छोटेसे गुटका शासन चलाते हैं। अवश्य ही जिस तरीकेसे अुस गुटमें अेक स्थापित स्वार्थ बन जाता है, जो अपनी सत्तामें चिपके रहनेके लिअे कटिबद्ध रहता है।

सत्य यह है कि सत्ता पूंजीवादियों और साम्यवादियोंको, गोरी चमड़ीवालों और काली चमड़ीवालोंको — सभीको भ्रष्ट करती है। तोप-बन्दूकोंके आविष्कारसे पहले चंगेजखा और दूसरे अनेक काले निरंकुश शासक थे। सभी मानव-प्राणियों पर सत्ताका जहरीला असर होता है।

मैं अिन सब बातोंका अुल्लेख न्यायके खातिर कर रहा हूं। मैं अिस बातकी हिमायत करता हूं कि पूंजीवाद और साम्यवाद दोनोंको अस्वीकार करके गांधीजीका कार्यक्रम अपनाया जाय, ताकि विशाल सत्ताके केन्द्रित होनेके खतरे कमसे कम किये जा सके।

साम्यवाद और धर्म

जहां तक आध्यात्मिक अेकतामें श्रद्धा रखनेकी बात है, साम्यवाद तो धर्मको 'लोगोंकी अफीम' कहता है। अुसकी जीवन और अितिहास-सम्बन्धी कल्पना भौतिकवादी है। वह सारी धार्मिक संस्थाओंको अपने अधीन बना लेना चाहता है और आत्माके विश्वासको खंडित या नष्ट कर देना चाहता है।

अिस सम्बन्धमें, जैसा जॉन बीवर्सने बताया है, अुसकी अधिकृत स्थितिमें अनजाने ही कुछ विनोद भी मिल गया है। १९२६ के अप्रैलकी २७ से ३० तारीखके बीच हुअे धर्म-विरोधी प्रचार सम्बन्धी साम्यवादी पार्टीके सम्मेलनमें और रूसी साम्यवादी पार्टीकी केन्द्रीय समितिकी बैठकमें नीचेका प्रस्ताव स्वीकार किया गया था:

> "श्रमजीवियोंके दिमागमें मार्क्सवादी विज्ञानके बुनियादी सिद्धान्त भर देनेका मार्ग साफ और तैयार करनेके लिअे हम धर्मको अस्वीकार करते हैं।"

अुन्होंने धर्मकी व्याख्या भी अिस प्रकार की थी:

"धर्म-विरोधी प्रचारके विषय और पद्धतियोंकी व्याख्या करते समय यह याद रखना जरूरी है कि धर्मके आत्मलक्षी पहलू ये हैं:

(क) जीवन और विश्व-सम्बन्धी तत्त्वज्ञान; अर्थात् विश्वकी तरंगी कल्पनाओंकी अजीब प्रणाली, जिनका वास्तविकतासे मेल नहीं खाता और जो समकालीन विज्ञानके स्वीकृत तथ्योंसे विपरीत है।

(ख) अेक अनोखा आवेग और रहस्यमय भावना।

(ग) 'थोड़ी या बहुत सुसंगत व्यवहार-प्रणाली', जिसका बाह्य रूप आस्तिकोंकी 'धार्मिक पूजा या सम्प्रदाय' में व्यक्त होता है। (प्लेखानोव)

(घ) अेक सदाचारकी पद्धति . . . ।"

मार्क्सवादके साथ लेनिन और स्टालिनके विचार जोड़ दिये जायं, तो वह निश्चित ही 'जीवन और विश्वका अेक तत्त्वज्ञान' है। अनेक धर्मोंकी तरह अुसका आशय भी संपूर्ण जीवन और मानव-स्वभावको तथा अितिहासकी प्रक्रियाओंको समझाना है। वह अेक जागतिक दृष्टि है। वह अेक अैसा कारण है जिससे अितने लोग अुसकी ओर आकर्षित होते हैं; खास करके वे लोग जिन्होंने पुराने धर्मोंको छोड़ दिया है। किसी कल्पनाको 'तरंगी' कहना या नहीं, यह केवल अिस बात पर निर्भर करता है कि आप अुसे नापसन्द करते हैं या नहीं और आपकी धारणाओंसे वह फलित होती है या नहीं। धर्मका स्थान तर्कसे पहले आता है, क्योंकि वह मान्यताओं और धारणाओं पर विचार करता है; और विज्ञान तथा 'तथ्यों' का सम्बन्ध अुस वस्तुसे है जो तर्क और अवलोकनके क्षेत्रमें आती है—और अिन दोनोंका आधार भी धारणाओं पर है। अिसलिअे धर्मका विज्ञानके स्वीकृत तथ्योंके साथ 'मेल बैठना' जरूरी नहीं है। दोनोंके क्षेत्र अलग अलग हैं।

जो साम्यवादी लेखक सोवियट साहित्य और प्रारंभिक सोवियट युद्योगवादके वीरतापूर्ण संग्रामोंके बारेमें लिखते हैं, वे निश्चय ही आवेग और रहस्यमय भावनाकी भाषामें बात करते हैं, अुदाहरणार्थ, "बोल्शे-विज़मकी हर्षपूर्ण रोमांचक कथायें जिनमें जोश, अन्तर्दृष्टि और संकल्प-बल भरा है।" और अिससे कौन अिनकार कर सकता है कि मार्क्स और लेनिनकी बौद्धिक शब्दावलीके बावजूद अुनमें कितना प्रचंड भावनापूर्ण प्रेरक बल था?

और अिसे भी कौन अस्वीकार कर सकता है कि साम्यवादियोंकी "किसी हद तक अेक मुमगन व्यवहार-प्रणाली" है? साम्यवादी दलका प्रत्येक सदस्य अुसके लिअे प्रतिभाबद्ध होता है। साम्यवादियोंकी कवायदें, विशेष वार्षिकोत्सवोंके समारोह और लेनिनके समाधि-स्थलकी यात्रायें आदि अवश्य अेक प्रकारके धर्म-सम्प्रदाय या कर्मकाण्डका ही रूप हैं।

श्रमजीवियों, औद्योगिक कामगारों, सामान्य स्थितिके मजदूरों तथा पार्टीकी नीतिसे सम्बन्धित साम्यवादी अुल्लेख अक्सर अुतना ही तर्कहीन होता है, जितनी नाज़ियोंकी आर्यों सम्बन्धी बातचीत। साम्यवादके महान ग्रन्थ — मार्क्सका 'कैपिटल', अेंजल्सका 'अेण्टी-डुरहिंग' और लेनिन तथा स्टा-लिनकी रचनाअें — लगभग अुसी तरह श्रद्धासे पूजे जाते हैं जैसे पुराने धर्मोंके धर्मग्रंथ। साम्यवादके सिद्धान्तके ये प्रवर्तक साम्यवादियों द्वारा अुसी दृष्टिसे देखे जाते हैं, जिस दृष्टिसे अीसाअी लोग अपने सन्तोंको देखते हैं। 'लाल मोर्चा' जैसे अक्सर दोहराये जानेवाले नारे वैसे ही हैं, जैसे "अल्लाह अेक है और मुहम्मद अुसका रसूल है" यह अिस्लामी नारा या "अीसा रक्षा करता है" या "अीसाअी सैनिको, बढ़े चलो" का अीसाअी नारा। अेक दूरवर्ती ध्येयके रूपमें वर्गविहीन समाज अीसा-अियोंकी स्वर्गकी कल्पनासे बहुत भिन्न नहीं दिखाअी देता। धर्मोंकी तरह साम्यवाद या मार्क्सवाद अपने अनुयायियोंमें किसी विशेष हेतुका भाव, सत्यके सम्पूर्ण स्पष्टीकरणकी भावना और मानवके सत्यका अंश होनेका भान पैदा करता है। धर्मकी अुपरोक्त साम्यवादी व्याख्यासे प्रतीत होगा

कि साम्यवाद अपने अनुयायियोंके लिअे बहुत कुछ धर्म जैसा ही है। जिसे लौकिक धर्म या अैसा धर्म कह सकते हैं जिसका किसी अिन्द्रियातीत या आध्यात्मिक अेकतामें विश्वास नहीं होता। व्यक्तिगत रूपमें मेरा यह विचार है कि साम्यवादकी धारणाअें अितनी गहरी और अुसका कर्मकाण्ड शायद अभी अितना प्रभावशाली नहीं है जितना पुराने धर्मोंका है। परन्तु यह निर्णय करना मैं पाठकों पर ही छोड़ता हूं।

यदि साम्यवाद अपने अनुयायियोंके लिअे व्यावहारिक दृष्टिसे लगभग अेक धर्म जैसा हो, तो साम्यवाद द्वारा किया जानेवाला धर्मका निषेध सम्पूर्ण निषेध नहीं है। वह केवल पुराने धर्मोंके स्थान पर अपना अेक नया धर्म स्थापित करना चाहता है। वह अिसे 'मार्क्सवादी विज्ञानके बुनियादी सिद्धान्त' नाम देता है। लेकिन यह नाम शायद सर्वथा अुपयुक्त नहीं है या कमसे कम कड़ी बातको नरम शब्दोंमें कहने जैसा है। 'विज्ञान' की अपेक्षा 'विचारधारा' शब्द शायद अुसके लिअे अधिक अुपयुक्त होगा।*

सारी बातोंका सार यह निकलता है कि जहां साम्यवाद हिन्दुस्तानके सामने खड़े बड़े खतरोंमें से शायद पहले खतरेका सामना कर सके, वहां वह दूसरे खतरोंसे निपटनेकी पूंजीवादसे ज्यादा अच्छी क्षमता नहीं रखता दिखाअी देता। पूंजीवादकी तरह साम्यवादमें कोअी आत्म-संयमका सिद्धान्त नहीं है। साम्यवादके साथ जुड़े हुअे दूसरे खतरोंके कारण अुससे

---

* प्रकृति पर नियंत्रण और भविष्य पर नियंत्रण प्राप्त करनेकी तथा विज्ञानके साथ समन्वय साध कर किसी वस्तुके रहस्यको समझनेकी लालसा होना ठीक है और अुसकी तृप्ति होनी चाहिये। भारतके पास साम्यवादसे कहीं अधिक गहन दर्शनशास्त्र पहलेसे ही मौजूद हैं। वह पूंजीवाद और साम्यवाद दोनोंके प्रभावसे अलग रहकर विज्ञान और कुछ शिल्प-विज्ञानका अिस्तेमाल कर सकता है। अपनी पुस्तक 'कम्पास फॉर सिविलिज़ेशन' में मैंने अिन गहरी आवश्यकताओंके साथ आधुनिक विज्ञानका सम्बन्ध जोड़नेकी कोशिश की है।

मिलनेवाले लाभोंका हिसाब बराबर हो जाता है। आधुनिक समाजकी समस्याओंको हल करनेके लिये साम्यवाद काफी क्रान्तिकारी नहीं है। साम्यवादने पहलेकी प्रणालियोंके साथ अुसकी तुलना करें तो अुसने अैसे राष्ट्रीय समाज पैदा कर दिये हैं, जिनका स्वरूप भिन्न है, परन्तु जिनका मूलतत्त्व भिन्न नहीं है।

साम्यवाद और किसान

रूसमें साम्यवादी लोग किसान-मजदूरोंकी अेक लहर आने पर, किसानोंको जमीन देनेका वायदा करनेके बाद, सत्तारूढ़ हुअे। अुन्होंने भूस्वामियोंसे जमीन छीनकर किसानोंको जरूर दी। फिर अुनकी सत्ताके स्थिर हो जानेके बाद साम्यवादियोंने किसानोंसे जबरदस्ती वह जमीन छीन ली और अुन पर सामूहिक खेती लाद दी। यह व्यवहार मार्क्स-वादी सिद्धान्तके अनुसार ही था। मार्क्स और लेनिन दोनोंको छोटे पैमानेके संगठन और किसानोंकी जीवन-पद्धतिके प्रति तिरस्कार था और अुनका विश्वास था कि खेतीका अुद्योगीकरण अवश्य होना चाहिये। मार्क्सने 'ग्रामीण जीवनकी मूढ़ता' के बारेमें लिखा। अुनके जैसी शहरी मनोवृत्ति यह नहीं समझ सकती कि धरती जीवित प्राणियोंका अेक समूह है और जीवित प्राणियोंका यांत्रिक क्रियाओं और मशीनोंके द्वारा सफलतापूर्वक नियमन नहीं किया जा सकता। अैसा व्यवहार करनेसे जमीन गुणमें घटिया हो जाती है और अन्तमें वह काफी मात्रामें अच्छी खुराक पैदा करनेमें असफल रहती है।*

रूसमें अिस परिवर्तन पर तीव्र संघर्ष हुआ। और सरकारने जान-बूझकर अधिक सम्पन्न किसानोंमें से लगभग बीस लाखको भूखों मारकर मौतके घाट अुतार दिया, तब कहीं सामूहिक खेतीकी नअी नीति स्थापित हुअी। अिस परिवर्तनसे अभी तक रूसमें खेतीकी पैदावारकी समस्या हल नहीं हो पाअी है। अिसका कारण शायद कुछ हद तक तो यह है

* अिस विचारकी अधिक चर्चाके लिअे पांचवां परिच्छेद देखिये।

कि रूसकी बहुतसी जमीन पर बहुत थोड़ी वर्षा होती है और वह अुत्तरी ध्रुवके प्रदेशकी ठंडी हवाओंका शिकार बनी रहती है। दूसरा कारण यह भी मालूम होता है कि ट्रैक्टरोंकी बहुतायत होते हुअे भी किसान लोग जो जमीन अुनकी अपनी नहीं है अुस पर कड़ी मेहनत करनेको राजी नहीं होते। युगोस्लावियामें साम्यवादी सरकारने खेतीकी जमीनोंका सामूहीकरण करनेकी कोशिश की थी, परंतु अपनी सत्ताको कायम रखने भरके लिअे यह प्रयत्न अुसे छोड़ देना पड़ा। साम्यवादी चीनमें सरकारने भूस्वामियोंसे अुनकी लगभग सारी जमीन छीन ली और किसानोंको दे दी, जो अब तक किसानोंके ही पास है। वहां अधिकांश जमीन स्वेच्छासे बनी हुअी खेती सहकारी समितियों द्वारा जोती जाती है। अिससे चीनमें खेतीकी पैदावार काफी बढ़ गअी है। देखना यह है कि ये सहकारी समितियां वहां सफल होती हैं या नहीं। पिछले परिच्छेदमें जो कारण बताये गये हैं अुन्हें देखते हुअे मुझे अिसमें शंका होती है कि यह योजना सफल हो सकेगी। अभी तक हमें मालूम नहीं है कि रूसमें भी खेतीके सामूहीकरणके दूरवर्ती परिणाम क्या होंगे।

रूसमें अुद्योगीकरणकी गति

यह सही है कि रूसमें साम्यवादने आश्चर्यजनक गतिसे देशका अुद्योगीकरण कर दिया है; और चीनमें भी अैसा ही हो रहा मालूम होता है। लेकिन चूंकि अधिकांश विकास भारी अुद्योगोंमें हुआ है — जिससे अन्तमें मालके अुपभोक्ताओंको तुरन्त सहायता नहीं मिलती — अिसलिअे ज्यादातर रिपोर्टोंके अनुसार अधिक अन्न, वस्त्र और मकानोंके रूपमें जन-साधारणको बहुत थोड़ा लाभ हुआ है। आम लोगोंको मुख्यतः डॉक्टरी देखभाल, बीमारी और अपंगता सम्बन्धी राहतों, बेकारीसे सुरक्षितता, शिक्षा और दूसरी सामाजिक सेवाओंके रूपमें लाभ हुआ है। साथ ही व्यवस्थापकों और यंत्र-विशारदोंकी महत्त्वाकांक्षा खूब बढ़ गअी है। सम्भव है कि रूसमें भी, अिंग्लैंड और किसी हद तक अमरीकाकी तरह, भारी अुद्योगोंके लाभ मुख्यतः व्यवस्थापकों और यंत्र-विशारदोंका बना

शासक-समूह ही हजम कर ले और आम लोगों तक छन-छनाकर यह लाभ धीरे-धीरे ही पहुंचे। परन्तु जन-साधारणको वर्तमान लाभ भारी कीमत पर मिले हैं। अिसके लिअे वहा राक्षसी निर्दयता बरती गअी है, खास तौर पर खेतीमें अनेक बार अुत्पादन-सम्बन्धी घोर असफलतायें देखनी पड़ी हैं, विशाल पैमाने पर लोगोंसे बेगार ली गअी है, सारी अर्थ-व्यवस्थाके लिअे खतरा पैदा करनेवाले खिचाव और तनाव प्रजामें पैदा हुअे हैं और दूसरे राष्ट्रोंके लोगोंमें रूसी प्रजाकी नैतिक प्रतिष्ठा घटी है। भविष्यमें अिन लाभोंके लिअे दूसरी भी कीमतें चुकानी पड़ेंगी।

भारतमें साम्यवाद अपनाया जाय तो क्या शीघ्र अुद्योगीकरण होगा ही?

जो लोग अिस समय भारतमें सत्तारूढ़ हैं, वे जल्दी जल्दी देशका अुद्योगीकरण करना चाहते हैं। यह समझमें आने लायक बात है। क्या अिस कामको पूरा करनेके लिअे, दोषोंके होते हुअे भी, साम्यवादको अपनाना अुत्तम और अधिकसे अधिक निश्चित अुपाय होगा?

अुद्योगीकरण करनेमें पश्चिमके देशोंको डेढ़ सौ वर्ष या अुससे अधिक समय लगा। रूसने अुद्योगीकरणका अधिकतर काम चालीस सालमें पूरा कर लिया। पश्चिममें अुसकी धीमी गतिका कारण पूंजीवाद नहीं था, परन्तु यह था कि वहा यंत्रों और प्रक्रियाओंका आविष्कार करना पड़ा और अिससे पहले विज्ञानकी प्रगति करनी पड़ी। रूसकी तेज प्रगतिका बड़ा कारण यह था कि जिन यंत्रों और प्रक्रियाओंका पहले आविष्कार हो चुका था वे अुसे तैयार मिल गये और विज्ञानके बारेमें भी यही बात हुअी। जापानने पूंजीवादकी छत्रछायामें अुद्योगोंका विकास पश्चिमसे भी तेज गतिसे किया। क्योंकि जापानको पहलेसे विकसित विज्ञान, मशीनें और प्रक्रियायें तैयार मिल गअीं। जापानकी गति रूससे मन्द थी, क्योंकि अुसने रूससे बहुत पहले यह काम शुरू किया, जब विज्ञान और शिल्प-विज्ञानका अितना अधिक विकास नहीं हुआ था। जापानकी मन्द गतिका कारण यह भी था कि अुसकी प्राकृतिक साधन-

संपत्ति रूससे बहुत कम थी। अुसे अपनी जरूरतका प्रायः सारा कोयला, लोहा और कपास बाहरसे मंगाना पड़ता था। अुद्योगीकरणमें अेक और जरूरी बात, जो समय लेती है, वैज्ञानिकों, अिंजीनियरों, रसायनशास्त्रियों और दूसरे विशेषज्ञोंकी शिक्षा और तालीमकी होती है।

भारतको बड़े पैमाने पर अुद्योगीकरण करनेकी जरूरत रूसके बाद महसूस हुअी। चूंकि १९१७ के बाद, रूसके अिस दिशामें प्रबल प्रयत्न करनेके बाद, समग्र शिल्प-विज्ञानका अितना अधिक विकास हो गया है कि भारत अत्यंत पूर्णताको प्राप्त यंत्रों और प्रक्रियाओंको अपना कर बहुत लाभ अुठा सकता है और अिस बारेमें रूससे अधिक तेज प्रगति कर सकता है। भारतकी प्राकृतिक साधन-संपत्ति कदाचित् अितनी विशाल या अितनी पूर्ण नहीं है जितनी रूसकी है, परंतु जापानसे वह कहीं अधिक विशाल और विविध है। अिस सम्बन्धमें तुलनात्मक आंकड़े तो अुपलब्ध नहीं हैं, लेकिन मेरे खयालसे रूसने १९१७ में प्रबल वेगसे अपने यहां अुद्योगीकरण शुरू किया अुस समय अुसके पास जितने तालीम पाये हुअे वैज्ञानिक, अिंजीनियर वगैरा थे, बहुत संभव है भारतके पास अिस समय स्वतंत्र रूपमें भी और जनसंख्याके हिसाबसे भी अुनसे कहीं अधिक तालीम पाये हुअे वैज्ञानिक, अिंजीनियर, रसायनशास्त्री और दूसरे यंत्र-विशारद हों। भारतको पश्चिमसे भी कुछ आर्थिक और शिल्प-विज्ञान सम्बन्धी सहायता मिल सकती है, जो रूसको नही मिली थी।

अिन सब कारणोंसे मेरा खयाल है कि अगर भारत अुद्योगीकरण करने पर तुला हुआ हो, तो वह अुसमें वही गति ला सकता है जो सत्तारूढ़ लोग चाहते हैं। और यह काम वह साम्यवादको अपनाये बिना भी कर सकता है। भारतकी प्रगतिके लिअे साम्यवाद जरूरी नहीं है। यह बात अिस पुस्तकके अंतिम परिच्छेदमें और भी विस्तारसे समझाअी जायगी।

मेरे विचारसे भारत अधिकांश वांछित लाभ शायद रूस जैसी ही तेज गतिसे परंतु अुसकी अपेक्षा कही कम कष्ट-सहन, आर्थिक खर्च और

सामाजिक अुपद्रवका सामना किये बिना प्राप्त कर सकता है। भारतवर्ष स्वाधीनताके पहले ९ वर्षोंमें ही आलस्य और बाधक रीति-रिवाजों पर काबू पानेकी संकल्प-शक्ति और ताकत अपनेमें पैदा कर चुका है। शिक्षाके क्षेत्रमें गुणवत्ताकी दृष्टिसे अुसने बड़ी प्रगति की है। अुसने भूमि-सम्बन्धी कानूनोंमें और भूमिके स्वामित्वके सम्बन्धमें सुधार करनेके लिअे कुछ कदम अुठाये हैं। मुझे मालूम नहीं कि पैसेके लेनदेन और खेती-सम्बन्धी कर्जेके बारेमें क्या क्या सुधार हो चुके हैं। भारतने समाजको और खास तौर पर नौजवानोंको रचनात्मक कामोंमें लगानेके संकल्प और सामर्थ्यका परिचय दिया है। असफलताअें और भूलें तो अनेक हुअी हैं और बहुतोंको भारतकी अुन्नतिकी गति भी काफी तेज नहीं मालूम होती, परन्तु ये दोष तो समाजकी किसी भी प्रणालीमें होते ही हैं।

मेरे खयालसे भारतीय जनता गांधीजीके बताये हुअे मार्ग पर कायम रहकर दुनियाके साम्यवादी और गैर-साम्यवादी सभी राष्ट्रोंसे अधिक सम्मान प्राप्त कर सकेगी और स्वाभिमानका अधिक विकास करेगी। अगर वह शुद्ध पूंजीवाद या शुद्ध साम्यवादको अपनायेगी तो यह बात नहीं होगी। गांधीजीका मार्ग अपनानेसे मुझे विश्वास है कि बेकारी भी घटेगी, आम जनताके अन्न-वस्त्रमें तेजीके साथ वृद्धि होगी और वह यह महसूस करेगी कि सच्ची प्रगति हो रही है और आगे भी होती रहेगी।

साम्यवादका मूल्यांकन

१९१७ से लेकर १९५७ तकके अितिहासने यह बता दिया है कि कमसे कम रूसी साम्यवाद अेक अैसी आर्थिक और राजनीतिक प्रणाली सिद्ध हुआ है जिसमें टिकनेकी शक्ति है। परन्तु रूसमें, जहां जनसंख्या अन्न-अुत्पादनके साथ होड नहीं लगाती, जहां सुरक्षित जंगल अितने विशाल हैं और जहां कठोर तानाशाही शासन रहा है, यह प्रणाली टिकनेवाली साबित हुअी है, अिससे यह सिद्ध नहीं होता कि वह अन्यत्र भी स्थायी रूपसे टिकनेवाली साबित होगी। चीनी साम्यवाद

शायद सफल हो सकता है। परन्तु अभी हम निश्चित नही कह सकते। कुछ दिशाओंमें, जैसे अूपर कहा गया है, साम्यवादने बड़ी प्रगति की है। अन्य दिशाओंमें, जैसे अपने ही लोगों पर और अपने आश्रित राष्ट्रों पर बड़े पैमाने पर अत्याचार और हिंसा करके, वह भयंकर रूपसे पीछे चला गया है। कओी वातोंमें वह पूंजीवादसे न तो अच्छा है, न बुरा। पूंजीवाद और साम्यवाद दोनों मान लेते हैं कि भौतिक पदार्थोंका अुत्पादन और अुपभोग जीवन और सभ्यताका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण लक्ष्य है। जितने दिन पूंजीवाद टिका है अुतने दिन साम्यवाद टिक सकेगा या नहीं, यह कोओी नहीं कह सकता। मुझे विश्वास है कि अुसमें परिवर्तन होगा।

जैसा अूपर वताया गया है, साम्यवाद और पूंजीवादमें अितनी समानतायें हैं कि मेरे खयालसे साम्यवाद सभ्यता और संस्कृतिके अस्तित्वके लिअे अुतना ही वड़ा खतरा है जितना पूंजीवाद है। मानव-जाति और मानव-संस्कृतिके वारेमें दीर्घ दृष्टिसे विचार किया जाय, तो मुझे पूंजीवाद और साम्यवाद दोनों ही महान भूलें मालूम होती है। अिसलिअे मेरी समझमें किसी बुद्धिमान भारतीयके सामने दोनोंमें से अेकका चुनाव करनेका सवाल हो, तो बुद्धिमत्ता अिसीमें है कि वह दोनोंको अस्वीकार कर दे। क्योंकि अुसके सामने दो तीन और विकल्प है।

मैंने पूंजीवादके वनिस्वत साम्यवादकी अधिक चर्चा की है। यह अनिवार्य है। क्योंकि दोनोंमें से पूंजीवाद अधिक पुराना है, अिसलिअे अुसने अपना सच्चा स्वरूप और परिणाम अधिक पूरे रूपमें प्रकट कर दिये हैं। अिसलिअे अुसके मूल्योंके वारेमें कोओी निर्णय करना अधिक आसान है। साम्यवादके अनेक गूढ़ार्थ अभी तक प्रगट नहीं हुअे है। अिस कारण अुसके मूल्यांकनके लिअे जरूरी है कि अुसकी संभावनाओंकी तुलना और तौल किया जाय और अुसके सिद्धान्तोंकी अधिक पूर्ण रूपसे परीक्षा की जाय।

४

समाजवाद

साम्यवाद और समाजवादके बीचका सैद्धान्तिक अन्तर स्पष्ट नहीं है। दोनोंका सम्बन्ध मुख्यत राजनीति, अर्थशास्त्र और सामाजिक प्रक्रियाओंके साथ है। अुनका विकास कअी यूरोपियनोंकी विचारणासे हुआ था, परतु अिस सिद्धान्तका सबसे स्पष्ट और पूर्ण निरूपण पहले-पहल मार्क्स और अेंजल्सकी रचनाओंमें हुआ। रूसमें 'साम्यवाद' शब्दका और अुसके विशेषणोंका साम्यवादी दलके सिवा राज्य-सविधानमें या अन्य सरकारी दस्तावेजोंमें अुपयोग नही किया गया है। सरकारका अधिकृत नाम साम्यवादी रूस नहीं है। अुसका नाम है समाजवादी सोवियट गणतत्रोंका सघ। रूसी लोग कहते हैं कि साम्यवादकी स्थापना तभी होगी जब वर्ग-विहीन समाज स्थापित हो जायगा। अुससे पहले सब-कुछ समाजवाद है।

परतु मेरी मान्यता है कि रूसके सिवा अन्यत्र सामान्य कल्पना यह है कि साम्यवादियोंका यह विश्वास है कि सामाजिक क्रान्तिमें हिंसाका प्रयोग होना ही चाहिये और क्रान्तिकारी सरकारके लिअे धोखेबाजी, विश्वासघात और विशाल पैमाने पर हिंसा न केवल अुचित ही है, बल्कि अनिवार्य और आवश्यक भी है। वे मानते हैं कि वर्ग-विहीन समाजकी स्थापनाके सग्राममें अमर्यादित हिंसा और धोखेबाजीका अुपयोग सर्वथा अुचित है।

अिसके विपरीत, समाजवादियोंका यह विश्वास है कि मूलभूत सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन शान्तिपूर्वक समझा-बुझाकर ही हो सकते हैं और होने चाहिये, और समाजवादी अपने वक्तव्यों और कार्योंमें सत्यका अुपयोग करनेके लिअे अपनेको वचन-बद्ध समझते हैं। 'जैसा फेनर ब्रॉकवेने कहा है, "समाजवादी आदर्श भ्रातृभाव, सेवा, पारस्परिक

विश्वास, स्वतंत्रता और व्यक्तित्वका आदर प्रगट करता है।" मैक्स ओीस्टमैनने समाजवादको अैसा समाज बताया है, जिसमें स्पर्धाकी भावना पर पारस्परिक सहायताकी भावनाका प्रभुत्व होता है। अन्य बातोंमें समाजवादी अुद्देश्य साम्यवादके अुद्देश्योंसे मिलते-जुलते हैं। दोनोंका प्रधान अुद्देश्य वर्ग-विहीन समाजकी स्थापना है;. और समाजवादियोंके लिअे अिसका मुख्य साधन अुत्पादनके साधनोंका स्वामित्व राज्यके हाथोंमें शान्तिपूर्वक सौंप देना है। यहां मैं समाजवाद शब्दका अिसी अर्थमें प्रयोग करूंगा।

अिंग्लैण्डका समाजवाद मार्क्सके अधिकतर प्रमाणभूत माने जानेवाले कट्टर सिद्धान्तोंसे बहुत दूर तक अलग हो गया है। भारतमें प्रजा-समाजवादी पार्टी औद्योगिक कारखानों पर राज्यके स्वामित्वकी हिमायत करती है, फिर भी वह विकेन्द्रित ग्राम-जीवनमें, अहिंसामें और प्रजातंत्रमें विश्वास रखती है। गांधीजी भी यह मानते थे कि राष्ट्रके लिअे जो भी बड़े अुद्योग आवश्यक हों अुन पर राज्यका स्वामित्व होना चाहिये तथा राज्य द्वारा अुनका संचालन खानगी नफेके लिअे नहीं, परन्तु सारी प्रजाके हितके लिअे होना चाहिये। गांधीजी और मार्क्स दोनोंको गरीबोंके दुःखों और अुनके साथ होनेवाले अन्यायोंसे गहरी वेदना हुअी थी। मार्क्समें अिसके फलस्वरूप सत्ताधारियोंके प्रति क्रोध और घृणा पैदा हुअी। गांधीजीके हृदयमें मनुष्यमात्रके लिअे करुणा और प्रेम पैदा हुअे। मार्क्स क्रोधी मनुष्य था; गांधीजी प्रेमल थे। अन्यायोंको दूर करनेके लिअे मार्क्सने हिंसाकी हिमायत की; गांधीजीने अहिंसक प्रतिकार और प्रेमपूर्ण हृदय-परिवर्तनकी हिमायत की और अुस पर अमल किया। मेरे विचारसे मार्क्सने अपने जीवन-कालमें जितनी सफलता प्राप्त की अुसकी अपेक्षा गांधीजीने अपने जीवन-कालमें अधिक सफलता प्राप्त की। और मेरे विचारसे भविष्यमें गांधीजीके विचारों और कार्यका अधिक फल मानव-जातिको मिलेगा और वे मानव-समाजके लिअे मार्क्सकी विचारधारासे अधिक बड़ा आशीर्वाद सिद्ध होंगे।

भारतके लिअे समाजवाद क्या कर सकता है?

चूंकि समाजवादका अर्थ साधन-सम्पत्ति और अुत्पादनके साधनोंका विशाल पैमाने पर किया जानेवाला संगठन ही नहीं बल्कि राष्ट्रव्यापी संगठन है, अिसलिअे मुझे भय है कि समाजवादमें भी अिस प्रकारके सत्ताके केन्द्रीकरण और नौकरशाहीकी नाशकारी बरबादियोंका अुतना ही दूषित प्रभाव होगा जितना साम्यवादमें होता है — अर्थात् अधिक लोग गरीबोंकी पीठ पर सवार होंगे। और यद्यपि मैं यह महसूस करता हूं कि राज्य द्वारा बड़े कारखानोंका विकास और संचालन करना हो तो नियोजनकी आवश्यकता है, फिर भी जीवनको केवल मुट्ठीभर बड़े आदमियोंके बनाये हुअे अेक ही सांचेमें ढालना मानव-बुद्धि और आत्माको कुंठित करनेवाला सिद्ध हो सकता है। अिस खतरेको स्वीकार करना ही चाहिये और किसी न किसी तरह अुससे रक्षा करनी चाहिये।

परन्तु यदि अैसे केन्द्रीकरणको कुछ ही बातों तक सीमित रखा जाय तो खतरा बहुत कम हो जायगा; और मुझे आशा है कि बाकीके खतरोंका सामना समय समय पर सामूहिक सत्याग्रह द्वारा किया जा सकता है। जहां तक अैनिक हिंसाके खतरोंकी बात है, अुपरोक्त व्याख्यावाले समाजवादमें साम्यवादकी अपेक्षा वे खतरे निश्चित रूपसे कम होंगे। रही बात आन्तर-राष्ट्रीय युद्धकी, सो समाजवादियोंके शान्तिके पक्षमें कुछ भी दावे हों, सारे यूरोप और ग्रेट ब्रिटेनमें समाजवादी या अर्ध-समाजवादी सरकारों और पार्टियोंकी कारगुजारी यह रही है कि अुन्होंने युद्धका अुतना ही अुत्साहपूर्वक समर्थन किया है जितना किसी भी साम्यवादी या पूंजीपतिने किया है। राज्य पर अुनके जोर देनेसे यह अनिवार्य हो जाता है। मुझे आशा है कि भारतीय समाजवादी अिस कमजोरीसे बच सकेंगे। अिस निबंधके शुरूमें जिन अन्य पांच बड़े खतरोंका अुल्लेख किया गया है वे और शायद पूंजीवादके तरह हानिकारक परिणाम भी कायम रहेंगे और समाजवाद अुनका अुपाय पूंजीवाद या साम्यवादकी अपेक्षा ज्यादा अच्छा नहीं कर सकेगा।

समाजवादका समझदारीभरा प्रयोग

जिन अंगों पर राज्यके स्वामित्व, व्यवस्था या नियंत्रणका नियम समझदारीके साथ लागू किया जा सकता है वे ये हैं:

(१) पानीके समस्त साधनोंकी रक्षा और नियंत्रण। अिन साधनोंमें नदियां, झीलें, बांध, सिंचाअीके साधन, जलागार, जमीनके भीतरका पानी (कुअें और पाताल-कुअें) और नहरें आती हैं। अिनके साथ ही जंगलोंकी रक्षा और नियंत्रण अिस तरह हो कि अुनकी पैदावार हमेशा अेकसी बनी रहे।

(२) वन-अुद्योगोंकी व्यवस्थाकी स्थापना और देखभाल। वन-अुत्पादनसे संबंधित सारे अुद्योगोंका भौगोलिक अेकीकरण अनिवार्य बनाना।

(३) किसी हद तक अमेरिकन भूमि-संरक्षण संस्थाकी पद्धतिसे जमीनकी रक्षा करना। अिसके लिअे लोक-शिक्षणकी व्यवस्था की जाय और किसानोंको खेतीकी अुचित पद्धतियां अपनानेके लिअे प्रोत्साहन दिया जाय। ये पद्धतियां हैं: अूंची-नीची भूमिकी जुताअी, टेकरियों पर स्थित समतल भूमिमें खेती, जमीनकी पतली लम्बी पट्टियोंमें खेती, कम्पोस्ट खाद बनाना, अैसा खाद बनानेमें मैलेका अुपयोग, अुचित ढंगसे बदल बदलकर फसलें पैदा करना, बीजका अधिक सावधानीसे चुनाव करना, अींधनके लिअे जल्दी बढ़नेवाले वृक्ष लगाना, जंगलोंके भीतर या आसपास गाय-भैंसों या बकरियोंके चरने पर पूरा प्रतिबन्ध लगाना, आदि।

(४) खास तौर पर पहाड़ी ढालों पर और सड़कोंके किनारे किनारे फलोंके अधिक वृक्ष लगाना और दूसरी फसलें देनेवाले वृक्ष लगाना।

(५) रेलें।

(६) सड़कें—जिनके बनाने व मरम्मत करनेका राष्ट्रव्यापी स्तर हो और जिनकी जिम्मेदारी और खर्चका बंटवारा राष्ट्र,

राज्यों, जिलों और नगरपालिकाओंके बीच हो। अेक सिरेसे दूसरे सिरे तक जानेवाली कुछ लम्बी सड़कोंकी रक्षा और देखरेखका पूरा भार केन्द्रीय सरकार पर हो।

(७) तमाम कोयलेकी जमीनों और जमीनके भीतर पाये जानेवाले पेट्रोलका स्वामित्व। अिनके संचालनकी व्यवस्था खानगी लोगोंको पट्टे पर दी जा सकती है।

(८) टेलीफोन, तार और डाककी व्यवस्था।

(९) राज्य सरकारों या नगरपालिकाओंके स्वामित्वमें और अुन्हींके द्वारा चलाये जानेवाले विद्युत्-शक्ति पैदा करनेवाले कारखाने और अुन्हें जगह जगह पहुचानेवाली लाअिनें।

(१०) सार्वजनिक स्वास्थ्यके कुछ अुपाय, जैसे मलेरिया-नियंत्रण और छूतकी बीमारियोंका नियंत्रण। खुराक पर होनेवाली अैसी यांत्रिक अथवा रासायनिक प्रक्रियाओंको रोकना जो खाद्य-पदार्थोंको निर्जीव बनाती हैं और अुनके पोषक तत्त्वोंको नष्ट करती हैं, और खाद्य-पदार्थोंमें हानिकारक रक्षक तत्त्वों या दूसरे रासायनिक पदार्थोंकी मिलावटको रोकना।

चीनमें नदियोंके आसपासकी जमीन और पहाड़ी जंगलोंके नियंत्रणकी दीर्घदृष्टि न होनेके कारण ही पिछली कअी सदियों तक भयंकर बाढ़ें आअीं, भारी बरबादी और प्राणहानि हुअी और देशकी प्रजा बड़ी हद तक गरीब रही। अिस प्रकारका नियंत्रण न रहनेसे पश्चिमी अेशियामें भी वैसा ही नतीजा हुआ। अमरीकामें भी अिस तरहकी गलतियोंके अैसे परिणाम जल्दी ही आनेवाले हैं, अगर अुन्हें तुरन्त रोका न गया। प्रसिद्ध टी० वी० अे० योजना अिस तरहकी हानियोंको रोकनेका अेक प्रारंभिक प्रयत्न है। भारत चाहे तो टी० वी० अे० योजना से पाठ लेकर अुससे ज्यादा अच्छी योजना बना सकता है। भारतके लिअे अितना समाजवाद जरूरी है। भारतीय जनता भारतकी भूमि और पानीकी अधिक हानिका खतरा नहीं अुठा सकती।

जहां तक जमीनकी रक्षाके अुपायोंका सम्बन्ध है, वे अवश्य कृषिके वर्तमान विभागोंकी प्रवृत्तियोंके साथ जुड़े हुअे हैं और फिर भी कुछ भिन्न हैं, जैसे किसी कारखानेमें अुत्पादन और संभालकी क्रियायें भिन्न भिन्न होती हैं। प्राकृतिक साधन-सम्पत्तिकी रक्षाके सम्बन्धमें व्यक्तिके हितोंसे समाजके हित अवश्य ही अधिक महत्त्वपूर्ण हैं।

राज्यके स्वामित्व और नियंत्रणके अधिकांश विषय अैसे हैं, जो अपने स्वभावसे ही अेकाधिकारके ढंगके हैं। अिनका सफल संचालन बहुत बड़े पैमाने पर ही किया जा सकता है। यह सच है कि अमरीकामें रेल, तार, टेलीफोन, कोयले और पेट्रोलकी जमीनें और बिजलीघर खानगी कम्पनियोंके अधिकारमें हैं और वे ही वैज्ञानिक दक्षताके साथ अुनका संचालन भी करती हैं। परन्तु अिससे समाजको अकसर बड़ा नुकसान अुठाना पड़ता है। टेलीफोन और तारके सिवा समाजको नुकसान पहुंचाकर खानगी मालिकों द्वारा अिस प्रकार जो दौलत कमाअी जाती है वह निन्दनीय है। अिन अुद्योगोंमें अेकाधिकारवाली खानगी कंपनियां वैज्ञानिक और टेकनिकल कुशलतासे काम कर सकती हैं, अिसलिअे भारत अुन्हें अिन अुद्योगोंका संचालन करने दे यह ठीक नहीं। सौभाग्यसे भारतीय राष्ट्रका पहले ही अपने रेल, तार और डाक-विभाग पर अधिकार है। ब्रिटेन और स्वीडनकी रेडियो और टेलिवीजन-नियंत्रणकी प्रणाली बुद्धिमत्तापूर्ण मालूम होती है, यद्यपि गैर-सरकारी लोगोंके अधिकार और संचालनवाले समाचारपत्रोंकी तरह गैर-सरकारी ब्राडकास्टिंगकी व्यवस्था भी अधिक मात्रामें होनी चाहिये।

५

भारत-सरकारका कार्यक्रम

जैसा मैंने अिस निबन्धके शुरूमें कहा है, हम किसी साफ पट्टी पर लिखना आरम्भ नहीं कर रहे हैं। अब (१९५७ में) भारतमें पूंजीवादी अुद्योगवाद स्थापित हो चुका है, मजबूतीसे जम गया है और बढ़ रहा है। सरकार द्वारा स्थापित, सचालित या नियन्त्रित तथा अुसके स्वामित्व और देखरेखमें काफी अुद्योग चल रहे हैं। अिनमें यातायात, बांधों, बिजली पैदा करनेवाले कारखानों और सिंचाअीकी नहरोंका समावेश होता है। सरकार वैसे दूसरे काम भी चला रही है और नये कामोंकी योजना भी बना रही है।

गांधीजीके कार्यक्रमकी चर्चा आरंभ करनेसे पहले हम भारत-सरकारके कार्यक्रम पर विचार कर लें। वह पूंजीवाद, समाजवाद और अेक अंश तक गांधीजीके कार्यक्रमका दिलचस्प मिश्रण है। वह अेक प्रबल और साहसपूर्ण प्रयत्न है।

यहां पहली या दूसरी पचवर्षीय योजनाओंकी पूरी रूपरेखा या अुनके अन्तर्गत हाथमें लिये जानेवाले कार्योंका क्रम देनेकी कोशिश न करके कार्यक्रमको जैसा मैं समझता हूं अुसके अनुसार अुसका सार लगभग अिस प्रकार दिया जा सकता है

१. नीचेके अुपायों द्वारा खेतीका अुत्पादन बढ़ाना :

(क) बड़े बड़े बांध बांधना और सिंचाअीके काम खोलना;

(ख) सेवार वगैरासे भरी जमीनको साफ करनेके लिये ट्रेक्टर और खेतीकी दूसरी भारी मशीनें काममें लेना और जहां संभव हो वहां दूसरी जमीनोंमें खेती करना;

(ग) रासायनिक खादोंका प्रयोग बढ़ाना,

(घ) अच्छे बीजोंके चुनावको प्रोत्साहन देना;

(ङ) बदल बदल कर फसलें पैदा करनेकी सुधरी हुअी पद्धतिको प्रोत्साहन देना;

(च) कम्पोस्ट खाद बनानेको प्रोत्साहन देना;

(छ) जमीनका कटाव रोकना;

(ज) पशुओंकी नसल और खुराक सुधारना तथा दूधपूर्तिकी व्यवस्थामें सुधार करना;

(झ) कानून द्वारा भूमिके स्वामित्व, भूमिके वितरण और भूमिकरमें सुधार करना;

(ञ) खेती-सम्बंधी तकावी, कर्ज आदि देनेकी पद्धतिमें कानून द्वारा सुधार करना;

२. बड़े पैमाने पर अुद्योगीकरण करना, जिससे :

(क) देहाती लोगोंको कारखानों और मिलोंकी तरफ खींचकर गांवोंकी बेकारी और अर्ध-बेकारीको मिटाया जा सके और अिस प्रकार जमीन परसे जनसंख्याका दबाव कम किया जा सके;

(ख) शिक्षित नौजवानोंके लिअे कामकाज मुहैया किया जा सके;

(ग) आम लोगोंकी क्रयशक्ति बढ़ाअी जा सके;

(घ) लोगोंके लिअे अुपलब्ध कपड़ा, मकान और खुराक, यातायात, आराम तथा सुख-सुविधायें बढ़ाअी जा सकें;

(ङ) दूसरे देशोंसे मंगाअी जानेवाली खुराक और मशीनोंकी कीमत चुकानेके लिअे निर्यातका माल पैदा किया जा सके;

३. अुद्योगों, रेलवे यातायात और रोशनीके लिअे जल-विद्युत् शक्तिका विकास करना।

४. भारतके अपने ही खाद्य-अुत्पादनके अतिरिक्त जो अधिक खुराक चाहिये अुसे बाहरसे मंगाना।

५ जमीन पर जनसंख्याका दबाव घटाने और प्रत्येक भारतवासीको पूरा भोजन दे सकनेके लिअे संतति-नियमन अथवा परिवार-नियोजनको बढ़ावा देना।

६ सफाअी और दवा-दारूकी व्यवस्थामें सुधार करना।

हम अपनी चर्चामें अिन बातों पर विस्तारसे विचार करेंगे।

बड़े बड़े बांध और सिंचाअीकी नहरें

विस्तृत नवीन भूमिमें खुराक पैदा करनेके लिअे सिंचाअीके साधन मुहैया करनेमें भारतके बड़े बड़े बांधोंने आश्चर्यजनक काम किया है। और ज्यादा बांध बांधकर सरकार बुद्धिमानी ही कर रही है। भारतमें सिंचाअीकी चार करोड़ अस्सी लाख (लगभग ५ करोड़) अेकड़ जमीन है। यह संसारके अन्य किसी भी देशसे अधिक है। यह असकी कुल खेतीकी जमीनका १९ प्रतिशत है। भारतमें ६० हजार मीलसे अधिक सिंचाअीकी नहरें हैं और वे नदियोंका ६ प्रतिशत पानी काममें लेती हैं। यह सब अच्छी बात है।

परन्तु हमें अिस खतरेको याद रखना होगा कि ये बांध लगभग पैंतीस वर्षके बाद संभवतः मिट्टीसे भर जायेंगे। जैसा मैंने अूपर कहा, संयुक्त राज्य अमरीकाके सैकड़ों जल-भण्डारोंका यही हाल हुआ है। जापानके कृत्रिम जल-भंडारोंकी १९५० में जांच की गअी थी। वहां ५४ में से २४ जल-भण्डार आधेसे अधिक मिट्टीसे भर गये थे। अठारह सालमें अिन चौबीस जल-भण्डारोंकी पानी संग्रह करनेकी क्षमता औसतन् ७३ प्रतिशत घट गअी थी। पुअर्टो रीको और लंकामें भी यही बात हुअी। और यदि सिंचाअीकी जमीन पर पानी नालियों द्वारा अच्छी तरह बहता न रहे और वह सूख न जाय, तो जमीनमें सिंचाअीका पानी भरे रहनेसे क्षार जम सकते हैं और वह बेकार बन सकती है। अिस प्रकार सिंचाअीके लिअे जमीनको प्राकृतिक या कृत्रिम रीतिसे सुखानेकी और सतत सावधानी और देखरेख रखनेकी जरूरत होती है। अिसके अलावा, बांधोंसे न तो बांधके अूपरके भागकी जमीनका कटाव रुकता या नियमित होता है और न बांधके नीचे पानीसे होनेवाला जमीनका कटाव रुकता या नियंत्रित होता है।

जल-भण्डारोंमें मिट्टी न भर जाये अिसके लिअे बांधोंके अूपरके भागमें स्थित सारी गिरिमालामें जंगलोंका काफी विकास करना चाहिये तथा जमीन-कटावको रोकनेके अन्य अुपायोंका भी विकास करना चाहिये।

अधिक अच्छी खेती

जैसा कि सब जानते हैं, गांधीजीकी मुख्य दिलचस्पी किसानोंकी गरीबी दूर करनेमें थी। यहां अिस बातको अलग रख दें कि वे किन तरीकोंको पसन्द करते और पहले किन बातों पर जोर देते; फिर भी मै मानता हूं कि सरकारी या खानगी संस्थाओंके अुन प्रयत्नोंका वे समर्थन करते, और अुनके अनुयायियोंको भी अैसे प्रयत्नोंका समर्थन करना चाहिये, जिनसे खेतीकी पैदावारकी — भले खाद्यान्नकी हो या कपास और सन जैसी फसलोंकी — निश्चित और स्थायी तौर पर बढ़ती हो। शर्त यही है कि ये प्रयत्न ग्रामीणोंके लिअे न करके ग्रामीणोंके **साथ** किये जायं और ग्रामीणोंको स्वावलम्बी बनानेमें सहायक हों तथा जहां तक संभव हो अिस काममें अैसे स्वदेशी औजार काममें लिये जायं जिन्हें किसान खरीदनेकी शक्ति रखते हों। अिसलिअे मेरा विश्वास है कि गांधीजीके अनुयायियोंको अिन प्रवृत्तियोंका समर्थन करना चाहिये। अच्छी जातिके बीज पसन्द किये जायं, बारी बारीसे ज्यादा अच्छी फसलें अुगाअी जायं, कम्पोस्ट खाद अधिक मात्रामें और अधिक कुशलतापूर्वक तैयार किया जाय, धरतीका कटाव रोकनेके अुपायोंको प्रोत्साहन दिया जाय, मवेशियोंकी नसल सुधारी जाय तथा अुनका पालन-पोषण ज्यादा अच्छे ढंगसे किया जाय — और अिसमें अत्यन्त घटिया जानवरों द्वारा अुत्पत्ति न होने दी जाय — और यथासंभव अलग अलग तरहकी खेतीको प्रोत्साहन दिया जाय। विविध प्रकारकी खेतीमें गोपालन पर अधिक जोर देनेका समावेश हो जाता है।

लक्ष्य: प्रति अेकड़ अधिक अुत्पादन

भारतका जोर मशीनों द्वारा प्रति व्यक्ति अुत्पादन बढ़ाने पर अुतना नहीं होना चाहिये जितना घनी खेतीके जरिये प्रति अेकड़ अुत्पादन बढ़ाने

पर होना चाहिये। संसारभरके कृषि-सम्बंधी आंकड़े यह सिद्ध करते हैं कि प्रति अेकड़ अन्नकी अधिकसे अधिक मात्रा मशीनों द्वारा की जानेवाली खेतीमें नहीं पैदा होती, परन्तु हाथके कुशल श्रमसे पैदा होती है। भारतका लक्ष्य प्रति अेकड़ अधिक अुत्पादन ही होना चाहिये, क्योंकि ज्यादासे ज्यादा कुल अुत्पादन अिसी तरह संभव हो सकता है।

खेतीके काममें काफी मशीनों और रासायनिक खादोंका अुपयोग करने पर भी संयुक्त राज्य अमरीकामें गेहूं या दूसरी फसलोंके अुत्पादनका प्रति अेकड़ औसत बहुत अूंचा नहीं है। १९४०-४४ के वर्षोंमें गेहूंका औसत अुत्पादन संयुक्त राज्य अमरीकामें प्रति अेकड़ १७.१ बुशल था; १९४४ से १९५३ के अुत्पादनका औसत १६.८ बुशल प्रति अेकड़ था। युद्धसे पहले १९३५-३९ में यह औसत सिर्फ १३.२ बुशल था। ये आंकड़े अिंग्लैंड और पश्चिम यूरोपके प्रति अेकड़ गेहूंके अुत्पादनकी अपेक्षा कहीं ज्यादा नीचे हैं। संयुक्त राष्ट्रसंघकी खुराक और खेती-सम्बंधी संस्थाके खुराक और खेतीके आंकड़ोंवाली १९५५ की वार्षिक पुस्तकके अनुसार १९५२-५३ में गेहूंका प्रति अेकड़ अुत्पादन डेन्मार्कमें ६०.५ बुशल था, हॉलैंडमें ५९.३ बुशल, बेल्जियममें ५१.३ बुशल, अिंग्लैंडमें ४२.४ बुशल, पश्चिम जर्मनीमें ४१.० बुशल और न्यूझीलैंडमें ३५.५ बुशल। जापान और चीन (कमसे कम चीनी साम्यवादी क्रान्ति तक) लगभग पूरी तरहसे हाथ-मेहनत पर निर्भर थे। परन्तु अुसी वर्ष चीनका प्रति अेकड़ गेहूंका अुत्पादन १५.० बुशल (लगभग अमरीकाके बराबर) था और जापानका ३१.७ बुशल था। मिस्रमें भी अुस समय गेहूंका अुत्पादन प्रति अेकड़ २७.५ बुशल था। अुस वर्ष भारतका गेहूंका अुत्पादन प्रति अेकड़ केवल ९.७ बुशल था। स्पष्ट है कि भारतकी जमीन और खेतीके तरीकों पर ध्यान देनेकी जरूरत है। संयुक्त राज्य अमरीकामें मशीनोंसे खेती होनेके कारण खेतीके प्रति मजदूरके हिसाबसे अूंचा अुत्पादन जरूर होता है। परन्तु अुसके विशाल कुल अुत्पादनका कारण अुसका प्रति अेकड़ अूंचा अुत्पादन नहीं है, बल्कि खेतीकी कुल जमीनके असंख्य अेकड़ अुसका कारण हैं।

कम्पोस्ट खाद बनाना

गांधीजी स्वदेशी पर, देशी साधनोंसे धन बढ़ाने पर बड़ा जोर देते थे। सर अल्बर्ट हावर्डने, जो पूसाके कृषि-अनुसंधान कार्यके भूतपूर्व संचालक थे, कम्पोस्ट खाद बनाने और सजीव खादकी मददसे खेती करनेके बारेमें अेक बड़े आन्दोलनका विकास किया था। अुन्होंने भारतीय किसानोंके कम्पोस्ट खाद बनानेके तरीके देखकर अपना यह कार्य शुरू किया था।

कुशलतासे कम्पोस्ट खाद बनानेकी बातको खूब प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये। लकड़ीके अभावमें सूखा गोबर अींधनके तौर पर काममें लेनेके दीर्घकालीन रिवाजके कारण भारतकी औसत जमीनमें सजीव द्रव्यकी बुरी तरह कमी हो गअी है। अिससे जमीनका अुपजाअूपन घट जाता है और अन्नका अुत्पादन मात्रा और गुण दोनोंकी दृष्टिसे घट जाता है। रासायनिक खादोंका प्रयोग किया जाय या न किया जाय, लेकिन सजीव पदार्थ जमीनको स्वस्थ और अुपजाअू बनाये रखनेके लिअे जरूरी है। समशीतोष्ण जलवायुकी अपेक्षा गरम देशोंकी धूपसे जमीनका ह्यूमस नामक तत्त्व जल्दी नष्ट होता है। कम्पोस्ट खादसे जमीनमें ह्यूमसकी मात्रा धीरे धीरे पहले जितनी ही बढ़ाअी जा सकती है।

कम्पोस्ट खाद बनानेसे कचरे, सड़े-गले पत्तों और घासपातका सोना बन जाता है। अगर सावधानी रखी जाय और अुपयुक्त कीटाणुवाले खमीर तथा मिट्टी मिला दी जाय, तो मनुष्यके मलसे अच्छा खाद तैयार हो सकता है और वह कीटाणुओंके अथवा आंतोंमें जमे हुअे परोपजीवी कृमियोंके संक्रामक असरके खतरेके बिना अिस्तेमाल किया जा सकता है। यह अन्दाज लगाया गया है कि सारे भारतके दो-तिहाअी मलका कम्पोस्ट खाद बना लिया जाय, तो भारतके खेती-अुत्पादनमें कमसे कम १२ करोड़ रुपयेकी वृद्धि हो जाय। यूरोप और अुत्तर अमरीकामें म्युनिसिपल कूड़े-कचरेका खाद बनानेकी तरफ अधिकाधिक ध्यान दिया जा रहा है। अिस प्रकार कूड़े-करकटका खाद बनानेसे निकम्मी और नुकसान करनेवाली

चीज़ोंको अुपयोगी चीजोंमें बदला जा सका है। अैसा कम्पोस्ट खाद बनाना स्वच्छताका भी अेक बड़ा साधन होगा।

फलोंके पेड़

सड़कोंके दोनों किनारों पर और अैसी पहाड़ियोंके सहारे, जहाँ जमीनके बहुत बालू और पथरीली होनेके कारण हल नहीं चल सकता, फलोंके पेड़ अधिक लगाकर भारतका अन्न-अुत्पादन बहुत बढ़ाया जा सकता है।

खेतीकी बड़ी मशीनोंका क्या हो?

पिछले तीस वर्षोंमें अुत्तर अमरीकाने खेतीकी बड़ी और भारी मशीनोंका अुपयोग बहुत बढ़ा लिया है। वह विशाल मात्रामें अनाज पैदा करता है। यह मात्रा लोगोंकी खपतसे अधिक होती है। और यह अुत्पादन गत तीस वर्षोंमें २० प्रतिशत बढ़ गया है। ट्रेक्टरों और खेतीकी दूसरी बड़ी मशीनोंके कारण बहुत ही थोड़े लोगोंकी मददसे विशाल भूमि-खंडोंमें खेती करना और फसल काटना संभव हो गया है। थोड़ेसे समयमें बड़े बड़े जिलाकोंमें जुताओ हो गओ है। संयुक्त राज्य अमरीका और कनाडाने मिल कर अिन वर्षोंमें संसारको जहाजों द्वारा भेजे जानेवाले कुल अनका ७५ प्रतिशत अन्न पैदा किया है। फिर भी जैसा अूपर कहा गया है, संयुक्त राज्य अमरीकाके अितने बड़े अन्न-अुत्पादनका कारण प्रति अेकड़ अूंचा अुत्पादन नहीं, बल्कि खेतीकी जमीनका विशाल क्षेत्र है। भारतमें अितने विशाल क्षेत्रमें खेती नहीं होती।

अधिक मात्रामें यांत्रिक खेती भारतके लिअे लाभकारी नहीं होगी

खेतीकी बड़ी मशीनोंके मुख्य नुकसान ये हैं:

(१) मशीनें महंगी हैं: ट्रेक्टर मुख्यतः जुताओका काम करते हैं और बैलोंका स्थान लेते हैं। खेतमें अुन्हें अुपयोगी बनानेके लिअे दूसरे भारी फौलादके हलों तथा सामानकी जरूरत होती है। ट्रेक्टर और खेतीकी दूसरी भारी बड़ी मशीनें बहुत महंगी होती हैं। अेक अमरीकी ट्रेक्टर पर

१०,००० या अधिक रुपये खर्च होते हैं। अिसी तरह फौलादका दूसरा वड़ा सामान भी कीमती होता है। ट्रैक्टरोंके सिवा और सब मशीनें साल भरमें केवल तीनसे पांच सप्ताहके लिअे ही जुताअी और कटाअीके समय काम आती हैं। बाकी समय वे बेकार पड़ी रहती हैं। अकसर अुन पर जंग चढ़ता रहता है और अुनका अूपरका खर्च तो चढ़ता ही रहता है। किसी कारखानेका व्यवस्थापक किसी कीमती मशीनको सालमें दस महीने बेकार नहीं पड़ा रहने दे सकता। अकसर अेक अमरीकी खेतकी जमीनकी कीमतसे अुसकी मशीनोंकी कीमत ज्यादा होती है। किसी भारतीय गांवके किसान अिन मशीनोंको सहकारी आधार पर भी काममें लें तो बहुत थोड़े गांव अैसा करनेकी शक्ति रखते हैं। अलबत्ता, सरकार ये मशीनें रख सकती है और किसानोंको किराये पर दे सकती है। परन्तु किसी भी क्षेत्रके सभी किसानोंको अुनकी जरूरत अेक ही समयमें होगी।

(२) **छोटे छोटे खेत :** ट्रैक्टर और खेतीकी बड़ी मशीनें बड़े बड़े खेतों पर ही अच्छा काम देती हैं। परन्तु भारतमें आम तौर पर अितने बड़े खेत नहीं होते। अमरीकामें विविध फसलें लेनेवाले आर्थिक दृष्टिसे लाभकारी खेतका कमसे कम आकार १४० अेकड़का होता है। अिसका अर्थ यह हुआ कि ट्रैक्टरों और खेतीकी बड़ी मशीनोंका भारतमें बड़े बड़े सरकारी फार्मोंमें ही सफलतापूर्वक अुपयोग किया जा सकता है। चूंकि ये फार्म सारी भारतीय खेतीकी जमीनका थोड़ा ही भाग है, अिसलिअे मेरे खयालसे ट्रैक्टरोंकी मान ली गअी अधिक अुपयोगिता कुल मिलाकर लाभकारी सिद्ध नहीं होती।

(३) **मशीनें चलानेका भारी खर्च :** शुरूमें चुकाअी जानेवाली महंगी कीमतके अलावा खेतोंमें मशीनें चलानेका खर्च भी भारी होता है। भारतमें अेक गैलन पेट्रोलकी कीमत अमरीकासे दुगुनी होती है। शायद डीजल तेल और पुर्जोंमें दिये जानेवाले चिकने तेलकी कीमत भी अमरीकासे अुतनी ही अधिक पड़ती है। अिस कारणसे भी अैसी बड़ी मशीनें सरकार ही काममें ले सकेगी।

(४) मरम्मत आदिकी कठिनाअियां · टूट-फूट और मरम्मतकी आवश्यकता तो अनिवार्य रूपसे होगी ही। अमरीकामें प्रत्येक गांव और कस्बेमें अेक मरम्मत-घर होता है, जिसमें अतिरिक्त पुर्जे रहते हैं। भारतमें अैसा नहीं है। अधिकांश भारतीय गांवोंमें कोअी मशीनका काम जाननेवाला यांत्रिक भी नहीं होता। बड़े शहरोंसे मरम्मतके लिअे पुर्जे मंगानेका मतलब होगा कअी रोजका विलम्ब। आम तौर पर ये मरम्मतें जुताअी या कटाअीके अैसे नाजुक मौके पर जरूरी होती हैं, जब देरका अर्थ फसलकी हानि होती है।

(५) ट्रेक्टर बैलों जैसे अुपयोगी नहीं · ट्रेक्टर गोबर पैदा नहीं करते, बैलोंकी तरह अपनी चोटोंकी मरम्मत खुद नहीं कर लेते और बूढ़े होने पर अुनका काम संभालनेवाले अुनके बच्चे नहीं होते। गोबर भारतमें जमीनके अुपजाअूपनको टिकाये रखने और अुसके सुधारके लिअे सजीव पदार्थका काम करता है और अींधनका महत्त्वपूर्ण साधन है।

(६) ट्रेक्टरोंकी भारी शक्ति अेक प्रलोभन है: ट्रेक्टरोंकी भारी शक्ति जमीनके अच्छी तरह सूखनेसे पहले ही भारी चिकनी मिट्टीवाली धरतीको जोतनेके लिअे किसानोंको ललचाती है। जब जमीन गीली हो तभी फौलादी तलेवाले हलोंसे चिकनी मिट्टीवाली धरती जोती जाती है, तो अुसके सख्त ढेले बन जाते हैं और हलका तलवा मिट्टीमें घुस कर धरतीकी अैसी 'सख्त तह' बना देता है जिसमें पौधोंकी जड़ें घुस नहीं सकतीं, और अैसी तह कअी साल तक बनी रहती है। जुताअी अेक कला है और अुसके लिअे लम्बा अनुभव चाहिये। मेरे खयालसे औजारोंका अितना बड़ा परिवर्तन भारतके लिअे खतरनाक होगा।

(७) भारी मशीनें 'सख्त तह' बनाती हैं · ट्रेक्टरों और दूसरी भारी फौलादी मशीनोंके खेतों पर चलनेसे कुछ ही सालके बाद, हलकी रेतीली धरतीके सिवा, हर तरहकी जमीनमें अुपरोक्त 'सख्त तह' पैदा हो जाती है। 'सख्त तह' केवल पौधोंकी जड़ोंको ही जमीनमें प्रवेश करनेसे नहीं रोकती, वह पानीको भी बहुत धीरे धीरे सोखती है।

अिससे पानी जमीनके अूपर ही अूपर बना रहता है, जिससे जमीन कटती है और क्षारवाली बन जाती है।

(८) ट्रेक्टर बहुत गहरी जुताअी करनेको ललचाते हैं: फौलादी हलोंके साथ अुपयोग किये जानेवाले ट्रेक्टरोंकी भारी ताकत किसानोंको बहुत गहरी जुताअी करनेको ललचाती है। अिससे जमीनके अूपरकी हरियाली अितनी नीची और गहरी चली जाती है कि वहां अुसे हवा बहुत कम मिलती है। अिसलिअे वह जल्दी न सड़कर अकसर अेक खट्टी बदबूदार तह बनाती हे, जो अगली फसलोंके लिअे नुकसानदेह होती है।

(९) धरतीको धूपमें अधिक खुली करनेसे अुसके भीतरका जीवन मर जाता है: फौलादी तख्तेवाले हल पलटी हुअी जमीनको अत्यधिक मात्रामें अुष्ण-कटिबंधके सूर्यतापमें खुली कर देते हैं, जिससे मिट्टीके कीटाणु और खुमी (fungi) मर जाते हैं। ये दोनों जमीनके कसको टिकाये रखनेके लिअे अत्यन्त आवश्यक होते हैं। अुष्ण-कटिबंधकी तेज धूपसे सूक्ष्म जीवाणु ही नष्ट नहीं होते, बल्कि अिस तरह अूपरी जमीनकी अुथल-पुथलसे जमीनके भीतरका ह्यूमस नामक सजीव पदार्थ भी नष्ट होता है। अधिकांश भारतीय जमीनोंमें अिस सजीव पदार्थकी मात्रा बहुत ही थोड़ी होती है। जब धरतीमें ह्यूमसकी मात्रा बहुत ही घट जाती है, तब धरतीका कटाव बढ़ता है, धरती काफी पानीको अपने पेटमें रख नहीं पाती और क्षार या तो घुलकर बह जाते हैं या अुनका रासायनिक घोल नही बन पाता और अिस तरह अुनका लाभ पौधोंको प्राप्त नहीं होता। अिसलिअे किसानको रासायनिक खादकी शरण लेनी पड़ती है और अुतनी ही फसल प्राप्त करनेके लिअे हर साल अुसे अधिकाधिक मात्रामें अुसका अुपयोग करना पड़ता है। अिससे दूसरा खर्च बढ़ता है। हमें याद रखना चाहिये कि अमरीकी खेती और जंगल-सम्बन्धी पद्धतिके कारण वहां धरतीकी अेक-तिहाअी अूपरी मिट्टी बहकर समुद्रमें चली गअी है; और भूमि-विशेषज्ञोंका कहना है कि अगर धरतीके कटावकी यही गति जारी रही, तो वर्तमान शताब्दीके अन्त तक

तीन-चौथाअी अूपरी मिट्टीका सफाया हो जायगा। यह कोअी संयोग-मात्र नहीं है कि खेतोंमें मशीनोंके अुपयोगकी वृद्धिके साथ साथ अमरीकामें धरतीका कटाव बढ़ा है। वास्तवमें मशीनोंसे खेती करनेकी पद्धति अच्छी या सफल मालूम नहीं होती। अिसके सिवा, स्विट्जरलैण्ड, पश्चिम जर्मनी और फ्रांसमें, जहां अमरीकी ढंगके हल और ट्रैक्टर जारी किये गये हैं, धरती-कटावकी समस्या अैसी हो चली है, जिसका सरकारी कर्मचारियोंको कोअी हल नहीं सूझ रहा है। जो पद्धतियां पूरे सालमें बराबर बंटी हुअी सौम्य बरसात और समशीतोष्ण आबहवावाले देशोंमें लगातार सफल होती हैं, वे ही मौसमी बरसातवाले तथा अुष्ण-कटिबन्धवाले देशोंमें लागू की जाय तो खतरनाक साबित होंगी। यूरोपकी पद्धतियां भी जब अमरीकी परिस्थितियोंमें काममें ली गअी तो अुनसे वहांकी जमीनको बहुत नुकसान पहुंचा। खेतीकी बड़ी बड़ी मशीनें ब्रिटिश पूर्व अफ्रीकामें मूंगफलीकी योजनाको बचा नहीं सकीं।

(१०) विविध फसलें अुगाना कठिन होता है: चूंकि खेतीकी बड़ी और शक्तिशाली मशीनें बड़े बड़े फार्मों पर ही अच्छा काम देती हैं, अिसलिअे वे विशाल क्षेत्रोंमें अेक ही फसल पकानेकी वृत्तिको बढ़ावा देती हैं। अिसे अेक-फसली खेती कहते हैं। विशालकाय खेतोंमें अेक ही फसल अुगाना विनाशकारी कीड़ों और पौधोंके रोगोंको निमंत्रण देना है। ये दोनों अमरीकामें विशाल पैमाने पर पाये जाते हैं। १९५१ में कैली-फोर्निया विश्वविद्यालयके कृषि-महाविद्यालयके डीन अेस० बी० फ्रीबार्नने सान फ्रांसिस्कोमें नेशनल अेग्रीकल्चरल केमिकल अेसोसिअेशनके समक्ष कहा था "रासायनिक पदार्थोंके अिस्तेमालके बावजूद कीड़ों और फसलके रोगोंसे होनेवाली हानि लगभग ४ अरब डालरकी है, भूमि और पौधोंकी दूसरी बीमारियोंसे होनेवाला नुकसान दूसरे ४ अरब डॉलरका है।

(११) यांत्रिक खेती और रोजगार: यह मान लिया जाय कि अमरीकामें खेतीकी बड़ी और शक्तिशाली मशीनोंके अुपयोगसे काम जल्द

पूरा होता है और काफी श्रमकी बचत होती है, तो भी भारतमें जरूरत मजदूर कम करके बेरोजगारी बढ़ानेकी नहीं, परन्तु लोगोंके लिअे काम जुटानेकी और साथ ही अुनके लिअे अधिक अन्न अुपजानेकी है। अगर अधिक अन्न अधिक बेकारी पैदा करके ही अुपजाया जा सकता हो, तो जो सरकार अैसा करती है वह शायद अपनी ही कब्र खोदती है। अमरीकामें आबादी अितनी कम घनी है और लोग अपनी जीवन-पद्धतियोंके बारेमें अितने आत्म-संतोषी हैं कि बहुतसे अमरीकी किसान अभी तक यह सोचते हैं कि अपनी धरतीका रस-कस वे और अधिक चूस सकते हैं। लेकिन भारतकी स्थिति भिन्न है। वह अपनी धरतीको और अधिक घटिया बनाना बरदाश्त नहीं कर सकता। अुसे केवल अपनी धरतीका अुपजाअूपन कायम ही नहीं रखना है बल्कि अुसे बढ़ाना है और तात्कालिक आवश्यकताओंके साथ साथ भविष्यकी आवश्यकताओंका भी खयाल करना है।

(१२) **यांत्रिक खेती भारतके लिअे अनुकूल नहीं :** अिसमें शक नहीं कि ट्रेक्टरों और खेतीके बड़े यंत्रोंके भारतमें कुछ कीमती अुपयोग हैं। वे अुन बड़े बड़े भूभागोंको जोत सकते हैं जहां घासफूसकी भरमार है। जहां सिंचाअीकी नअी व्यवस्था की गअी हो अैसी बड़ी जमीनोंमें प्रथम कुछ वर्षों तक अुनसे जुताअी की जा सकती है। परंतु मेरे खयालसे भारतमें सामान्य अथवा दीर्घ अुपयोगके लिअे वे सामाजिक, आर्थिक और जीवजन्तुओं तथा वातावरणसे अुनके सम्बन्धकी दृष्टिसे भी अनुपयुक्त और खतरनाक सिद्ध होंगे। मेरा विश्वास है कि यांत्रिक खेतीसे न तो बहुत वर्षों तक भारतके लोगोंको अन्न खिलाया जा सकेगा और न भारतमें कोअी स्थायी सभ्यता कायम रखी जा सकेगी।*

---

* अुपरोक्त आपत्तियां मेरे अेक लेखसे अुद्धृत की गअी हैं, जो अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके 'दि अिकानॉमिक रिव्यू', १५ दिसम्बर-१९५६ में छपा था।

जलवायु, भूमि-वितरण और जनसंख्या सम्बन्धी भारतीय परिस्थितिके लिअे बैलोंसे चलनेवाले लकड़ीके देशी हल अुत्तम हैं। वे सस्ते है, वे अत्यधिक धरतीको धूपमें तपनेके लिअे खुली नहीं करते, वे धरती पर 'सख्त तह' पैदा नहीं करते, वे जमीनको अुतनी ही ढीली करके हवा देते हैं जितना जरूरी हो, वे किसानकी मनोवृत्ति, अुसकी आर्थिक परिस्थिति और शक्तिके साधनोंके अनुकूल हैं। अिस प्रकारकी जुताअीसे मिट्टीके सूक्ष्म जीवाणु सुरक्षित रहते हैं और अिसलिअे धरतीका अुपजाअूपन सुरक्षित रहता है। साथ ही बैलोंका मलमूत्र जब कचरेके खादमें मिलाया जाता है तो अुससे भूमिकी अुर्वरतामें वृद्धि होती है।

किसानोंको यह प्रयोग करके बताना चाहिये कि कैसे पहाड़ियोंके अूपर और नीचेकी ओर हल चलानेसे धरतीका कटाव पैदा होता है और जमीनके ढालसे आड़ी जुताअी करनेसे धरतीका कटाव रुकता है।

मैंने किसीको यह कहते सुना है कि खेतीके ट्रेक्टरोंको काममें न लेना, गांधीजीके अधिकांश कार्यक्रमकी तरह, सदियों "पीछे चले जाना" होगा, और पीछे तो हम जा ही नहीं सकते। मेरा अुत्तर यह है कि पीछे जानेवाला कार्यक्रम गांधीजीका नहीं, परन्तु पूंजीवादी अुद्योगवाद और शिल्प-विज्ञानका तथा यांत्रिक खेतीका है। जैसा कि पूंजीवादके परिच्छेदमें पहले सिद्ध किया गया है, पूंजीवादी शिल्प-विज्ञान सभी महाद्वीपोंकी धरतीकी अूपरी मिट्टीको नष्ट कर रहा है, संसारको फिरसे दरिद्रता, भुखमरी और मरुभूमियोंकी ओर ढकेल रहा है तथा अैसे युगोंकी ओर ले जा रहा है जब धरतीका अूपरी स्तर बना ही नहीं था, जब कोअी शिल्प-विज्ञान नहीं था और जब किसी मनुष्यकी भी हस्ती नहीं थी। अगर आपको अिसमें कोअी शक हो तो धरतीके कटाव पर खास तौर पर बेनेट, ब्राअुन, फारहार्ट, कोलिन, डेल अेण्ड कार्टर, जैक अेण्ड व्हाअिट, सॉमवार्न, सिअर्स और थॉंपकी पुस्तकें पढ़िये। पूंजीवादी शिल्प-विज्ञान और अुद्योगवाद भी पीछे जा रहे हैं, क्योंकि — जैसा अेल्टन मेयोकी पुस्तक साफ बताती है — वे छोटे छोटे श्रमजीवी समूहोंको लगातार नष्ट

करके सभ्यताका विनाश कर रहे हैं। ये ही छोटे छोटे समूह स्थायी स्वाभाविक सहयोगको जन्म दे सकते हैं, जिस पर सभ्यताका आधार होता है और जिसके बिना सभ्यता टिक नहीं सकती।

यह कहना कि मनुष्य पीछे नहीं जा सकता अिस बातसे अिनकार करना है कि कोअी अिक्कीस सभ्यतायें, जिनका अितिहासकार टॉयनबीने अध्ययन किया है, नष्ट हो चुकी हैं। क्या रोम और अुसका शिल्प-विज्ञान पीछे नहीं चला गया? क्या मिस्री साम्राज्य और अुसका शिल्प-विज्ञान छिन्न-भिन्न नहीं हो गया? हमारे अपने ही कालमें क्या हम अपनी आंखोंसे नहीं देख रहे हैं कि ब्रिटिश और डच साम्राज्योंकी अवनति हो रही है और फ्रेंच साम्राज्य लगभग समाप्त हो गया है? परिवर्तन सभी दिशाओंमें जा सकता है। परिवर्तनमात्र प्रगति नहीं है। ज्ञान केवल संचित ही नहीं किया जा सकता; वह खोया भी जा सकता है, और खोया गया है। ज्ञान बढ़ भी सकता है और घट भी सकता है।

मान लीजिये कि 'मनुष्य पीछे नहीं जा सकता' अिस दावेसे आपका यह मतलब हो कि अेक बार मनुष्यने शिल्प-विज्ञानकी जिस निपुणताका विकास कर लिया वह अभी तक कभी नष्ट नहीं हुअी है, अुसका सदा विस्तार होता रहता है और अंतमें सब जगह अुसका अुपयोग किया जाता है। हमें अिस बात पर बहुत विश्वास नहीं रखना चाहिये। छपाअी-कला और आधुनिक यातायात तथा परस्पर व्यवहारके साधनोंके आविष्कारसे पहले यह बात सही न रही होगी। अुदाहरणार्थ, माया पंचांगका प्रसार नहीं हुआ और हमें अभी तक यह मालूम नहीं है कि अुसका अितना निश्चित हिसाब कैसे लगाया गया होगा। पिरामिडोंके विशालकाय पत्थरोंको लाने ले जानेकी मिस्री कला नष्ट हो गअी। और प्राचीन ब्रिटेनके ड्रुअिड लोगोंकी भी अैसी कला नष्ट हो गअी। रोमन लोगोंका सीमेंट बनानेका भेद भी नष्ट हो गया। परन्तु छपाअी-कला और संपर्कके आधुनिक साधनोंके होते हुअे भी संसारमें अिस समय दो चीजें अैसी हैं, जो अव्यवस्था पैदा होने पर आधुनिक शिल्प-विज्ञानको भी नष्ट कर सकती

है। वे दो चीजें हैं हाअिड्रोजन बमका प्रयोग, और निरंतर होनेवाला तेज धरती-कटाव तथा जनसंख्याकी तेज वृद्धि।

'मनुष्य पीछे नहीं जा सकता'—अिस वचनसे आपका यह मतलब हो कि वह अपनी मशीनोंको खोना नहीं चाहता या अपने शिल्प-विज्ञानको बदलना भी नहीं चाहता, तो मैं आपसे बिल्कुल सहमत हूं। परंतु फिर भी अितिहासकी कूच और प्राकृतिक साधनोंकी समाप्ति अुसे अिसके लिअे मजबूर कर सकती है। अलबत्ता, काल-प्रवाह पीछे नहीं लौट सकता, परंतु मानव-जातिकी विचारधारा तो पीछेकी ओर लौट सकती है। परिवर्तन अेक चीज है, प्रगति दूसरी। जैसा बर्ट्रांड रसेल बताते हैं, परिवर्तन अेक वैज्ञानिक शब्द है, जब कि प्रगतिमें नैतिक अर्थ निहित है। बेशक, परिवर्तन आधुनिक शिल्प-विज्ञानका अभिन्न अंग होता है; परन्तु वह सब आवश्यक तौर पर प्रगति नहीं होता। कन्फ्यूशियसकी यह कहावत याद रखिये "जो अेक भूल करता है और अुसे माननेसे अिनकार करता है, वह दूसरी भूल करता है।" संभव है कि आधुनिक शिल्प-विज्ञानवेत्ताओं और अुनके हिमायतियोंका भी यही हाल हो।

प्राचीन शिल्प-विज्ञानकी कुछ चीजें आज भी अुपयोगी हैं, अुदाहरणार्थ, सिंचाअी (जैसे मोहें-जो-दडो और बेबीलोनमें), अींट-निर्माण, हथौड़ा, कुल्हाड़ी और बसूला—जो पाषाण-युगकी चीजें हैं। चक्र, जो आधुनिक यंत्रोंका अितना बड़ा अंग है, का आविष्कार हजारों वर्ष पूर्व हुआ था। यह विश्वास करनेके लिअे काफी कारण है कि शिल्प-विज्ञानके अर्थमें भी गांधीजीका समूचा कार्यक्रम—हाथ-कताअी, ग्रामोद्योग, बुनियादी तालीम आदि—हमें पीछे नहीं ले जाता है। परन्तु वह सदाचार और शिल्प-विज्ञान दोनोंकी दृष्टिसे जो कुछ वांछनीय है अुसकी रक्षाका अेक ठोस प्रयत्न है।

रासायनिक खादोंका क्या हो?

अच्छा, अगर पश्चिमी ढंगकी खेतीकी मशीनें भारतके लिअे अुतनी कारगर या फायदेमंद नहीं हैं जितनी कि पहले-पहल वे दिखाअी देती

है, तो क्या रासायनिक खाद भारतीय फसलोंकी पैदावारको वढ़ानेमें बहुत मदद नहीं देंगे?

रासायनिक खाद बेशक जमीनकी अुत्पादन-शक्तिको कुछ समयके लिअे वढ़ा देते हैं, परन्तु वह काफी जल्दी घट जाती है और अुतनी ही फसल पैदा करनेके लिअे हर साल अधिकाधिक मात्रामें यह खाद देना पड़ता है। अिसका अप्रत्यक्ष प्रमाण अिस बातकी तुलनासे मिलता है कि कुछ देशोंमें प्रति अेकड़ कितना रासायनिक खाद दिया जाता है और अिससे वहां गेहूं, जअी और आलूकी फसलोंका कितना कितना अुत्पादन होता है। हॉलैण्ड संयुक्त राज्य अमरीकासे प्रति अेकड़ १५ गुना ज्यादा रासायनिक खाद काममें लेता है, परन्तु अुसका गेहूंका अुत्पादन केवल ३.२५ गुना, जअीका २.६ गुनासे कुछ अधिक और आलूका १.६ गुनासे कुछ अधिक होता है। पश्चिम जर्मनीमें अमरीकासे ६.९ गुना अधिक खाद प्रति अेकड़ दिया जाता है, परन्तु अुसका गेहूंका अुत्पादन अमरीकासे केवल २.२ गुना, जअीका दुगनेसे कुछ अधिक और आलूका १.२ गुना अधिक है। गेहूंके अुत्पादन और रासायनिक खादके प्रयोगके विषयमें अमरीका तथा डेन्मार्क, वेल्जियम, स्विट्ज़रलैण्ड, न्यूज़ीलैण्ड, स्वीडन, नार्वे, जापान और दूसरे देशोंकी तुलना करनेसे भी यही मालूम होता है। प्रतिवर्ष अमरीकामें रासायनिक खादोंके प्रयोगकी तुलना अुन्हीं वर्षोंमें वहांकी फसलोंके अुत्पादनकी वृद्धिके साथ करनेसे भी यही बात सिद्ध होती है। अिसके सिवा, अमरीकामें १९३३ और १९५२ के बीच खनिज खादोंका प्रयोग तो ४०० प्रतिशत बढ़ गया है, लेकिन फसलका अुत्पादन पिछले तीस वर्षोंमें केवल २० प्रतिशत ही बढ़ा है।

अिसके अलावा ज्यों ज्यों रासायनिक खादोंका प्रयोग बढ़ता जाता है, त्यों त्यों धरतीके लाभकारी जीवाणुओंकी संख्या घटती जाती है, पौधोंकी बीमारियां बढ़ती जाती हैं, फसलोंका नाश करनेवाले कीड़ोंका अुत्पात बढ़ता जाता है, अुपजके पोषक गुण और टिकनेके गुण कम होते जाते हैं और रासायनिक खादों तथा कीड़ों और खुमीको नष्ट

करनेवाली दवाओंसे सम्बंध रखनेवाले खेतीके खर्च बढ़ते जाते हैं। केवल ६० प्रकारके कीड़ोंके कारण अमरीकामें होनेवाली हानिका जो अंदाज लगाया गया, वह १,६०१,५२७ डॉलर वार्षिक तक पहुंचती है। ये आंकड़े १९३८ में अमरीकाके कृषि-विभागके जे० अे० हिसलोपने अेकत्र किये थे। यहां कीड़ों और पौधोंकी बीमारीसे होनेवाली हानिके अुस ताजे हिसाबको भी देख लीजिये, जो खेतीकी मशीनोंसे संबंधित चर्चामें अूपर दिया गया है। कीड़ों और पौधोंकी बीमारियां बढ़नेका कुछ कारण तो अेक-फसली खेती है और कुछ कारण रासायनिक खाद हैं।

कम्पोस्ट खादकी बात फिरसे

रासायनिक खादोंसे कम्पोस्ट खाद धरतीके लिअे क्यों अधिक लाभदायक है, जिसका अेक महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि अच्छे कम्पोस्ट खादमें बहुतायतसे पैदा होनेवाले सूक्ष्म जीवाणु मिट्टीके भीतरकी रेत और पत्थरोंमें से वे खनिज द्रव्य अलग कर लेते हैं जिनकी पौधोंको जरूरत होती है और अुन्हें सजीव घोलोंके रूपमें बदलकर पौधोंकी जड़ोंके चूसनेके लिअे अुपलब्ध कर देते हैं। और खनिज पदार्थोंके ये सजीव घोल, घुलनशील रासायनिक नाअिट्रेट तथा पोटाश क्षारोंकी तरह, वर्षासे बहकर मिट्टीके बाहर नहीं चले जाते। और खनिज द्रव्योंके अैसे सजीव घोल नहीं घुलनेवाले फास्फेट क्षारोंके कणोंका रूप लेकर पौधोंके लिअे बेकार नहीं हो जाते। परन्तु जमीनमें अक्सर दिये जानेवाले रासायनिक फास्फेट और सुपर-फास्फेट क्षार पौधोंके लिअे बड़ी मात्रामें बेकार बन जाते हैं।

क्या सामूहिक खेती वांछनीय है?

अगर रूसके साम्यवादी अुदाहरण पर चल कर खेतोंके यंत्रीकरण और दूसरी प्रक्रियाओंको आर्थिक दृष्टिसे सफल बनाने और खेतीकी पैदावार बढ़ानेके लिअे भारतमें किसानोंकी जमीनोंका जबरन सामूहीकरण करनेकी कोशिश की गअी, तो अिसके लिअे जो हिंसा जरूरी होगी और आर्थिक तथा सामाजिक जीवनमें जो अुथल-पुथल आवश्यक होगी, अुससे मेरा विश्वास

है कि खेतीका अुत्पादन बहुत घट जायगा और भारतकी संस्कृति और सभ्यता नष्ट हो जायगी और अुसके स्थान पर अुतनी ही कीमती कोअी दूसरी चीज नहीं आयेगी। आप कह सकते हैं कि भारतकी संस्कृति अितनी महत्त्वपूर्ण नहीं है जितना यहांके लोगोंके लिअे अूंचा भौतिक जीवन है, और यह कि हमें तो प्रगति करनी ही है।

तो देखिये, रूसमें सामूहीकरणके कारण बरसों तक अन्नकी पैदावारमें जबरदस्त कमी रही। लगभग ३४ वर्ष तक सामूहीकरणकी पद्धतिको आजमानेके बाद भी रूस अभी तक अपनी अन्न-अुत्पादनकी समस्या हल नहीं कर पाया है। और विश्वस्त रिपोर्टोंके अनुसार वहांके किसान सुखी भी नहीं हैं। कोअी नअी प्रणाली श्रेष्ठ हो तो अुसकी अुपयोगिता सिद्ध करनेके लिअे ३४ वर्षका समय काफी है। चीनी सरकार भी साम्यवादी है। अुसने बड़े जमींदारोंसे जमीन छीनकर सब किसानोंमें बांट दी, परन्तु अुसके बाद किसानोंसे अुनकी जमीन नहीं छीनी। अिसके बजाय वहां खेतीकी सहकारी समितियां बना दी गअीं। कुछ समितियां तो पारस्परिक सहायताके लिअे और कुछ जमीनको अिकट्ठा करके अुसमें सहकारी खेती करनेके लिअे। अुन समितियोंकी सदस्यता स्वेच्छापूर्ण थी और अब भी है। १९५१ से चीनकी सहकारी खेती मंडलियोंके कारण खेतीकी पैदावार काफी बढ़ गअी है। परन्तु अुनके दीर्घकालीन परिणामोंके बारेमें मुझे शंका है।

खेतीकी जमीनोंका सामूहीकरण, बड़े पैमानेकी खेती और फार्मोंका यंत्रीकरण तथा अुद्योगीकरण स्थायी रूपसे सफल क्यों नहीं हो सकता, अिसका कारण कोअी सामाजिक, औद्योगिक या आर्थिक सिद्धान्त नहीं है; कारण है जमीन और वनस्पतिकी अपनी विशिष्टताअें। किसी कारखानेमें अुपयोगमें आनेवाली साधन-सामग्री जीवित नहीं होती, और अुसमें से अधिक नहीं तो आधी सजीव पदार्थोंसे अुत्पन्न भी नहीं होती। अुस पर विविध प्रक्रियायें करनेके लिअे यथासंभव अुसका ढांचा, कद और स्वरूप लगभग अेकसा बनाया जाता है। अिन प्रक्रियाओंके अनेक छोटे छोटे अेकसे विभाग किये जाते हैं। प्रत्येक विभागसे अुत्पन्न वस्तुअें किसी

खास स्तरकी और आसमें बदली जा सके अैसी होती है। तापमान, नमी, रोशनी वगैराको, जहां तक अुनका सामग्री या प्रक्रियाओं पर प्रभाव पड़ सकता है, नियंत्रणमें और समान स्थितिमें रखा जा सकता है। सारी प्रक्रियाओंका समय, गति और मात्रा भी नियंत्रित किये जाते हैं और अेकसे रखे जाते हैं।

खेतीमें सब चीजें भिन्न होती हैं। अेक खेतसे दूसरे खेतकी मिट्टी भिन्न होती है और प्राय अेक ही खेतके अलग अलग हिस्सोंकी मिट्टी भी भिन्न होती है। अिसका कारण यह है कि खेतोंके नीचेकी चट्टानोंमें फर्क होता है, चिकनी मिट्टी, रेतीली मिट्टी और सजीव द्रव्योंके अनुपातके कारण धरतीमें फर्क होता है, जमीनके कीटाणुओं और सूक्ष्म जीवाणुओंके प्रकारों और मात्राओंमें फर्क होता है, कीड़ों और अिल्लियोंकी संख्यामें फर्क होता है, नमीकी मात्रामें या पानीको पकड़ रखनेकी और अुसे बहानेकी क्षमतामें फर्क होता है। किसान हवा, तापमान, हवाके दबाव, धूप या बरसात पर कोअी नियंत्रण नहीं रख सकता। बीजका हरअेक दाना जीवन-शक्तिमें तथा अंकुरित होनेकी शक्ति या गतिमें पूरी तरह अेकसा नहीं होता। ये सब अैसे तथ्य हैं जो खेतीकी हर स्थिति पर लागू होते हैं, चाहे कोअी किसान अिनका सफलतापूर्वक अुपयोग करने जितना समझदार हो या न हो।

अिन सब बातोंका अर्थ यह हुआ कि किसान या खेतीके मालिकको जमीनके किसी विशेष भागकी सब बातोंसे परिचित होनेके लिअे अुस पर कमसे कम ५ वर्ष तक रहना और काम करना चाहिये। अुसे मालूम होना चाहिये कि हर खेतकी जमीन अमुक फसलें कितनी मात्रामें पैदा करती है और खेतीके अमुक तरीकोंका अुस पर क्या असर होता है। अुसे समझना चाहिये कि केवल गोबर, कम्पोस्ट खाद या रासायनिक पदार्थोंसे ही नहीं बल्कि फलीदार पौधों और हरे खादके लगाने और बदल बदलकर फसलें अुगानेसे भी धरती कैसे अुपजाअू बनाअी जा सकती है। अिन सारी क्रियाओंका अुसे लम्बा अनुभव होना चाहिये। अुसे अिस बातका ज्ञान होना चाहिये कि अुसकी अलग अलग जमीनों पर भिन्न भिन्न ऋतुओंका

और वर्षाका कैसा प्रभाव होता है। मौसमके अचानक बदल जानेके साथ अुसमें अपना कार्यक्रम अेकदम बदल लेनेकी क्षमता होनी चाहिये। कुल मिलाकर खेतीकी प्रक्रियायें औद्योगिक कारखानोंकी तरह न तो यांत्रिक होती हैं और न यांत्रिक बनाअी जा सकती है। अगर अैसी कोशिश की जाती है तो जमीन और अुसके अुत्पादनकी मात्रा और गुण दोनोंकी दृष्टिसे हानि होती है। थोड़े अरसेके लिअे अुत्पादन बढ़ाकर भूमिके अुपजाअूपनको नष्ट करना महंगा पड़ जायगा। यह हानि बहुत तेज और अनुभवी दृष्टिवालोंके सिवा दूसरोंको शायद तुरन्त दिखाअी न दे, परंतु दो सालके भीतर ही वह स्पष्ट मालूम हो जाती है और फिर अुसमें सुधार मुश्किलसे और धीरे धीरे ही होता है।

जानदार जमीनों और फसलोंके साथ सफलतापूर्वक काम लेनेका सच्चा अुपाय यह है कि कुशलतासे छोटे पैमाने पर गहरी खेती की जाय; और अैसी खेती वे किसान करें जो मालिक होनेके नाते अपनी भूमिको भलीभांति जानते हैं। मेरे कहनेका यह मतलब नहीं है कि मैं भारतमें अधिकांश खेतीकी जमीनके बहुत छोटे छोटे टुकड़ोंमें बंट जानेका बचाव करता हूं। यह स्थिति तो बहुत हानिकारक है। अिसे सुधारा जा सकता है और सुधारा जाना चाहिये। शायद विनोबाजीका ग्रामदान, जिसमें सारा गांव आसपासकी जमीनका मालिक और नियामक होता है, अैसे कठिन सुधारको सिद्ध करनेका अुत्तम अुपाय है। अुदाहरणार्थ, जैसा अिस प्रकरणमें अूपर बताया गया है, डेन्मार्क, हॉलैण्ड और बेल्जियममें गेहूंका जो बहुत अधिक अुत्पादन होता है वह खानगी मालिकीवाले किसानोंके घनी खेतीवाले छोटे छोटे खेतों पर होता है। सच तो यह है कि डेन्मार्कमें, जहां सबसे ज्यादा अुत्पादन होता है, खेतोंका औसत आकार पश्चिम यूरोपमें छोटेसे छोटा है। अिसके सिवा, जापानमें भी, जहां प्रति अेकड़ चावलकी पैदावार सबसे ज्यादा है, बहुत छोटे छोटे खेत हैं। किसान विज्ञान अवश्य सीखें और अुसका अुपयोग करें, परन्तु वह विज्ञान यांत्रिक या निर्जीव प्रक्रियाओंका न होकर सजीव शक्तियोंका होना चाहिये।

खेतीकी जमीनोंमें सामूहिक खेती करनेसे कुछ आर्थिक और वैज्ञानिक लाभ होते हैं। किसानोंको औजार और बैल चाहिये; अुन्हें जमीन तथा फसलकी व्यवस्थाका और कुछ स्थानोंमें बेहतर सिंचाओका ज्ञान होना चाहिये। शायद चीनकी खेतीसे सबंध रखनेवाली सहकारी समितियोंकी पद्धतिमें कुछ सुधार कर लिया जाय, तो खेतीके दोनों तरीकोंके लाभोंका समन्वय हो जाय, जिससे धरतीकी स्थायी रक्षा भी हो सकेगी और अुत्पादनके गुण और मात्राकी वृद्धि भी हो सकेगी।*

जिस प्रकार, खेतीका सफलतापूर्वक और स्थायी रूपसे यंत्रीकरण और अुद्योगीकरण नहीं किया जा सकता। कारखानेका काम अत्यन्त विभक्त और विशिष्ट प्रकारका होनेके कारण अुसमें बहुत थोड़ी बुद्धिकी या अधिकसे अधिक मर्यादित यांत्रिक बुद्धिकी जरूरत होती है। परन्तु खेती करनेवाले किसानमें, भले ही वह मूक दिखाओ देता हो, परिस्थितिके अनुसार बदलनेवाली, व्यापक और कल्पनाशील बुद्धि होनी ही चाहिये, क्योंकि जमीनके सूक्ष्म जीवाणु संसारमें सबसे पेचीदा चीज हैं और मौसमकी हालत हमेशा बदलती रहती है। मार्क्स और लेनिन तथा अुनके अनुयायी ज्यादातर शहरी लोग थे और हैं, जिन्हें पुस्तकीय शिक्षा मिली होती है, जिन्हें खेतीका व्यक्तिगत अनुभव नहीं होता और जो जिन चीजोंको समझते भी नहीं। जिन मामलोंमें किसान कट्टर मार्क्सवादियोंसे ज्यादा बुद्धिमान होते हैं। अेक बार यह सत्य मान लिया जाय कि धरती अत्यन्त पेचीदा और असंख्य सूक्ष्म जीवाणुओंका समूह है, तो खेतीका बौद्धिक महत्त्व बहुत ज्यादा बढ़ जाता है।

धरतीका कटाव

जिस निबंधके पहले और दूसरे परिच्छेदमें धरती-कटावकी जो चर्चा की गयी है अुससे आधुनिक जगतमें जिस समस्याका महत्त्व स्पष्ट हो

* देखिये 'रिपोर्ट ऑफ अिंडियन डेलिगेशन टु चाअिना ऑन अेग्रेरियन कोऑपरेटिव्स', योजना-कमीशन, नअी दिल्ली; १९५७।

गया है। भारत-सरकारने अिसके महत्त्वको स्वीकार किया है और वह भारतके कअी भागोंमें गंभीरतासे अिस पर अमल कर रही है। जमीनके कटावको सफलतापूर्वक कावूमें रखनेके लिअे किसानों और शहरी लोगों दोनोंकी शिक्षाके लिअे अेक व्यापक, तीव्र और दीर्घकालीन आन्दोलनकी जरूरत होगी। गांधीवादी अगर अिसमें भरसक सहायता देंगे, तो वह अुनकी वुद्धिमानी होगी।

पशु-सुधार

पहली पंचवर्षीय योजना पर प्रकाशित सरकारी वक्तव्यके अनुसार भारतमें १९५१ में १९.३ करोड़ पशु थे। शायद अिस संख्यामें भैंसें शामिल हैं। यह दुनियाकी सारी पशुसंख्याकी अेक-चौथाअी है। प्रो० राधाकमल मुकर्जीने अपनी 'अिकॉनामिक प्राब्लेम्स ऑफ अिंडिया' (१९३९) में वताया है कि अुस समय भारतमें वोअी जानेवाली प्रति सौ अेकड़ जमीनके पीछे ६७ पशु थे, जव कि चीनमें १५ और जापानमें ६ पशु थे। भारतकी भूमि तथा वनोंकी सुरक्षा और मनुष्योंके स्वास्थ्यकी दृष्टिसे अिस देशमें पशुओं और वकरे-वकरियोंकी संख्या जरूरतसे ज्यादा है।

अविवेकपूर्ण प्रजनन और समुचित आहारके अभावसे जानवरोंकी जाति वहुत घटिया हो गअी है। वे दूव जितना चाहिये अुससे वहुत कम और पोपणकी दृष्टिसे घटिया देते हैं। १९५१ में भारतीय गायोंके दूधका औसत अुत्पादन प्रतिदिन पौन सेरसे अधिक नहीं था, जव कि संयुक्त राज्य अमरीकामें प्रति गाय दूधका अुत्पादन लगभग दस गुना अधिक है। अमरीकामें वहुतसी दुधारू गायोंकी नसल अितनी वढ़िया हो गअी है कि वे लगभग दूव देनेवाली मशीनें ही वन गअी हैं। परन्तु अिसका यह अर्थ नहीं कि भारतीय पशुओंका सुधार न किया जाय। चुनी हुअी भारतीय गायोंने प्रतिदिन २१ पौंड तक दूध दिया है। अिसलिअे सुधार किया जा सकता है। सरकार अिस काममें मदद कर रही है। और गांधीवादियोंको भी अिसमें मदद देनी चाहिये।

अिसीके साथ साथ गायोंके गठानों, दुधाल्यों और दूधके रखने तथा देने वगैराकी व्यवस्थामें सफाअी और स्वच्छता भी होनी चाहिये। बम्बअीके पास अैसी अेक आदर्श डेरी है भी। अैसी अनेक डेरियां होनी चाहिये। सरकार अैसी बातोंको बढ़ावा दे रही है। अिन्हें गांधीजीका आशीर्वाद जरूर मिलता।

भिन्न भिन्न प्रकारके प्राणियोंके बीच फिरसे समुचित सन्तुलन कायम करने और भारतकी समृद्धिका निर्माण करनेके लिअे यह जरूरी होगा कि गायोंकी जन्मसंख्या कम की जाय और भेड़-बकरियोंकी जन्मसंख्या या तो घटाअी जाय या अुनके चरागाहोंको हल्कोंमें सीमित कर दिया जाय। भेड़-बकरियां गाय-भैंसों जैसे पशुओंकी अपेक्षा घास और पत्तियोंको जमीनके बहुत ज्यादा नजदीक तक खा जाती हैं, और बकरियां बहुतसी झाड़ियों, पेड़ोंकी निचली डालियों और अुगते हुअे पौधोंको तो पूरे ही खा जाती हैं। अिसलिअे अत्यधिक संख्यामें अुनकी चराअीके कारण लगभग सारे छोटे पेड़, झाड़ियां और घास नष्ट हो जाते हैं, यहां तक कि पहाड़ियों और मैदानों परसे हरियालीकी चादर बिलकुल खतम हो जाती है — अुन पर पेड़-पौधोंका नाम-निशान भी नहीं रह जाता। अिससे बरसातमें जमीन कटती है, बाढ़ें आती हैं और रेगिस्तानोंका विस्तार होता है।

अुदाहरणके लिअे, बिहारमें कोसी नदीके किनारे किनारे विनाशकारी बाढ़ोंके आनेका कारण यह था कि नेपालमें, जहांसे वह नदी निकलती है, बकरियोंने सारे झाड़-झंखड़, पेड़-पौधे, घास-पात चरकर पहाड़ियोंको नंगा कर दिया। फिर बरसात पहाड़ियोंकी रेत और कंकड़-पत्थरोंको बहाकर नदीमें ले गअी, नदी अिन सबको बहाकर अपने निचले प्रवाहमें ले गअी। अिससे बिहारमें नदीका पाट अूंचा हो गया। फलस्वरूप नदीमें जोरोंकी बाढ़ आअी, जिसका पानी मैदानोंमें फैला और अुसने हजारों अेकड़ जमीनको, फसलोंको और किसानोंको बरबाद कर दिया। यह नदी स्थायी रूपसे नेपालके साथ अैसी संधि करके ही काबूमें रखी जा सकती है, जिससे पहाड़ियोंके ढाल पर फिरसे पेड़-पौधे लगाये जायं और अीमानदार

तथा सावधान पहरेदार रखकर या अच्छी तारकी बाड़ लगाकर बकरियोंको दूर रखा जाय। बार बार अैसी विनाशकारी बाढ़ोंका शिकार बननेसे अच्छा तो यह होगा कि भारत अुन नेपाली बकरियोंके लिअे सूखी घास मुहैया करे और नेपालकी पहाड़ियों पर रखे जानेवाले पहरेदारोंकी तनख्वाहका खर्च दे दे। मगर पहरेदार अितने अीमानदार और समझदार होने चाहिये कि अुन्हें बकरियोंके चरवाहे रिश्वत देकर पटा न सकें।

चीनके पहाड़ों और पहाड़ियों पर भी बकरियोंने अैसा ही नुकसान किया है और अुसके कारण पीली नदीके किनारे किनारे सदियों तक अैसी भयंकर बाढ़ें आअीं कि अुस नदीको 'चीनका अभिशाप' कहा जाने लगा। अिसी तरहकी हानि बकरियोंने यूरोप, अेशिया माअिनर और अुत्तरी अफ्रीकाके भूमध्य सागरके आसपासके सारे देशोंमें की है। संयुक्त राज्य अमरीकाके कुछ भागोंमें भेड़ें अिसी तरहका नुकसान कर रही है।

यदि मनुष्य-जातिको किसी भी संख्यामें और मानव गौरवके साथ जिन्दा रहना है, तो जंगलों और भूमि पर हरियालीकी चादर जरूरी है — अिस सत्यको चरवाहे समझ सकेंगे अैसा नहीं लगता। भेड़-बकरियोंके चरवाहे गरीब तो हैं, फिर भी जिस संपूर्ण समाजके वे अंग हैं अुसे दरिद्र बनाने और नष्ट करनेकी अुन्हें अिजाजत नहीं होनी चाहिये। अपनी नासमझी और असंयमसे वे जो बरबादी करते हैं वह वैसी ही है, जैसी कुछ धनवान और अैसे ही अदूरदर्शी तथा सामाजिक दृष्टिसे गैर-जिम्मेदार पूंजीवादी अुद्योगपतियोंके द्वारा होती हैं। अिन सब सुधारोंके लिअे न सिर्फ कानून बनानेकी जरूरत है, बल्कि किसानोंको धरतीकी रक्षाका महत्त्व और अुसके अुपाय सिखानेके लिअे अेक व्यापक शिक्षात्मक आंदोलनकी भी आवश्यकता है। लोकशिक्षाके अिस काममें गांधीवादी सहायता दे सकते हैं।

पशुओं और भेड़-बकरियोंकी जन्मसंख्यामें कमी करनेका अर्थ पशुवध नहीं है। लेकिन अिसके लिअे घटिया दरजेके नर-पशुओंकी बहुत बड़ी संख्याको अलग रखनेका या अुनकी प्रजनन-शक्तिका अन्त करना जरूरी है। अिसके लिअे अुन्हें खस्सी करनेकी जरूरत नहीं है। छोटासा ऑपरेशन

करके नर-पशुओंकी वीर्य-नलिकाको बाध देनेसे यह काम हो जाता है। अुसमें बहुत थोडी और कुछ ही देरके लिअे तकलीफ होती है। अथवा पशु-चिकित्साकी अितनी-सी कुशलता भी अुपलब्ध न हो, तो अेक अैसा औजार होता है जो काटे बिना ही पशुकी वीर्य-नलिकाको कुचलकर अुसे जीवन भरके लिअे नपुसक बना देता है। अिससे भी बहुत पीडा नहीं होती और अेक दिनमें शान्त हो जाती है। ये क्रियायें मेरे मनमें अुसी प्रकार गायकी पवित्रताको भग नहीं करती जिस प्रकार गाडोको बैल बनानेमें अिस पवित्रताका भग नहीं होता। प्राकृतिक अवस्थामें हिंसक पशुओं, शेरो, चीतो आदिके कारण पशुओंकी सख्या अुचित मर्यादामें रहती है। मनुष्यने हिंसक पशुओंको निकाल दिया है, अिसलिअे ठीक सतुलन कायम रखनेके लिअे दूसरे अुपाय करने ही पडेंगे।

भूमिका अधिकार और वितरण

बढती हुअी जनसख्या और किसानोकी जमीनकी भूखकी वर्तमान स्थितिमें भूमिके अधिकार और वितरण सबन्धी सुधारोका भारतके लिअे सब महाद्वीपोंके सारे देशोकी तरह अत्यधिक महत्व है।

भारतकी केन्द्रीय सरकार और राज्य-सरकारोने कानून बनाकर भूमिके अधिकार और वितरण-सम्बधी सुधार करने और भूस्वामियोंको मुआवजा देकर अुनसे कुछ जमीन लेने और किसानोंको सौंपनेकी कोशिश की है। परन्तु अिस सुधारमें कानूनी दावोके कारण काफी रुकावट और शासनिक कार्रवाअीमें विलम्ब तथा अन्य दोषोके कारण थोडी रुकावट आअी है। मेरे पास अिसके निश्चित आकडे नहीं हैं कि किसानोंको अिस प्रकार सचमुच कितने अेकड भूमि सौंपी गअी है।

काश्तकार द्वारा खेती कराना जमीनके लिअे हानिकारक और अदक्षता बढानेवाला है

खेतीकी जमीनो पर अलग अलग किसानोका या सहकारी ढग पर अेक अेक पूरे गावका स्वामित्व होना चाहिये। तभी जमीनकी ठीक ठीक

देखभाल और विकास होना संभव है। केवल यह स्वामित्व ही खेतीकी पैदावारको अधिक बढ़ानेके लिअे काफी नहीं है, क्योंकि मालिकके पास अच्छे औजार, कामकी जानकारी, कुशलता, निरन्तर परिश्रमकी लगन और महत्त्वाकांक्षा भी होनी चाहिये। परन्तु यह स्वामित्व सतत अूंचे अुत्पादनके लिअे अेक जरूरी शर्त है। अैसे स्वामित्वकी आवश्यकता संसार भरके खेती-संबंधी आंकड़ोंसे सिद्ध होती है। लगानदारीकी खेतीमें पैदावार कम हो जाती है। अगर लगानदार (काश्तकार) का अिकरारनामा अेक ही दो सालका हो और जमींदारकी दिलचस्पी — जैसा कि आम तौर पर होता है — जमीनसे रुपयेकी आमदनी करनेमें ही हो, वह भारी लगान वसूल करे और भूमि-सुधारके लिअे कोअी गुंजाअिश न रखे, तो लगानदार जमीनका अैसा ही अुपयोग करेगा, जिससे अुसमें जल्दीसे जल्दी और अधिकसे अधिक पैदावार हो, फिर भले ही अुससे जमीनका अुपजाअूपन और अुसका रस-कस नष्ट ही क्यों न हो जाय। लगानदार समझदारीके साथ बदल बदल कर फसलें बोने या जमीनमें पेड़ लगानेकी चिन्ता नहीं करेगा। अिसमें अुसका रुपया खर्च होगा, जिसे वह वसूल नहीं कर सकेगा। अिस प्रकार कुछ ही वर्षोंमें जमीनका अुपजाअूपन खतम हो जाता है। और यदि कर्ज भारी ब्याज देकर ही लिया जा सकता हो और करका भार बहुत ज्यादा हो, तो लगानदार जल्दी ही और ज्यादा दरिद्र हो जाता है।

अधिक नहीं तो कअी शताब्दियोंसे भारतवर्षमें अैसा ही होता आया है। संसार आज नअी क्रांतियोंके किनारे खड़ा है। और भारतीय जमींदारोंमें अुनसे बचनेकी समझ होनी चाहिये। यह सिर्फ किसानोंके साथ सामाजिक न्याय करनेकी ही बात नहीं है। यह अेक स्थायी अर्थ-व्यवस्था कायम रखनेकी बात है। भारतके लिअे अधिकसे अधिक मात्रामें अन्न प्राप्त करनेकी बात है। क्रान्तिकी बात छोड़ दें तो भी भारतने आज तक कभी न देखा हो अैसे अकालको रोकनेका यह अेक आवश्यक अुपाय है।

किसानोंको खेतीकी शिक्षा देनी चाहिये

भारतके पास धनी खेतीके लिअे पूरी जनशक्ति मौजूद है। अमरीकाके पास वह नहीं है। भारतीय किसानको खेतीसे सम्बन्ध रखनेवाली काफी शिक्षा देनी चाहिये ताकि वह जुताओकी अैसी पद्धतियां सीखे जिनसे जमीनका कटाव घटे, बदल बदल कर फसल लेनेकी सही पद्धति सीखे, ज्यादा अच्छे बीजका चुनाव करना जाने तथा खेती-सम्बन्धी दूसरी अनेक बातें विस्तारसे जाने। यह शिक्षा तभी सफल होगी जब यह लोकतांत्रिक सहकारी ढंग पर दी जायगी, और अुसमें समय लगेगा। संयुक्त राज्य अमरीका और साम्यवादी चीन दोनोंमें अिस प्रकारकी अुत्तम पद्धतियोंका विकास हुआ है। भारत-सरकारकी कोशिशसे चावल रोपनेका जापानी ढंग काममें लाया जा रहा है और किसान अुसकी अुपयोगिता समझ रहे हैं। शिक्षाके अतिरिक्त किसानोंमें अुनका खोया हुआ आत्म-विश्वास और आशा भी फिरसे पैदा होना जरूरी है। अिस अुद्देश्यकी पूर्तिके लिअे चरखा अेक बड़ा साधन है और सरकार अुसके अुपयोगको बढ़ावा देकर बुद्धिमानीका काम कर रही है। अिसके बारेमें अुसे अधिक अुत्साहसे काम करना चाहिये।

किसानोंको दिया जानेवाला अुधार और अुनका कर्ज

केन्द्रीय सरकार तथा राज्य-सरकारोंने किसानोंसे भारी ब्याज लेने और अुन्हें अन्यायपूर्ण ढंगसे कर्ज देनेकी बुराओको रोकनेके लिअे, किसानोंके अुपरके भारी बोझको मिटानेके लिअे और खेतीके लिअे सही और अुचित ढंगसे अुधार मिलनेके लिअे काफी कानून बनाये हैं। लेकिन ताजीसे ताजी रिपोर्टोंसे पता चलता है कि ये अुपाय काफी नहीं हैं और बड़ी हद तक असफल सिद्ध हुअे हैं। यह अेक विशाल और पेचीदा समस्या है। गांधीवादियोंके लिअे ग्रामवासियोंकी मदद करनेका यह अेक बड़ा कार्यक्षेत्र है।

अुद्योगीकरण

अब हम सरकारकी अुद्योगीकरणकी योजना पर विचार करेंगे।

अुद्योगीकरणके मुख्य हेतुओंमें से अेक यह है कि जो देहाती अिस समय बेकार या अर्ध-बेकार हैं अुन्हें शहरों, मिलों और कारखानोंकी तरफ

खींचा जाय, अिस प्रकार बेकारी और अर्ध-बेकारीकी हालतसे अुन्हें अुबारा जाय और साथ ही भूमि पर लोगोंके पालनका दबाव कम किया जाय। गांवोंकी बेकारीके सवालको बिलकुल अलग रख दिया जाय, तो अुद्योगपति और अुद्योगवादी अर्थशास्त्रियोंका यह विश्वास है कि बहुत लोगोंको खेतीका काम करने देना कार्य-दक्षताकी दृष्टिसे हानिकारक है। अुनके खयालसे खेती भी अन्य सब अुत्पादक साहसोंकी भांति अेक व्यवसाय है और व्यवसायके ढंग पर ही अुसका काम होना चाहिये; खेतीमें भी रुपयेका खयाल मुख्य होना चाहिये; श्रम अुत्पादनका अेक खर्च ही है; अिसलिअे सफल प्रणाली यह होगी कि खेतीके आधुनिक यंत्रोंके द्वारा प्रति श्रमिक खेतीका अुत्पादन बढ़ाया जाय; और अिस कारणसे जमीन पर बहुतसे काम करनेवालोंका होना कार्य-क्षमताकी दृष्टिसे हानिकारक है और खुद किसानोंके आर्थिक लाभको हानि पहुंचानेवाला है।

यह विचारधारा अिंग्लैण्ड और संयुक्त राज्य अमरीकामें पैदा हुअी — अिंग्लैण्डमें अिसलिअे कि अुद्योगवादके आरम्भ-कालमें वह अपनी जरूरतकी सारी खुराक दूसरे देशोंसे आसानीसे खरीद लेता था और अमरीकामें अिसलिअे कि वहांके लोगोंके खानेके लिअे जितना अन्न चाहिये अुससे कहीं अधिक अुसके पास था। परन्तु अब ग्रेट ब्रिटेनको दूसरे देशोंसे अन्न प्राप्त करनेमें अधिकाधिक कठिनाअी हो रही है और अमरीकामें ज्यों ज्यों आबादी बढ़ती जाती है और पानीकी मात्रा कम होती जाती है, त्यों त्यों अुसके अतिरिक्त अन्नकी मात्रा घटनेकी संभावना दिखाअी देने लगी है। अुद्योगीकरणसे किसी देशकी समग्र आर्थिक स्थितिमें जरूर मदद मिलेगी — अिस तर्ककी पृष्ठभूमि, आधार और धारणाअें विलीन हो रही हैं। अिसलिअे आज भारत पर अिस दलीलको लागू करना बिलकुल सही नहीं होगा और अुसमें सुधार करनेकी जरूरत हो सकती है।

अन्नका आयात

भविष्यमें बहुत वर्षों तक दूसरे देशोंसे काफी मात्रामें अन्न प्राप्त करके अपनी कमी पूरी करना भारतके लिअे कदाचित् संभव नहीं होगा।

संयुक्त राष्ट्रसंघकी खुराक और खेती-संबंधी संस्थाके प्रकाशन 'दि स्टेट ऑफ फूड अेण्ड अेग्रीकल्चर, १९५५' के अनुसार चावल पैदा करनेवाले देशोंमें युद्धसे पहले १९३८ में जितनी जनसंख्या थी अुसकी अपेक्षा १९५१ तकमें १० करोड़ अधिक बढ़ गअी थी। अिस पुस्तकमें कहा गया है कि "दूसरे महायुद्धसे पहले अेशिया संसारका कुल ९३ प्रतिशत चावल निर्यात करता था और दूसरे देशोंको २० लाख टनसे अधिक चावल निर्यात करता था, अब (१९५३ में) वह चावलका आयात करनेवाला बन गया है। चूंकि विश्व-व्यापारके लिअे अुपलब्ध चावल अब भी लड़ाअीके पहलेकी मात्राके आधेसे कम है, अिसलिअे अेशिया दूसरे अन्न भी भारी मात्रामें आयात करता है।" दूसरे महायुद्धके बादके कुछ ही वर्षोंके अनुभवसे प्रगट हो गया कि जब अन्नकी कमी हो जाती है तब अुसका निर्यात नहीं किया जाता, परन्तु जहां वह पैदा किया जाता है वहीं रखा जाता है। जब जनसंख्या घनी और खुराक दुर्लभ होती है तब वह जहां पैदा होती है वहीं रखी जाती है। १९५१ की तरह अेशियामें संसारकी कुल खुराकके ४० प्रतिशत भागके लगभग खुराक पैदा होती है, परन्तु निर्यात वह अपनी पैदा की हुअी खुराकका लगभग २ प्रतिशत भाग ही करता है। औद्योगिक माल और अन्नके बीच चुनाव हो तो संकटके समय सभीको अन्न ही पहले चाहिये।

यह अप्रत्यक्ष रूपमें अिस बातसे सिद्ध होता है कि खेतीके अुत्पादनका आन्तर-राष्ट्रीय व्यापार अुतनी तेजीसे नहीं बढ़ रहा है जितनी तेजीसे सारी दुनियामें जनसंख्या बढ़ रही है। १९५५ की खाद्यस्थितिके अुपरोक्त खुराक और खेती-सम्बन्धी संस्थाके सिंहावलोकनमें से मैं फिर अेक अुद्धरण यहां देता हूं:

> "दूसरे महायुद्धके बादके समयमें खेतीके अुत्पादनके आन्तर-राष्ट्रीय व्यापारका सबसे अुल्लेखनीय पहलू शायद यह रहा है कि वह लगभग स्थगित जैसा रहा। . . . अन्न और खाद्य-पदार्थोंका व्यापार, जो खेतीके अुत्पादनके व्यापारका सबसे बड़ा अंग है,

केवल १९५१ में ही युद्धसे पहलेके अपने स्तर पर फिरसे पहुंचा और अुसके बाद अुस स्तरसे अेक-दो प्रतिशतसे अधिक अूपर या नीचे नहीं गया। . . .

"विकासका यह अभाव, विशेषतः अन्न और खाद्य-पदार्थोमें, अिस प्रबल प्रवृत्तिको प्रगट करता है कि खेतीके अुत्पादनमें अधिकाधिक आत्म-निर्भरता प्राप्त की जाय, चाहे वह सुरक्षाके लिअे हो, पैसेके लेन-देनके संतुलनके लिअे हो या अन्य कारणोंसे हो। . . . अिसका अर्थ यह है कि खेतीके अुत्पादनका व्यापार धीरे धीरे विश्व-व्यापारका घटता हुआ अंग बनता जा रहा है। अिसके अलावा, व्यापारकी स्थिर स्थितिके मुकाबलेमें खेतीके अुत्पादनकी मात्रा दिनोंदिन बढ़ती दिखाअी दे रही है, अिसलिअे यह निष्कर्ष निकलता है कि निर्यातके लिअे किया जानेवाला अुत्पादन खेतीके समग्र अुत्पादनका दिनोंदिन छोटा हिस्सा बनता जा रहा है। दूसरे महायुद्धसे पहले संसारकी खेतीके अुत्पादनका अनुपात आन्तर-राष्ट्रीय व्यापारके साथ २० प्रतिशतके लगभग था और अब वह १५ प्रतिशतके आसपास है।"

संयुक्त राष्ट्रसंघकी खुराक और खेती-सम्बन्धी संस्थाके अिस प्रकाशनका लेखक कहता है कि यह प्रवृत्ति शायद स्थायी रहेगी।

संयुक्त राज्य अमरीका शायद आजकल संसारमें गेहूंका सबसे बड़ा भंडार है। दूसरे महायुद्धके अन्तके बादसे संयुक्त राज्य अमरीकामें खेतीके अुत्पादनकी दृष्टिसे लगातार अनुकूल वर्ष सिद्ध हुअे हैं। परन्तु १९५७ में मिसिसिपीकी घाटीमें, जहां अधिकांश गेहूं पैदा होता है, व्यापक सूखा पड़ा है। १९०० से १९५७ के बीच वहांकी जनसंख्या ७ करोड़ ६० लाखसे बढ़कर १७ करोड़ हो गअी है। अर्थात् दुगुनीसे भी ज्यादा हो गअी है। १९४५ और १९५४ के बीच संयुक्त राज्य अमरीकाका अन्नोत्पादन जनसंख्यासे केवल आधा बढ़ा है। वहां लगातार जो धरती-कटाव, जंगलोंका विनाश और पानीकी तंगी हो रही है अुसके साथ ये तथ्य मिला दिये

जाय, तो यह नतीजा निकल सकता है कि भारतको अनिश्चित काल तक बाहरसे गेहूं नहीं मिल सकेगा।

कारखाने जमीन पर लोगोंका दबाव कितना कम करते हैं?

चीनके आंकड़ोंसे जाहिर होता है कि हाथसे की जानेवाली खेतीमें जब अधिकाधिक लोग काम करते हैं, तब प्रति १०० अेकड़के पीछे ४ आदमी या प्रति २४ अेकड़के पीछे १ आदमी काम करे वहां तक तो प्रति आदमी अुत्पादन बढ़ता है, और अुसके बाद घटने लगता है। लेकिन जब खेतीका काम करनेवालोंकी संख्या बढ़ती है तब प्रति १०० अेकड़ कुल अुत्पादन और प्रति अेकड़ औसत अुत्पादन भी लगातार बढ़ता है, यद्यपि अिन वृद्धियोंकी मात्रा अधिकाधिक घटती जाती है। चीनकी घनी खेतीके जो आंकड़े जान लॉसिंग बककी पुस्तक 'लैंड युटिलिज़ेशन अिन चाअिना' (युनिवर्सिटीऑफ शिकागो प्रेस, १९३७) में दिये गये हैं, अुनसे प्रगट होता है कि कुल अुत्पादनकी और प्रति अेकड़ औसत अुत्पादनकी यह वृद्धि तब तक तो जारी रहती है जब तक प्रत्येक किसानके पास २६ अेकड़ जमीन होती है। प्रति किसान अिससे कम भूमि होती है तब अुत्पादनमें प्रति अेकड़ अेक खुलके दसवें भागके बराबर थोड़ी कमी दिखाअी देती है—अर्थात् जब जमीन प्रति किसान २६ अेकड़से घटकर ११ अेकड़ तक रह जाती है या २१ अेकड़से घटकर १५ अेकड़ तक रह जाती है, तब दोनों ही सूरतोंमें अुत्पादनमें प्रति अेकड़ यह कमी नजर आती है। यह तो केवल गुजारेके लायक अुत्पादन कहा जायगा।

अिन तथ्योंकी चर्चा अेलनर पेंडेलकी पुस्तक 'पाप्युलेशन ऑन दि लूज' (विल्फ्रेड फंक, न्यूयॉर्क, १९५१) में हुअी है, जिसमें ये मुद्दे बताये गये हैं:

अुदाहरणके लिअे, अगर हम आधे किसानोंको जमीनसे हटा कर कारखानोंके काममें लगा दें तो अिन आंकड़ोंसे मालूम होता है कि कुल खेतीके लायक जमीनसे अुसका कुल अुत्पादन अुस

अुत्पादनका केवल ६८ प्रतिशत होगा, जो प्रति व्यक्तिके पीछे ५.५ अेकड़ जमीन होनेकी हालतमें होता था। अगर खुराकके साथ जनसंख्याका अनुपात अैसा हो कि ६८ प्रतिशत अुत्पादनसे अभी भी खेती करनेवाले और कारखानोंमें भेज दिये गये दोनों तरहके किसानोंको सन्तोषजनक रूपमें खिलाया जा सके तो यह परिवर्तन लाभप्रद होगा। यहां हम यह मान लेते हैं कि कारखानेका सारा माल प्रतिवर्ष बिक जाता है। अगर पहले होनेवाले सारे अन्न-अुत्पादनका ६८ प्रतिशत अुत्पादन कारखानेके मजदूरों और खेती करनेवाले किसानों दोनोंके लिअे काफी न हो, तो परिवर्तनका परिणाम यही होगा कि लगभग सभी संबंधित लोग भूखों मरेंगे। हा, कारखानोंमें तैयार होनेवाला माल दूसरे देशोंसे खुराक खरीदनेके काममें लिया जाय तो दूसरी बात है। परन्तु यद्यपि भारतमें कुछ वर्ष और अैसा किया जा सकता है, फिर भी अितना स्पष्ट है कि यह कोअी स्थायी हल नही है; क्योंकि दूसरे देशोंसे मिलनेवाली खुराककी मात्रा शायद जल्दी ही कम हो जायगी।

प्रति किसान २.६ अेकड़की सीमा तक यह कहा जा सकता है कि चीनके जैसी घनी खेतीकी परिस्थितियोंमें अधिक मजदूरोंकी अपेक्षा थोड़े मजदूर कुल मिलाकर कम अन्नोत्पादन करते हैं। किसी घनी आबादीवाले देशमें घनी खेती होनी चाहिये — भले ही अुत्पादनका प्रमाण काफी घट जाय तो भी — ताकि सारी आबादीके लिअे पर्याप्त खुराक मुहैया की जा सके। अलबत्ता, जब कोअी खेत ४ या ५ अेकड़से छोटा होता है तब अुत्पादन कार्य-क्षमताकी दृष्टिसे संतोषप्रद नहीं होता, फिर भी अुस समय तक कुल पैदावार बढ़ती रहती है जब तक खेत २.६ अेकड़से छोटा न हो। परन्तु प्रति किसान २.६ अेकड़से छोटे खेत हों तो भी, चीनी आंकड़ोके अनुसार, प्रति अेकड़ पैदावारमें और अिसलिअे कुल पैदावारमें अुतनी कमी नही होती जितनी प्रति व्यक्ति पैदावारमें होती है। अिसलिअे किसान जमीनसे चिपटा रहता है। संसारके व्यापार और जनसंख्याकी मौजूदा स्थितिमें लोगोंको खेतोंसे हटाकर कारखानोंमें ले जानेसे घनी आबादीवाले

देशमें खाद्यान्नकी कुल मात्रा बढ़ती नहीं। भारतको भी और सब देशोंकी भांति अपने ही अन्नोत्पादन पर अधिकाधिक निर्भर रहना पड़ेगा।

शिक्षित वर्गोंको काम देना चाहिये

अुद्योगीकरणकी हिमायत सरकार अिसलिअे भी करती है कि अभी जो शिक्षित नवयुवक बेकार हैं अुनके लिअे कामकी व्यवस्था की जाय।

कोअी भी अैसा समाज, जिसमें गरीब, शोषित और दुःखी किसान तथा बड़ी संख्यामें बेकार, सामाजिक प्रतिष्ठा चाहनेवाले और असंतुष्ट बुद्धिजीवी लोग मगन बने रहते हैं — जिन्हें अपने जीवनके महत्त्वका कोअी भान नहीं होता और जिनके सामने सिद्ध करनेको कोअी बड़ा अुद्देश्य नहीं होता — साम्यवाद या और किसी क्रान्तिकारी अुत्पातको निमंत्रण देता है। लोगोंको रुचिकर काम न दे सकनेका अर्थ है अुन्हें आत्म-सम्मान और गौरवसे वंचित करना। अिससे बहुत गहरा और स्थायी रोष अुत्पन्न होता है और जब अुसमें बुद्धिशाली लोग जुड़ जाते हैं तो वह बहुत प्रबल हो जाता है। भारतके सामने आज यह समस्या है और यदि वह लम्बे समय तक बनी रही तो संभवतः अुससे गंभीर खतरा पैदा हो सकता है।

भारतके कुछ जमींदार शायद यह सोचते हों कि किसानोंमें अितनी सूझ-बूझ, आत्म-विश्वास, शक्ति, संगठनकी योग्यता और नेतृत्व नहीं है कि वे गंभीर अुत्पात कर सकें। परन्तु लेनिन, गांधीजी, माओ, चाअू अेन लाअी और टीटोने दिखा दिया है कि जब किसानोंको बुद्धिमान और अीमानदार नेतृत्व मिल जाता है तब क्या हो सकता है। बहुतसे भारतीय साम्यवादी और दुःखी तथा बेकार बुद्धिजीवी लोग समझदार और लगन-वाले हैं और अिस समय आत्मत्यागकी भावना तथा सर्व-साधारणके नेतृत्वकी आकांक्षा रखते हैं। भारतमें साम्यवादियोंकी राजनीतिक शक्ति बढ़ती जा रही है।

अिन दिनों घटनाचक्र तेजीसे घूम रहा है। मैंने अपने ही जीवन-कालमें छह साम्राज्योंको मिटते या टूटते देखा है — पुराने चीन, पुराने रूस, आस्ट्रिया-हंगरी, अिंग्लैंड, फ्रांस और हॉलैण्डके साम्राज्य। रोमन

साम्राज्यके समयमें अिस तरहके परिवर्तनोंके लिअे आठ-दस शताब्दियोंकी जरूरत होती। पैंतीस वर्ष पहले दक्षिण भारतमें अछूत लोग ब्राह्मणोंके साथ अेक ही सड़क पर चल भी नहीं सकते थे। आज अुसी जातिका अेक आदमी वर्तमान भारतीय संविधानके मुख्य निर्माताओंमें से अेक था, अेक नीची जातिका नाडार मद्रास राज्यका मुख्यमंत्री है और अेक हरिजन मद्रास राज्यके मंत्रि-मंडलमें जिम्मेदारीके पद पर है। अिन सब घटनाओंका अर्थ है आर्थिक और राजनीतिक सत्ताका हस्तान्तरण और पुनर्वितरण। प्रवाह अितना प्रबल और व्यापक है कि अुसे रोका या टाला नहीं जा सकता। बुद्धिमानीका तकाजा यही है कि अुसके साथ साथ चला जाय। कल्पनाशील प्रेमपूर्ण सहृदयता बुद्धिमानीका ही दूसरा नाम है।

भारत-सरकारका औद्योगिक कार्यक्रम विश्वविद्यालयोंके स्नातकोंको अधिकाधिक संख्यामें औद्योगिक रोजगार देनेका प्रयत्न कर रहा है। अिससे किसान क्रान्तिकारी नेतृत्वसे वंचित होंगे। परन्तु अुद्योगोंमें केवल प्रशिक्षित यंत्र-विशेषज्ञोंको ही यह रोजगार दिया जा सकता है और वह भी धीरे-धीरे। कारखाने बनानेमें समय लगता है और यंत्र-विशेषज्ञोंको तालीम देनेमें तो और भी अधिक समय जरूरी होता है। और भारतीय विश्वविद्यालय, जो अंग्रेजों द्वारा पराधीन क्लार्क पैदा करनेके लिअे शुरू किये गये थे, अपने पाठ्यक्रमोंमें समयानुकूल संशोधन नहीं कर पाये हैं। वे अभी तक अैसे अनेक स्नातक पैदा कर रहे हैं जो स्वयं कोअी विचार नहीं कर सकते और जो हाथसे काम करना अपनी शानके खिलाफ समझनेके कारण बेकार रहते हैं। बुनियादी तालीम अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण है; अुद्योगपतियोंको अपनी ही रक्षाके लिअे अुसे सर्वत्र प्रोत्साहन देना चाहिये।

आम जनताकी क्रयशक्ति

जहां तक अुद्योगीकरणका हेतु आम जनताकी क्रयशक्ति बढ़ानेका है, यह हेतु बहुत समय बाद ही सिद्ध किया जा सकता है। शुरू शुरूके औद्योगिक अुत्पादनका बड़ा हिस्सा पहले शायद अन्य कारखानोंके लिअे

भारी मशीनों और अन्य सामग्रीका अुत्पादन होगा। फिर ये कारखाने अुपभोक्ताओं — लोगों — के लिअे माल तैयार कर सकते हैं।

पाश्चात्य पूंजीवादी अुद्योगवादके आरंभिक कालमें, खास तौर पर अिंग्लैण्डके कारखानोंके मालके लिअे अुन देशोंमें विशाल मंडियां थीं, जहां अुस समय तक अुद्योगीकरण नहीं हुआ था। अिसलिअे वे अुद्योगपति अपनी मंडियोंको हानि पहुंचाये बिना अपने यहांके आम लोगोंका निर्दयतासे शोषण कर सके। परन्तु अब चीन और भारतमें सलामतीके साथ अैसा नहीं किया जा सकता। दूसरे राष्ट्रोंकी तीव्र प्रतियोगिताके कारण भारत और चीनके पास अैसी विशाल बाहरी मंडियां नहीं हैं। अुनकी मंडियां ज्यादातर अुनके अपने ही लोगोंमें होंगी। अिसलिअे भारतके अुद्योग-पतियोंको गांधीजीके कार्यक्रमकी जोरदार हिमायत करना चाहिये, क्योंकि आम जनताकी क्रयशक्ति बढ़ाने और कारखानोंके मालके लिअे मंडी पैदा करनेका यही अुत्तम अुपाय है।

निर्यातका माल

अुद्योगीकरणका पांचवां हेतु निर्यातके लिअे माल पैदा करना है। परन्तु यदि भारतमें खेतीकी पैदावार बढ़ा ली जाय और अुद्योगीकरणका आन्दोलन जरा मंद कर दिया जाय, तो मशीनोंके दाम चुकाने और बाहरसे बहुत बड़ी मात्रामें अन्न मंगानेके लिअे मालका बड़ा निर्यात करनेकी जरूरत अुतनी नहीं रहेगी।

अुद्योगीकरणके और भी प्रयोजन हो सकते हैं, जिन्हें शायद मैं न देख सका होअूं। अिसके पीछे पैसा बनानेकी अिच्छा तो होती ही है, यह कहनेकी जरूरत नहीं। केवल वाणिज्य-व्यवसायको बढ़ानेके लिअे आकाश-पाताल अेक करनेमें तो मुझे राष्ट्रके लिअे कोअी लाभ दिखाअी नहीं देता। अुससे तो केवल मुट्ठीभर लोग ही जन-साधारणको और भारतीय संस्कृतिके जीवनको हानि पहुंचा कर धन कमा सकेंगे।

अुद्योगीकरणके लिअे आवश्यक पूंजी कैसे प्राप्त की जाय?

अुद्योगीकरणके लिअे विशाल मात्रामें पूंजी जमा करनी पड़ती है। अुसके लिअे विदेशोंसे मशीनोंकी भारी खरीदारी करनेकी जरूरत होती है। जब ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी, संयुक्त राज्य अमरीका, कनाडा, आस्ट्रेलिया और दूसरे देशोंमें अुद्योगीकरण हुआ, तब वहां खानगी पूंजीपति — अकसर विदेशी — अैसे थे, जो अिन कामोंके लिअे बड़ी रकमें अुधार देनेको तैयार थे। अिसमें बड़े मुनाफोंकी संभावना थी और अुनकी तुलनामें खतरे बहुत कम थे। पैसेके रूपमें पूंजीकी गति अेक देशसे दूसरे देशमें काफी होती थी। अब, जब कुछ भारतीय तेजीसे देशका अुद्योगीकरण करना चाहते हैं, विदेशी खानगी पूंजी बड़ी मात्रामें भारतमें लगानेके लिअे अुपलब्ध नहीं है। भारतमें अैसी कुछ पूंजी है, परन्तु वह विकास-कार्यको गति देनेके लिअे पर्याप्त नहीं है। विश्ववैंकसे कुछ ॠण मिल सकता है और कुछ सहायता कोलम्बो योजनासे मिल सकती है तथा कुछ आर्थिक सहायतायें या कर्ज संयुक्त राज्य अमरीकाकी सरकारसे मिल सकते हैं। परन्तु मुझे अंदेशा है कि ये काफी नहीं होंगे।

जब रूस और जापानने जल्दी जल्दीमें अुद्योगीकरण किया, तब वे आवश्यक पूंजी आम जनताको हानि पहुंचाकर, अुनका जीवन-स्तर नीचा रखकर ही अिकट्ठी कर सके थे। रूसमें तानाशाही और जापानमें सामन्तशाही थी, अिसलिअे वे अैसा करनेमें सफल हुअे; यद्यपि रूसमें आतंकवादसे ही सफलता मिली, जिसके फल कअी वर्ष तक पकते रहेंगे और रूसमें गंभीर दुर्बलताअें अुत्पन्न करते रहेंगे। चीन भी कुछ अिसी ढंगसे अब अुद्योगीकरणकी कोशिश कर रहा है। अभी हमें अुसके परिणाम और कीमत दोनों देखने हैं।

लेकिन अगर भारतमें आज किसानोंको अिस तरह चूसनेका प्रयोग किया गया, तो मुझे भय है कि अुससे मुसीबत खड़ी हो जायगी। अिसके परिणामस्वरूप और भी अधिक बेकारी फैलेगी और शायद लाखों लोगोंको भुखमरी, भयंकर कष्ट और सामाजिक तथा आर्थिक अुथल-पुथलका

शिकार बनना पडेगा। किसानों और साम्यवादियोंके अुत्पातसे बचनेके लिअे सरकार खादी और ग्रामोद्योगोंको आर्थिक मदद करके बुद्धिमत्ता दिखा रही है। मेरे खयालसे अुद्योगीकरणकी गति धीमी रखने और गांधीजीके कार्यक्रमको अधिक मजबूतीसे आगे बढ़ानेमें ही समझदारी होगी। सरकार अुद्योगों पर जोर देती रहे तो भी मुझे आशा है कि गांधीवादी तो अपने कार्यक्रम पर सख्त और अधिक दृढ़तासे बल देते ही रहेंगे।

अुद्योगीकरणसे किसानोंको लाभ होगा?

सरकारके औद्योगिक कार्यक्रमसे यह आशा रखी जाती है कि अन्तमें किसानोंको लाभ होगा, परन्तु यह स्पष्ट नहीं है कि पहले और लम्बे अर्से तक जिस लाभका काफी बड़ा भाग बैंकवाले और मौजूदा बड़े अुद्योगपति क्या न हथिया लेंगे। यह कहकर मैं भारतीय पूंजीपतियोंके खिलाफ कोअी कठोर, अन्यायपूर्ण अथवा पक्षपातवाली बात नहीं कह रहा हूं. मेरा आशय अितना ही है कि वे मनुष्य हैं और अिसलिअे अुन पर भी सत्ताका जहर अुतना ही असर कर सकता है जितना किसी अन्य राष्ट्र या जातिके किसी और मनुष्य पर। परमात्मा अुद्योगपतियोंके हृदयमें भी अुसी तरह निवास करते हैं जिस तरह सन्तोंके हृदयमें, परन्तु अुद्योगपतियोंकी विचार करनेकी आदतें अुस भगवानके प्रगट होनेमें भारी रुकावट बन जाती हैं। किन्तु अुचित और दीर्घ समयके प्रोत्साहनसे भगवान वहां भी प्रगट हुअे बिना नहीं रह सकते।

अुद्योगवादके दूसरे खतरे

सरकारका अुद्योगीकरणका कार्यक्रम हमें सीधा अुन तेरह खतरोंकी तरफ ले जाता है, जिनका वर्णन मैंने पूंजीवादी अुद्योगवाद पर चर्चा करते हुअे दूसरे परिच्छेदमें विस्तारसे किया है। क्योंकि सरकारके स्वामित्व, संचालन या निरीक्षणवाले अुद्योगोंमें भी खतरे बहुत कुछ बुनियादी तौर पर होते हैं। आपकी याद ताजी करनेके लिअे मैं यहां अुन्हें फिर दोहरा दूं। वे खतरे ये हैं जंगलोंका विनाश, धरतीका कटाव, प्राकृतिक साधन-

सम्पत्तिका अपव्यय, लोगोंके स्वास्थ्यको हानि पहुंचाना, अुपभोक्ताओंको दूषित करना, शिक्षाको क्षति पहुंचाना, अेक ही तरहके कामसे अुकताहट, अितना जल्दी जल्दी परिवर्तन करना जिसे मनुष्य हजम न कर सके, समाजकी अेकताको नष्ट करना, प्रकृति पर आक्रमण, हिसाब-किताबके सही तरीकोंका भंग और सैनिकवाद।

अुद्योगवाद सीमित होना चाहिये

मैं यह नहीं कह रहा हूं कि भारतमें अुद्योगीकरण होना ही नहीं चाहिये। परन्तु मेरा अनुरोध यह है कि अुस पर निश्चित और प्रबल मर्यादाअें लगाअी जायं; अुसकी दिशा अैसी होनी चाहिये जिससे प्रकृतिके साथ अुसका मेल रहे; और अुसके प्रकारोंका पुनर्विभाजन किया जाय। मैं चाहूंगा कि किसी भी कारखाने, मिल या औद्योगिक प्रक्रियाओंके रासायनिक पदार्थों, रंगों और कचरेसे नदी-नालोंको गंदा करनेका काम बिलकुल रोक दिया जाय। मैं चाहूंगा कि खाद्य-पदार्थ तैयार करनेमें जिन क्रियाओंसे मानव-शरीरके लिअे आवश्यक क्षार और विटामिन (जीवन-तत्त्व) नष्ट हो जाते हैं अुन पर कड़ी पाबन्दियां लगा दी जायं। अुदाहरणार्थ, ये क्रियाअें शक्करके कारखानों, चावल कूटनेवाली मिलों और गेहूंका मैदा बनानेवाले कारखानोंमें होती हैं।

प्रेसिडेन्ट ट्रूमैन द्वारा नियुक्त कच्चे मालकी नीतिसे सम्बन्ध रखनेवाले कमीशनकी रिपोर्टमें कहा गया था कि जिन देशोंमें औद्योगिक विकास हुआ है और जहां संसारकी अेक-चौथाअी आबादी निवास करती है, वहां १९५० में संसारकी खानोंसे निकलनेवाले लगभग ९५ प्रतिशत खनिज पदार्थ खर्च हुअे। परन्तु जो देश अब जल्दी जल्दी औद्योगिक विकास करना चाहते हैं और जहां संसारकी तीन-चौथाअी आबादी निवास करती है, अुन्होंने लगभग ५ प्रतिशत खर्च किये। अिस तथ्यके साथ अन्नकी मौजूदा विश्वव्यापी कमी और भारतीय कोयलेके भण्डारकी मात्रा और प्रकारोंको मिलाकर देखें, तो यह नतीजा निकलता है कि भारतीय अुद्योगीकरणका ढंग अुन देशोंके ढंगसे भिन्न होगा, जहां अुद्योगीकरण पहले हुआ था। हमें

यह भी विश्वास नहीं हो सकता कि अुद्योगीकरणकी गति आबादीके बढ़नेकी गतिसे ज्यादा तेज रहेगी।

भारतीय अर्थ-व्यवस्थाका आधार और भार खेती पर होना चाहिये

मेरी समझसे अेशियाकी घनी आबादीवाले देशोंको अपने गुजरके लिये काफी अन्न प्राप्त करने और अपनी सम्पनाओंको रक्षाके लिअे अपनी समग्र अर्थ-व्यवस्थाका आधार अुद्योगवाद पर न रखकर सुधरी हुअी खेती पर रखना चाहिये। डेन्मार्कने सफलतापूर्वक यही किया है। जैसे जैसे दुनियाकी आबादी बढ़ेगी और धरतीका कटाव जारी रहेगा, वैसे वैसे घनी आबादीवाले देश खरीद कर या दानके रूपमें भी दूसरे देशोंसे अधिकाधिक कम मात्रामें ही अन्न प्राप्त कर सकेंगे। मेरे अन्दाजसे थोड़े ही अरसेमें दूसरे देशोंके पास अितना अतिरिक्त अन्न नहीं बचेगा कि वे दूसरे देशोंको दे सकें।

यह अेक गम्भीर स्थिति है, जिसका भारतके अुद्योगपतियों, जमींदारों और सरकारी कर्मचारियोंको सामना करना होगा। अुन्हें भारतमें अैसी परिस्थिति पैदा करनी चाहिये, जिससे अच्छे अन्नका अधिकसे अधिक अुत्पादन सतत और स्थायी होता रहे। लक्ष्य यह नहीं होना चाहिये कि खेतीमें प्रति मजदूर अधिकसे अधिक अुत्पादन हो, परन्तु यह होना चाहिये कि प्रति अेकड़ ज्यादासे ज्यादा अुत्पादन हो। अिसीसे अधिकसे अधिक कुल अुत्पादन होता है।

आबादीसे अन्नका संबंध

परन्तु दरिद्रताकी समस्या अिस बात पर निर्भर करती है कि भौतिक सामग्री और जनसंख्याकी मात्राओंमें क्या अनुपात है। किसी द्वीप पर अन्न, वस्त्र और मकान बहुत थोड़े ही क्यों न हों, लेकिन अगर वहांके लोगोंकी संख्या भी बहुत थोड़ी है तो सामग्री बहुतायतसे चारों ओर अुपलब्ध रहेगी और लोग आनन्दमें जीवन बिता सकेंगे। अिस दृष्टान्तके लिअे मैं यह मान लेता हूं कि दूसरे स्थानोंके साथ अिस द्वीपका कोअी व्यापार नहीं होता। परन्तु यदि अन्न, कपड़े या मकानोंकी तुलनामें लोग बहुत

ज़्यादा हों तो वहां गरीबी होगी। अुदाहरणार्थ, संयुक्त राज्य अमरीकामें भौतिक सामग्री विशाल पैमाने पर अुपलब्ध है और मनुष्य १७ करोड़ हैं। अगर वहां अिस सामग्रीका वितरण न्यायपूर्ण हो तो वहां गरीबी नहीं होगी, क्योंकि जनसंख्या अभी तक साधन-सामग्रीकी मात्राके बराबर तक नहीं पहुंची है। लेकिन यदि जनसंख्या बढ़ती ही रही और साधन-सामग्रीका अपव्यय जारी रहा, तो वहां जल्दी नहीं तो कमसे कम अगले ७५ वर्षोंमें आजसे कहीं अधिक गरीबी हो जायगी। गरीबीके पैदा होनेमें लोगोंकी संख्याका या साधन-सामग्रीकी मात्राका महत्त्व नहीं होता; महत्त्व अिन दोनोंके बीचके अनुपातका होता है।

आज तक मानव-जातिने अपना सारा ध्यान समस्याके अेक पहलू पर केन्द्रित किया है — अर्थात् भौतिक पदार्थोंके अुत्पादन और वितरण पर केन्द्रित किया है।

संसारमें सब जगह धरतीका कटाव बुरी तरह बढ़ जाने और साथ ही जनसंख्याकी व्यापक वृद्धि होनेके कारण अेक सर्वथा नअी परिस्थिति पैदा हो गअी है। अुसके भयंकर परिणामोंके कारण — और अिनका वर्णन हमारी भूमिकामें किया गया है — स्वाभाविक अनिच्छा होते हुअे भी हम जनसंख्याके बारेमें थोड़ा गंभीर विचार करनेको विवश हो गये हैं। अगर हमें दरिद्रता कम करके शान्तिका अुपभोग करना है, तो हम अेक ओर अन्न तथा सामग्रीके अुत्पादन और दूसरी ओर जनसंख्याके बीचके अूपर बताये सम्बन्धकी अुपेक्षा नहीं कर सकते। नअी परिस्थितिमें अिस सम्बन्धके दोनों पहलुओं पर विचार करके अुनका निपटारा करना होगा।

परिवार-नियोजन या संतति-नियमनकी जरूरत

प्राणीमात्रके प्रति हिन्दुओंका प्रेमभाव, जिसका प्रमाण शाकाहार है, गायकी पवित्रता है और किसी भी पशुका वध न करना है, वनस्पति-जगत, जन्तु-जगत, पशु-जगत और मनुष्य-जातिके समन्वयकी सर्वथा सही दृष्टि है। बौद्ध धर्मके सिवा और किसी भी महान धर्मकी अपेक्षा हिन्दू धर्म प्रकृतिके साथ मनुष्यके सही सम्बन्ध पर अधिक जोर देता है।

यह दुनियाके लगभग सारे देशोंसे भारतके लिअे अधिक लाभदायी है। हिन्दू धर्ममें वनस्पति, जीव-जन्तु, पशु और मनुष्य — सभी विभिन्न प्रकारके प्राणियोंके बीच अेक स्वाभाविक सन्तुलन और सम्बन्ध है। यदि जीवनको किसी तरह टिकाये रखना हो तो अिस सम्बन्ध और सन्तुलनको अिसी रूपमें बनाये रखना होगा। जब मनुष्य निरा खाद्य संग्रह करनेवाला नहीं रह गया और पशुपालक बनने लगा, तो अुसने प्राकृतिक सन्तुलनमें हस्तक्षेप करना शुरू किया। जब अुसने कृषिका विकास किया तो जन्म और मृत्युके प्राकृतिक सन्तुलनमें और भी अधिक हस्तक्षेप किया। लकड़ी काटना, हल चलाना, खाद काममें लेना, पौधे लगाना और फसल काटना — वनस्पति जगतके 'जन्म' और मृत्युके क्रममें हस्तक्षेप करने और अुसे नियन्त्रित करनेके मार्ग ही हैं।

अब चूंकि पृथ्वी पर स्त्री-पुरुषोंकी आबादी जरूरतसे ज्यादा हो गयी है, अिसलिअे अुन्हें अपनी प्रजोत्पत्तिको नियन्त्रित करने लग जाना चाहिये। अुन्हें अपनी व्यवस्था कुछ वैसी ही कर लेनी चाहिये, जैसी अुन्होंने प्रकृतिकी कर ली है। जब अुन्होंने बाह्य जगतके जीवनको अितना नियन्त्रणमें रखना सीख लिया है, तो अब अपने भीतरी और बाहरी जीवन और अुसकी प्रक्रियाओं पर भी अुसी तरह नियन्त्रण रखना अुन्हें सीख लेना चाहिये। जनसंख्या कम करनेके अुपायके रूपमें (और भारतमें वह कम होनी ही चाहिये) किसी न किसी तरहका परिवार-नियोजन या संतति-नियमन विशाल और बार बार पड़नेवाले अकालों, अधूरे पोषण और रोगोंकी अपेक्षा ज्यादा अच्छा है। क्योंकि अिन तीनोंके कारण दरिद्रता, दुःख, अधःपतन, निराशा और अन्तमें संस्कृति और सभ्यताका नाश आदि परिणाम पैदा होते हैं। कुछ भी हो, अिस नियन्त्रणके अभावमें भारतके नर-नारी न केवल अपना और अपनी सन्तानोंका नुकसान और पतन कर रहे हैं, बल्कि अिसके द्वारा वे प्रकृतिको भी हानि पहुंचायेंगे और रेगिस्तानोंकी वृद्धि करेंगे। बिना सोचे-विचारे सन्तान पैदा करते रहना अेक प्रकारकी हिंसा और सांस्कृतिक आत्महत्या हो जाती है।

आयरलैण्डवासियोंने क्या किया?

आयरलैण्डके किसानोंने साबित कर दिया कि अेक विशेप प्रकारका आत्म-संयम बड़े पैमाने पर भी संभव है। आयरलैण्डमें १८४७–५२ के भयंकर अकालोंके बाद किसानोंने अपने पादरियों और राजनीतिज्ञोंकी सलाहके विपरीत विवाह करना कम कर दिया। और पहलेकी अपेक्षा वे काफी बड़ी अुम्रमें विवाह करने लगे। विवाह द्वारा अुन्होंने अपने छोटे छोटे खेतोंका अेकीकरण करना भी आरम्भ कर दिया। अिससे आम तौर पर अुनके खेत अितने बड़े हो गये, जिनमें लाभदायक खेती की जा सके। आजकल आयरलैण्डमें कुआरों और बूढ़ी कुमारिकाओंकी संख्या शेप जनसंख्याकी तुलनामें बहुत बड़ी है; जन्मसंख्या यूरोपमें कमसे कम है; जनसंख्या १८४५ से लगभग आधी कम है और सम्पत्ति प्रति व्यक्ति कुछ वर्ष पहले थोड़े समयके लिअे यूरोपमें अधिकसे अधिक बताअी जाती थी। मगर अिस समय १९५७ में वहां अेक लाख आदमी बेकार हैं, आर्थिक स्थिति गंभीर बताअी जाती है और हम पढ़ते हैं कि आयरलैण्डसे बाहर जाकर बसनेवालोंकी वार्षिक संख्या ५० हजार तक पहुंचती है। यह कहानी रॉबर्ट सी० कूक द्वारा लिखित पुस्तक 'ह्यूमन फर्टिलिटी: दि मॉडर्न डायलेमा' में कही गअी है। जन्मसंख्या और अत्यधिक जनसंख्याके दबावको रोकनेका कमसे कम अेक तरीका यह है; और यह ध्यान देनेकी बात है कि अिसमें सफलता स्वयं किसानोंकी सूझसे, कानून या सरकारी कमीशनोंके बिना और रोमन कैथोलिक सम्प्रदाय तथा राजनीतिज्ञोंके विरोधके बावजूद मिली। मैं अिसका न तो समर्थन कर रहा हूं, न विरोध कर रहा हूं; अिस विषयमें मैं अत्यन्त अनभिज्ञ हूं। परन्तु यह अेक सत्य है, भले अुसका महत्त्व जो भी हो।

अप्रत्यक्ष संतति-नियमन

प्रत्यक्ष संतति-नियमन ही अिसका अेकमात्र अुपाय नहीं है। कअी अप्रत्यक्ष अुपायोंसे भी जन्मसंख्या कम हो जाती है। जनसंख्याका अध्ययन करनेवालोंको अिनमें से दो अुपाय सुविदित हैं। वे हैं शिक्षा और

भौतिक समृद्धि। ये दोनों आम तौर पर साथ साथ चलती हैं और अेक-दूसरेको प्रभावित करती हैं।

१९४० की अमरीकी जनगणनाकी रिपोर्टका कहना है कि जो स्त्रियां प्राथमिक शालाकी शिक्षा पूर्ण नहीं कर सकीं अुनमें से २॥ प्रतिशतके ५ वर्षसे कम अुम्रके तीन या अधिक बच्चे थे, परन्तु जो स्त्रियां कॉलेजकी स्नातिकायें बन गओीं अुनमें अेक प्रतिशतसे आधी स्त्रियोंके ही इतने बच्चे नहीं थे। जनगणनाके आंकड़ोंसे यह भी सिद्ध होता है कि शालाकी चार सालकी शिक्षासे अधिक शिक्षा पानेवाली स्त्रियोंमें भी जन्म-संख्या घटती है और शिक्षाके हर अधिक वर्षका परिणाम अुन स्त्रियोंके लिअे अधिक कम बच्चोंमें आता है। अशिक्षित और शिक्षित स्त्रियोंके बीचका जन्मसंख्याका यह अन्तर अमरीकाकी गोरी और हबशी दोनों तरहकी स्त्रियों पर समान रूपसे लागू होता है। अुसी जनगणनासे प्रगट हुआ कि अेक हजार देशी गोरी अशिक्षित स्त्रियोंके ३,१४५ बच्चे थे, जब कि चार-पांच वर्ष तक कॉलेजमें शिक्षा पाओी हुओी अेक हजार गोरी स्त्रियोंके केवल ७७६ बालक ही थे। अेक हजार अशिक्षित हबशी स्त्रियोंके ३,३४५ बच्चे थे, परन्तु अेक हजार हबशी स्त्री-स्नातिकाओंके केवल ७०१ ही बच्चे थे। यही स्थिति रोमन कैथोलिक और प्रोटेस्टेन्ट स्त्रियोंकी थी। जाति या धर्म अलग अलग होनेसे अिस बातमें फर्क नहीं पड़ता। शिक्षा जितनी अधिक होगी अुतनी ही सन्तानें कम होंगी। ग्रेट ब्रिटेनमें भी यही स्थिति है, और यद्यपि दूसरे देशोंके आंकड़े मेरे पास नहीं हैं, फिर भी शायद सब देशोंमें अैसा ही होगा। भारतके जन्मसंख्याके आंकड़े, जिनका संग्रह और अध्ययन किंग्स्ले डेविसने किया है, यही फर्क बताते हैं, माताओंकी शिक्षासे जन्मसंख्या कम हो जाती है। किन्तु अमरीकामें पिछले छह-सात वर्षोंमें मध्यम वर्गके शिक्षित विवाहित युवक-युवतियोंमें जन्मसंख्या बढ़ी है। अिसका कारण स्पष्ट नहीं है।

दूसरे अप्रत्यक्ष अुपायके बारेमें सर्वोच्च जीवन-स्तरवाले संयुक्त राज्य अमरीका, अिंग्लैण्ड, नार्वे, स्वीडन, डेन्मार्क, स्विट्ज़रलैण्ड, न्यूज़ीलैण्ड और

आस्ट्रेलियामें सबसे कम जन्मसंख्या है। किन्तु, जैसा अूपर बताया गया है, अमरीकामें हालमें अिसका अपवाद देखनेमें आया है। जिन देशोंमें लोग कुल मिलाकर अत्यन्त गरीब हैं, जैसे भारत, लंका, पुअेर्टो रिको, फारमोसा, जापान और मिस्र, वहां सबसे अधिक जन्मसंख्या है। यदि हमारे पास चीनकी जनगणनाके सही आंकड़े हों तो निःसन्देह वह भी अिसी श्रेणीमें आयेगा। संयुक्त राज्य अमरीकामें अपेलेशियन गिरि प्रदेशके और न्यू मेक्सिकोके पहाड़ी लोगोंमें, जो अुस देशमें सबसे गरीब वर्ग है, जन्मसंख्या अधिकांश पूर्वी देशोंसे भी अधिक है। अिसलिअे यह स्पष्ट है कि माता-पिताकी भौतिक सम्पन्नतासे अकसर जन्मसंख्या कम हो जाती है।

अिस तरहका भी कुछ, लेकिन वह निर्णायक नहीं है, प्रमाण है कि किसी भी प्रकारकी गहरी और दीर्घ असुरक्षिततासे, चाहे वह आर्थिक हो या अधूरे पोषणसे संबन्धित हो अथवा निम्न सामाजिक स्थितिके कारण हो, जन्मसंख्या बढ़नेकी संभावना रहती है। खेतीकी किसी रस-कसहीन जमीनमें पूरी आवश्यक संख्यामें क्षार न हों या अुनका अुचित संतुलन न हो और अिस कारण अुसमें पैदा हुअे खाद्यान्नमें भी यही त्रुटि हो, तो अुसका परिणाम भी अैसी असुरक्षितताकी भावना पैदा करनेमें आ सकता है। और अुससे जन्मसंख्या बढ़ सकती है। जैसे किसी पौधेको बुरी तरह हानि पहुंचने पर अुसमें तुरन्त फल आने लगते हैं, ठीक वही स्थिति मानव-प्राणियोंकी होती दिखाअी देती है। जब परिस्थितिवश किसी मानव-समूहके समूल नष्ट होनेका खतरा पैदा हो जाता है, तब शायद जल्दी जल्दी अुनकी संख्या कअी गुनी बढ़ने लगती है।* यह अेक रस-

* अिस पुस्तकके प्रथम (१९५२ के) संस्करणमें मैंने ब्राजीलके अेक डॉक्टर जोसुअे दि कैस्ट्रोकी पुस्तकका वर्णन और सार दिया था। अुसका तर्क यह था कि जो मानव-समूह अति दरिद्रताके कारण प्रोटीनवाले खाद्य कम ले पाते है, अुनमें जन्मसंख्या अधिक होती है; और अिसलिअे अत्यधिक जनसंख्याका कारण आर्थिक शोषण होता है। अुसके बाद मैंने जो आलोचनायें और अधिक प्रमाण देखे है अुनसे मुझे यह विश्वास हो

अद अनुमान है, परन्तु और अधिक प्रमाणोंके बिना यह अभी सिद्ध नहीं हुआ है।

दवादारू, सफाअी और सार्वजनिक स्वास्थ्य-सम्बन्धी अुपायोंसे हमने मृत्युके काममें हस्तक्षेप किया है। चूंकि जन्म और मृत्युकी परस्पर विरोधी जोडी है, और दोनोंको कुछ-कुछ साथ चलना होता है, अिसलिअे अब हमें अुतना ही हस्तक्षेप जन्मके काममें भी करना होगा।

परन्तु आजकल सन्तति-नियमन या परिवार-नियोजनका सारा विषय अत्यन्त जटिल है। अिसमें प्राणिशास्त्र, शरीर-शास्त्र, जीव-रसायन, मनोविज्ञान, भावना और कला-अभिरुचिका विचार करना पडता है। रीति-रिवाज, सदाचार, धर्म, जनसंख्या, लोकमत और सरकारी नीतिका भी विचार करना पडता है। अिसकी सम्पूर्ण चर्चाके लिअे तो कअी पुस्तकें चाहिये।[१] मेरे पास न तो अितना स्थान है और न अितनी योग्यता है कि सारी बातोंकी चर्चा कर सकूं। मैं अितना ही कर सकता हूं कि किसी

गया है कि डॉ॰ कैम्प्टोकी दलीलें, जिस ढगसे अुन्होंने पेश की थीं, ठीक नहीं थीं। कुछ देशोंकी अधिक जन्मसंख्याका कारण कम प्रोटीनवाला आहार नहीं रहा होगा, बल्कि अुसका कारण शायद अुनकी भूमिमें कुछ क्षारोंकी कमी या क्षारोंका असन्तुलन रहा होगा।

१ अिस विषय पर मैं जो अच्छीसे अच्छी पुस्तकें जानता हूं अुनमें से अेक है 'अेडेप्टिव ह्यूमन फर्टिलिटी'— लेखक पॉल अेस॰ हनशॉ, पी-अेच डी॰, मैक-ग्रॉहिल बुक क॰, न्यूयॉर्क अेण्ड लन्दन, १९५५। अुसमें पक्ष-विपक्षकी सभी बातोंकी चर्चा शान्त, न्यायपूर्ण, सहानुभूतिपूर्ण, वैज्ञानिक और अुदार ढगसे की गअी है। दूसरी बहुत अच्छी पुस्तक है 'पापुलेशन अेण्ड प्लान्ड पेरेन्टहुड'— लेखक अेस॰ चन्द्रशेखर, पी-अेच॰ डी॰, अेलन अेण्ड अन्विन, लदन, १९५५। ध्यानपूर्वक विचार करनेवाले लोग अिस विषय पर गांधीजीके निबंध पढना चाहेंगे, जिनका संग्रह 'सेल्फ-रेस्ट्रेन्ट वर्सेस सेल्फ-अिडल्जेन्स' नामक अेक ही ग्रंथमें किया गया है, जो नवजीवन, अहमदाबाद-१४ द्वारा प्रकाशित किया गया है।

न किसी प्रकारके संतति-नियमनके महत्त्व पर अधिकसे अधिक जोर देकर अुसके पालनका अनुरोध करूं। मैं माल्थुसवादका नया पुजारी नहीं हूं, अर्थात् मैं प्रत्यक्ष संतति-नियमनको ही अिस संसारव्यापी समस्याका अेकमात्र हल नहीं मानता। परन्तु मैं अुसे अिसके हलका अेक भाग और अत्यंत महत्त्वपूर्ण भाग मानता हूं। और भी अनेक बातें हैं जिनसे वांछित अुद्देश्यकी पूर्तिमें सहायता मिलेगी। परन्तु संतति-नियमन अुनमें से अति आवश्यक वस्तु है।'[1]

समस्या हल की जा सकती है

भारतकी गरीबीकी समस्यायें हल करनेके लिअे कदाचित् संतति-नियमनके प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों तरहके अुपायोंके व्यापक प्रयोग और परिणाम आवश्यक होंगे। कुल मिलाकर भारतकी समस्यायें अत्यंत कठिन हैं; वे धीरे धीरे ही हल हो सकती हैं; आगे और भी कष्ट सहने होंगे; परन्तु समस्यायें हल की जा सकती है और की जायंगी।

---

१. अिस निबन्धके प्रथम संस्करणमें मैंने बृहदारण्यक अुपनिषद् — ६–४–६ और १३ का अेक अंश — में सुझाये गये अुपायका अुल्लेख किया है। वह तत्त्वतः वही है जिसे पश्चिममें 'सेफ पीरियड' (सुरक्षित काल) कहते हैं। परन्तु अुसके बाद ध्यानपूर्वक जांच करने पर वह अविश्वसनीय मालूम हुआ है।

६

विवेकपूर्ण अुद्योगवादकी सिफारिश

मेरा विश्वास है कि अेक अैसा अुद्योग है जो काफी 'बड़ा हो सकता है, परन्तु जो गाधीजीके अधिकांश सिद्धान्तोंके साथ, जैसा मैंने अुन्हें समझा है, मेल खा सकता है। मेरे खयालमें अुद्योगवादके अधिकतर स्वरूपोंके खिलाफ अुन्हें जितनी आपत्ति थी अुससे अिस प्रकारके अुद्योगके खिलाफ अुन्हें कम आपत्ति होती।

अपने 'खद्दरका अर्थशास्त्र' ('अिकानॉमिक्स ऑफ खद्दर'*) में, जिसे गाधीजीने पसन्द किया था और जो १९२७ में लिखा गया था तथा बादमें १९३१ में और पुन १९४६ में संशोधित किया गया था, मैंने समझाया था कि अिजीनियरिंग और आर्थिक योजनाकी दृष्टिसे खादी बनाना सही और लाभप्रद है। अिसका अेक कारण यह है कि वह सूर्यकी शक्तिको मनुष्यके लिअे अुपयोगी बनानेका अेक अुपाय है। अधिकारपूर्ण वैज्ञानिक तथा शिल्प-विज्ञान सम्बन्धी अध्ययनके आधार पर मैंने अुसमें समझाया था कि सूर्यसे हमें प्रतिवर्ष कितनी विशाल मात्रामें प्रकाश-शक्ति मिलती है। मैंने कहा था कि विवेकशील सभ्यतायें वे हैं जो प्राचीन कालमें अेकत्रित सूर्यशक्तिकी पूजी अर्थात् कोयले और पेट्रोलके बजाय सूर्यशक्तिकी वार्षिक आय पर मुख्यत निर्भर करती हैं।

सूर्यशक्तिके बारेमें अुस जानकारीका कुछ सिंहावलोकन यहा हम कर लें। वह किसी भी देशमें पाअी जानेवाली या आनेवाली शक्तिकी सबसे बड़ी मात्रा है। वह सारी सम्पत्ति और जीवनका स्रोत है। अुस शक्तिका तुरन्त काम आनेवाला भाग मुख्यत वह है जो पृथ्वी पर पड़ता है। जिसका जमीन पर स्वामित्व और नियत्रण है अुसे यदि सूर्यशक्तिका

---

* नवजीवन द्वारा प्रकाशित।

अुपयोग करना आता है, तो अुसके हाथमें अुतनी सम्पत्ति ही होती है अैसा समझना चाहिये।

हॉर्वर्ड विश्वविद्यालयके ज्योतिर्विद डी० अेच० मेंज़ेलने सूर्यके अभी हालके अध्ययनमें कहा है कि संयुक्त राज्य अमरीकाके अक्षांश पर दोपहरमें सूर्य पृथ्वीतल पर प्रति वर्गगज लगभग अेक अश्वशक्ति जितनी शक्ति भेजता है। भारत पर, जो भूमध्यरेखाके अधिक निकट है, अिस शक्तिकी मात्रा अधिक पड़ती होगी। वह कहता है कि अिस हिसाबसे "२०० वर्ग-मीलके क्षेत्रको अितनी सूर्यशक्ति मिलती है, जो खर्चकी वर्तमान दरसे सारी दुनियाके लिअे पूरा अींधन मुहैया कर सकती है।"

भारतकी पहली पंचवर्षीय योजनाके अनुसार भारतमें १९५१ में २६ करोड़ ६० लाख अेकड़ जमीनमें खेती होती थी, ५ करोड़ ८० लाख अेकड़ जमीन पड़त थी और ९ करोड़ ३० लाख अेकड़ जमीन अैसी थी जिसमें खेती हो सकती है परन्तु जो बेकार पड़ी है। अिस प्रकार कुल जमीन ४१ करोड़ ७० लाख अेकड़ थी। अेक अेकड़में ४,८४० वर्गगज होते हैं। यद्यपि प्रयोगोंसे विविध परिणाम आये हैं, फिर भी मध्यम दरजेका आंकड़ा लें तो कहा जा सकता है कि अेक पौधेका हरा द्रव्य सूर्यकी अेक प्रतिशत शक्तिका खुराक या तन्तुओंमें परिवर्तन करता है। अगर हम ४१ करोड़ ७० लाख अेकड़को ४,८४० से गुणा करें, तो भारतमें १,८१६,२८०,०००,००० वर्गगज काश्तके लायक जमीन होती है। अेक अश्वशक्ति प्रति वर्गगजके हिसाबसे भारतकी कुल खेतीयोग्य भूमि पर अूपरके आंकड़े जितनी अश्वशक्ति पड़ती है। अिस शक्तिका अेक प्रतिशत लें तो कुल १८,१६२,८००,००० करोड़से अधिक अश्वशक्ति भारतमें सूर्यसे मिलती है, जो खुराक या वनस्पतिके तंतुओंमें बदली जा सकती है। अिसमें भारतके जंगल शामिल नहीं हैं। चूंकि सूर्य-प्रकाशकी खासी मात्रा वनस्पति पर न पड़कर नग्न भूमि पर पड़ेगी, अिसलिअे यथार्थवादी बनकर हमें अुपरोक्त आंकड़ोंके तृतीयांशको — अर्थात् ६,०५४,२६६,६६६ अश्वशक्तिको ही वह सूर्यशक्ति समझना चाहिये, जो भारतमें खुराक या वनस्पति-तंतुओंमें परिवर्तित

हो सकती है। यह शक्ति १९२७ में संयुक्त राज्य अमरीकाके अुद्योगोंमें खर्च हुअी सारी शक्तिको नौगुनीसे अधिक है। (मुझे दुःख है कि अिस तुलनाके लिअे मेरे पास अिस समय अधिक ताजे आंकड़े नहीं हैं।) परन्तु अिससे यह पता लग जाता है कि भारतमें सूर्यशक्ति — स्वदेशी सम्पत्ति — कितनी विराट मात्रामें अुपलब्ध है।

अमाप्य सम्पत्तिके जिस विशाल भंडारका अमरीकी प्रकृति-विशारद डोनाल्ड कुलरॉस पीअेटीने अपनी पुस्तक 'फारगोज अेण्ड हार्वेस्ट्स' के 'प्लाण्ट पावर' (पौधेकी शक्ति) शीर्षक प्रथम परिच्छेदमें दूसरे ढंगसे वर्णन किया है

> "पौधेकी शक्तिका अेक राष्ट्रके लिअे वही महत्त्व है जो अश्वशक्ति, जलशक्ति, अीधनकी शक्ति, समुद्र-शक्ति, जनशक्ति और मस्तिष्क-शक्तिका होता है। अिसी भंडारके द्वारा राष्ट्रोंकी स्वाधीनता और प्रभुता खरीदी जाती है। अिसे प्राप्त करनेके लिअे लोग तलवार लेकर निकल पड़े हैं, और अुन पड़ोसियोंको अुन्होंने जीता है, जिनके पास अुपजाअू भूमि, बड़े जंगल, कीमती रंग देनेवाले पौधे या रोगोंका अिलाज करनेवाली जड़ी-बूटियोंके पेड़ अधिक थे। पौधोंकी शक्तिने राज्योंकी सीमाओंको बनाया और बिगाड़ा है, लोगोंको आविष्कारके लिअे विशाल समुद्र-यात्राओं पर भेजा है, और बड़े बड़े विज्ञानोंको जन्म दिया है। पौधोंकी शक्तिका अर्थ है विश्वव्यापी प्रभुता।
>
> "प्रकृति पर प्रभुत्व प्राप्त करनेमें हम दिनोदिन आगे बढ़ रहे हैं और अपनी सफलताके मदमें हम लापरवाहीसे मनुष्यके शरीर और बुद्धिबलको ही पृथ्वीके सारे सृजन-कार्यका श्रेय देते हैं। परन्तु हम अेक ही पदार्थ — वनस्पतिमें निहित हरे पदार्थ — पर पूरी तरह निर्भर हैं। अधिकांश पौधोंमें व्याप्त यह रंगीन द्रव्य संसारका हरा खून है। यह यह मूक अुद्योग-भवन है, जिसमें होकर पृथ्वी, हवा और पानी जैसे निर्जीव तत्त्व गुजरते हैं और शक्कर और स्टार्च (निशास्ता) जैसे जीवनको धारण करनेवाले पदार्थोंके

रूपमें तथा जीवनके लिअे अनिवार्य लकड़ी, तंतुओं, टेनीन और रबरके रूपमें बदलकर बाहर निकलते हैं।

"क्योंकि जो अन्न हम खाते हैं, जो कपड़े हम पहनते हैं, जो कोयला या लकड़ी हम अपने चूल्होंमें जलाते हैं, अुनका मूल पौधोंमें ही है। कहा जाता है कि संसारकी आधी सम्पत्ति और आधा व्यापार सीधा अिन पौधोंकी पैदावारसे होता है। हमारा मांस, अून, चमड़ा, पशुओंके बाल, रेशम, पंख, हड्डियां, जानवरोंकी चर्बी और खाद भी अुन प्राणियोंसे पैदा होते हैं, जिनका गुजर पौधों पर होता है या घास-पत्ती खानेवाले प्राणियों पर होता है। . . .

"अुपजाअू भूगर्भमें सम्पत्तिका वह भंडार छिपा है, जिसने सारे अितिहास-कालमें अुसे छीन ले जानेवालोंको सत्ता, संस्कृति और समूची अुच्च श्रेणीकी सभ्यताओंका आधार प्रदान किया है।

"पौधोंकी शक्तिके कअी स्रोत मनुष्यके अुपयोगके लिअे खुले हैं। पहले तो यह अुसके देशकी वनस्पिति है — यह वरदान अैसा है जो अुसे अुत्तराधिकारमें मिला है, जिसके लिअे अुसने बहुत कम मेहनत की है और जिसे वह खुले हाथों खर्च करता है। अुपयोगी वृक्षोंका विशाल वन अेक समृद्ध सोनेकी खान ही है। . . .

"परन्तु प्रकृतिकी अपने-आप पैदा की हुअी विशाल सम्पत्तिके अलावा मनुष्य विचारपूर्वक खेती करके अपनी पैदावार बढ़ा सकता है। . . . सबसे बड़ी बात तो यह है कि दूसरे देशोंसे पौधोंकी नअी जातियां लाअी जायं तो अुससे अेक क्षेत्र-विशेषको, फिर वह राजनीतिक सीमाओंसे कितना ही घिरा हुआ क्यों न हो, विविध प्रकारकी और सतत विकासशील साधन-सम्पत्ति प्राप्त होती है।"

लेखकने आगे वर्णन किया है कि किस प्रकार हॉलैण्ड जैसे छोटे देशने, जिसके पास बहुत ही थोड़ी प्राकृतिक साधन-सम्पत्ति है, सूर्यशक्तिके अुपयोग पर प्रभुत्व पा लिया है।

अिस सूर्यशक्तिका कुछ हिस्सा भारतकी खेतीमें पहलेसे ही काममें लिया जाता है। परन्तु निम्नलिखित ढंगसे अुस शक्तिका कहीं अधिक अुपयोग हो सकता है।

जंगलकी पैदावारका अुपयोग

लगभग पिछले तीस वर्षोंमें लकडीके रसायनशास्त्रमें आश्चर्यजनक विकास हुआ है, जिससे अब लकडीके रेशेसे नाना प्रकारके पदार्थ बनाये जा सकते हैं, जो मानव-जातिके लिअे अत्यंत अुपयोगी हैं। साधारण शहतीरों, तख्तों और कागजके अतिरिक्त लकडीसे सेल्युलोसका सामान और रेयॉन जैसे कपडे भी बनाये जा सकते हैं, प्लास्टिक जिसमें तरह तरहके आकारों और गुणोंवाली (जैसे कडी, लचीली, न टूटनेवाली, घटने-बढ़नेवाली आदि) वस्तुअें तैयार हो सकती हैं, सख्त पुट्ठे जैसे मैसोनाअिट और वैबेलाअिट, प्लाअिवुड, मिश्रणवाली लकडी, कअी प्रकारकी शक्कर, रोज़िन, रेज़िन और लकडीकी गैस भी बनायी जा सकती है। प्लास्टिककी कअी चीजें धातुकी चीजोंके बदलेमें बहुत अच्छा काम देती हैं और अिस प्रकार धातुओंकी बचत होती है। सख्त पुट्ठे, प्लाअिवुड और मिश्र लकडी कअी बातोंमें साधारण लकडीके तख्तोंसे श्रेष्ठ होते हैं और अुनसे विविध आकारकी चादरें — जैसे ४ फुट चौडी, ८ फुट लम्बी और ⅛ से ⅞ अिंच मोटी चादरें — बन सकती हैं, जिन पर पानी और मौसमका असर नहीं होता और फिर भी जो काटी और चीरी जा सकती हैं। अिस प्रकार वे फर्नीचर या दीवारों और मकानोंके विभागोंके लिअे काममें आ सकती हैं और अुनसे भवन-निर्माण बडी तेजीसे हो सकता है। लकडीके घोलसे शक्करका खमीर बन सकता है, जिससे मवेशियोंके लिअे अूंचे प्रोटीन तत्त्वसे पूर्ण खुराक प्राप्त होती है और चित्रकारीके रंगों और औद्योगिक घोलोंके लिअे अल्कोहॉल मिल सकता है जो मोटर गाडियों और गैसके अेंजिनोंमें पेट्रोलके बदले काम आ सकता है। अन्य अुपयोगी पदार्थ, जो अिस प्रकार तैयार हो सकते हैं, मोटरके पहियोंका रासायनिक रबड, साबुन, सरेस, ग्लिसरीन, कअी रासायनिक पदार्थ तथा कारखानोंके

भापके बॉयलरोंके लिअे अींधन आदि हैं। अलबत्ता, अैसे सबसे अच्छे बॉयलर स्वयं जंगलोंके अुत्पादनसे सम्बन्धित अुद्योगोंके स्टीम बॉयलर ही होंगे।

अिन सब बातोंका वर्णन मि० अीगन ग्लेसिगरने दिलचस्प ढंगसे किया है। वे हालमें ही संयुक्त राष्ट्रसंघकी खुराक और खेती-सम्बंधी संस्थाकी वन-अुत्पादन शाखाके मुखिया थे। यह वर्णन अुन्होंने अपनी पुस्तक 'दि कमिंग अेज ऑफ वुड' में किया है। वे बताते हैं कि किस प्रकार दूसरे महायुद्धमें स्वीडनने आधुनिक लकड़ीके रसायनशास्त्रके आविष्कारोंका अुपयोग किया। अिसके फलस्वरूप स्वीडन यूरोपका अेकमात्र अैसा देश था, जहां १९४१ की अपेक्षा १९४६ में खाद्य-पदार्थोंकी अधिक मात्रा दी जाती थी, जहां घर अधिक गरम थे और अधिक गरम पानीके स्नानोंकी अनुमति दी गअी थी। अुस युद्धके दिनोंमें स्वीडनके पास ७०,००० मोटर लारियां, बसें और मुसाफिर-गाड़ियां थीं और १५,००० खेतीके ट्रैक्टर, नावें और खेतीकी मशीनें थीं। और अुन सबमें अुसके अपने ही जंगलोंकी लकड़ीसे बनी चीजोंका अींधन काममें आता था।

अिस शिल्प-विज्ञानको अपनाकर भारत अधिक कपड़ा तैयार करके अपने शहरी लोगोंको पहना सकता है और बाहर भी भेज सकता है, अपनी मकानों और भवन-निर्माणकी समस्याओंको हल करनेके लिअे मौसमके असरसे न बिगड़नेवाली रासायनिक लकड़ीकी बढ़िया बड़ी चादरें बना सकता है, छतोंके खास खपरैल, प्लास्टिकके पानीके नल, मवेशियोंकी खुराक और पेट्रोलकी जगह अच्छी तरह काम करनेवाला पदार्थ तथा अन्य कअी अुपयोगी वस्तुअें तैयार कर सकता है। अिससे अुसके मौजूदा आयातमें बड़ी कमी हो सकती है और महत्त्वपूर्ण विदेशी मुद्रामें बचत हो सकती है। ये सब चीजें सूर्यशक्तिकी निरन्तर चालू रहनेवाली आयसे मिलती हैं। अिस प्रकार भारतमें जो धूप आज अितनी विशाल मात्रामें व्यर्थ नष्ट होती है, अुससे विशाल सम्पत्तिका निर्माण हो सकता है।

आप कह सकते हैं कि वर्तमान सूती कपड़ेकी मिलें भी सूर्यशक्तिसे अुत्पन्न होनेवाला अेक पदार्थ अिस्तेमाल कर रही हैं, फिर भी गांधीजी

मिलोंका विरोध करते थे। वे अैसी चीजें बना रही हैं, जो किसान बना सकते हैं और पुराने जमानेमें अपने लिअे हमेशा बनाया करते थे। अिस प्रकार मिलें किसानोंसे अुनका अुपयोगी काम और अुनका आत्म-सम्मान छीन रही हैं। परन्तु जंगलोंके अुत्पादनका अुद्योग अनेक अैसी वस्तुअें तैयार करेगा, जिन्हें किसान अपने लिअे नहीं बना सकते और वृक्षोंके अुन भागोंका (अर्थात् सूर्यशक्तिका) अुपयोग करेगा जो अिस समय बेकार जाते हैं। जंगलोंकी पैदावारके लिअे आजकी अपेक्षा अधिक लकड़ी काटनेवालोंकी जरूरत होगी और अिस प्रकार यह अुद्योग किसी मजदूरका स्थान नहीं लेगा, न अुसे बेकार बनायेगा।

कटाअीके साधारण तरीकोंसे प्रत्येक काटे गये पेड़की ५० से ७० फीसदी लकड़ी नष्ट हो जाती है। परन्तु आजकल अैसी मशीनें तैयार हो गअी हैं जिन्हें जंगलोंमें ले जाकर अुनमें छोटी छोटी डालियों और टहनियोंके टुकड़े किये जा सकते हैं और अुन्हें आसानीसे दूसरी जगह ले जाकर अुनका गूदा बनाया जा सकता है। अिस कारणसे और रासायनिक क्रियाओंकी मददसे अब प्रत्येक काटे हुअे सारेके सारे पेड़के अुपयोगी पदार्थ बनाना संभव हो गया है।

जंगल अुगानेका स्थायी प्रयत्न होना चाहिये

आधुनिक कटाअीके तरीकोंसे केवल बड़े वृक्षों और निकम्मे पेड़ोंको ही काटा जाता है और छोटे पेड़ोंको अधिक तेजीसे और अच्छी तरह बढ़नेका मौका दिया जाता है। अिस प्रकारकी विवेकपूर्ण कटाअी जंगलोंको 'स्थायी अुत्पादन' के आधार पर रख देती है, जिससे वास्तवमें पुराने तरीकोंकी अपेक्षा अिस तरीकेसे अधिक लकड़ी पैदा होती है और हर साल स्थायी रूपसे लकड़ीकी अूंची पैदावार चालू रहती है। मिलीजुली जातिके पेड़ ठीक ढंगसे लगानेके कारण पेड़ और जंगलकी धरती नीरोग रहती है। अलबत्ता, जंगल लगाने और काटनेके आधुनिक अुपाय काममें नहीं लिये जायेंगे, तो जंगलकी पैदावारके अुद्योग भारतीय जंगलोंको जल्दी

ही नष्ट कर देंगे और देशको स्थायी सम्पत्ति प्राप्त होनेके वजाय घोर विपत्ति और वरवादीका सामना करना पड़ेगा।

नये तरीकोंमें लट्ठोंको जमीन पर घसीटा नहीं जाता, क्योंकि घसीटनेसे जमीनकी अूपरी तह अुखड़ जाती है और छोटे पौधे व झाड़-झंखाड़ नष्ट हो जाते हैं, जिससे जमीन खुली होकर कटावकी शिकार वनती है। अिसके वजाय वोझ अुठानेवाली अूंची मशीनों द्वारा लट्ठे अुठा लिये जाते हैं और साधनों द्वारा जंगलके किनारे पहुंचा दिये जाते हैं। अुन्हें ले जानेके लिअे पट्टे, मोटर लारियां या दूसरे अैसे अुपाय अिस्तेमाल किये जाते हैं, जिनसे जंगलकी धरतीको नुकसान न पहुंचे और धरतीका कटाव न होने पाये। जंगलमें सड़कें वनाते समय वड़ा ध्यान रखा जाता है, ताकि जमीनका कटाव शुरू न हो जाय। अिन तरीकोंके सिवा अच्छी तालीम पाये हुअे वन-अधिकारी, वन-व्यवस्थापक, वन-रक्षक और आवश्यक वन-निष्णातोंको रखकर जंगलोंको भारतके लिअे विपुल सम्पत्तिका अेक स्थायी साधन वनाया जा सकता है। और कपड़े, लकड़ीकी कृत्रिम चादरों, खपरैल, पेट्रोलकी जगह लेनेवाले पदार्थ, सावुन, मवेशियोंकी खुराक और सरेससे अुपभोक्ताओंको तुरंत सहायता मिलेगी। अिन सब वातोंमें समय लगेगा, क्योंकि पेड़ अेक दिनमें वड़े नहीं हो जाते और वन-अधिकारियोंको प्रशिक्षण देनेमें और जंगलोंसे स्थायी अुत्पादन प्राप्त करनेमें भी समय लगता है।

अुद्योगवाद और गांधीजीके सिद्धान्तोंके बीच समझौता

अगर सूर्यशक्तिकी वार्षिक आय पर निर्वाह करना गांधीजीके कार्य-क्रममें शुरूसे निहित है, और मैं मानता हूं कि अैसा है, तो अब हम अिस सिद्धान्तको स्पष्ट और निश्चित कर सकते हैं। अिससे वह मर्यादा और संयम प्राप्त हो जायगा, जिसका पूंजीवादी अुद्योगवादमें अव तक अभाव रहा है। अगर अुसे स्वीकार किया जाय और कार्यान्वित किया जाय, तो अिस प्रकारके जंगलके अुत्पादनसे सम्वंधित अुद्योगका विकास अव तक अमलमें लाये गये अुद्योगवाद और गांधीजीके सिद्धान्तोंके वीच पुलका

काम देगा। अुससे अैसी दिशा मिल जायगी, जिसमें अुद्योग विवेकपूर्वक आगे बढ़ सकता है।

मैं मानता हूं कि अणुशक्तिके बावजूद दुनियाके सारे देशोंको अन्तमें यह मर्यादा स्वीकार करनी होगी, क्योंकि युरेनियम धातु भी संसारमें सीमित है और अुसकी किरणोंका फैलना बड़ा खतरनाक है। जिस गतिसे अुद्योग-प्रधान राष्ट्र आज अींधन और कच्चा माल खर्च कर रहे हैं, अुसे देखते हुअे कदाचित् अुन्हें मेरे सुझाये हुअे प्रस्ताव पर हर तरहसे अेक शताब्दीके भीतर और बहुतसे राष्ट्रोंको तो पचास वर्षके भीतर ही आना पड़ेगा।

अगर अंतमें सभी देशोंको अिस पर आना पड़ेगा और यदि भारत स्वीडनका अनुसरण करके अुसे जल्दी ही आरंभ कर देता है, तो भारतकी स्थिति मजबूत होगी और वह शिल्प-विज्ञानमें अगुआ रहेगा। अगुआ वह अिसलिअे रहेगा कि भारतमें जलवायुकी विविधता बहुत होनेके कारण वह स्वीडनकी अपेक्षा अधिक प्रकारकी लकड़ियां पैदा कर सकता है और अपनी अुष्ण-कटिबन्धकी तेज धूप और अपने बड़े आकारके कारण वह स्वीडन-की अपेक्षा अधिक तेजीसे और बहुत अधिक मात्रामें लकड़ी अुगा सकता है। सूर्यशक्ति पर आधार रखनेकी वजहसे अुद्योगवाद प्रतिष्ठाकी हानि अुठाये बिना या शिल्प-विज्ञानका त्याग किये बिना अन्तमें प्रकृतिके साथ मेल और संतुलन स्थापित कर सकता है।

मेरा विश्वास है कि जंगलके अुत्पादन पर सारा ध्यान लगानेसे अेक और परिणाम होगा, जो मुझे शहरोंके घिचपिच जीवनके हानिकारक होनेके बारेमें गांधीजीकी मान्यताओंसे मिलता-जुलता दिखाअी देता है। अुनका खयाल था कि कारखानोंमें काम करना और गंदी बस्तियोंमें रहना स्वास्थ्य और पारिवारिक जीवनके लिअे बहुत हानिकारक है।

बौद्धिक शक्ति अुन स्थानोंके आसपास केन्द्रित हो जाती है, जहां भौतिक शक्तिका अुपयोग किया जाता है। भौतिक शक्तिके मौजूदा साधन कोयला, तेल और बिजली शहरोंमें अिस्तेमाल किये जाते हैं। अिसलिअे

व्यापार और रुपये-पैसे तो वहां आ ही जाते है। भौतिक शक्तिके आकर्पणसे लोग वहां अिकट्ठे ही जाते हैं; और खास तौर पर नौजवान लोग गांवोंसे नगरोंकी ओर खिच आते हैं। अिससे गांव कंगाल हो जाते हैं।

अगर भारत लकड़ीसे पैदा होनेवाली चीजोंका विशाल पैमाने पर विकास करेगा, तो अुसके लोग सूर्यशक्तिकी विशालताको और भी स्पष्ट रूपमें अनुभव करने लगेंगे। भारतकी सूर्यशक्तिको नया रूप देनेवाले मुख्यत: जंगल और खेत होंगे और बुद्धिमान लोग अिसे अनुभव करने लगेंगे। अधिकांश लोगोंको जंगलोंमें, जंगलकी पैदावारके कारखानोंमें और गांवोंमें, जहां किसान रहते और काम करते हैं, रहनेका महत्त्व समझमें आयेगा — ये स्थान अुनके लिअे जीवनके केन्द्र बन जायेंगे। फिर तो शायद तीव्र बुद्धिवाले युवक अुन स्थानोंमें अेकत्र होनेकी ओर झुकेंगे। जंगलकी पैदावारके कारखाने जंगलोंके नजदीक और शहरकी गंदी वस्तियोंसे दूर स्वास्थ्यप्रद वातावरणमें होंगे। जंगलकी पैदावारके अैसे अनेक कार-खानोंको जंगलोंके किनारे चलाना होगा; अिसलिअे जनसंख्याका बहुत केन्द्रीकरण नहीं होगा। बहुतसे वन-अधिकारियों, वन-रक्षकों, रसायन-शास्त्रियों, पदार्थविज्ञान-शास्त्रियों, अिंजीनियरों, भवन-निर्माताओं, वस्त्र-अुद्योगके निष्णातों, सड़क बनानेवालों और अन्य प्रकारके शिल्प-विज्ञानके कार्यकर्ताओंकी जरूरत होगी। अिसका परिणाम यह होगा कि शिक्षित लोगोंको काम मिलेगा।

अिस प्रकार शहरों और गांवोंमें, अुद्योगवाद और खेतीमें अधिक मजबूत संतुलन पैदा होगा। बेशक, अिस प्रकारका अुद्योगवाद खेतीके साथ अपना निकट सम्बन्ध अनुभव करेगा, क्योंकि दोनोंकी शक्तिका स्रोत अेक ही होगा। मुझे विश्वास है कि अैसा होनेसे हर जगह किसानके काम और जीवनका महत्त्व ज्यादा अच्छी तरह समझा जाने लगेगा।

सरकारी नियमन आवश्यक

अिस प्रकार निरंकुश पूंजीवादके कारण हो रही बरबादी और हानिको रोक कर सम्पत्ति पैदा करनेके लिअे सरकारको तीन बातोंका आग्रह

रखना चाहिये (१) जंगलोंकी रक्षाके सारे अंगों पर अुनका पूरा नियंत्रण रहे, (२) जंगलकी पैदावारसे सम्बंधित सब प्रकारके अुद्योग जंगलोंके पास ही सुयोजित रूपमें सम्बद्ध किये जायं, ताकि साधन दोहराये न जायं और लकड़ीको अेक स्थानसे दूसरे स्थान तक लाने ले जानेमें मालका, समयका और पैसेका बिगाड़ न हो, और (३) अिन कारखानोंसे कोअी रासायनिक पदार्थ या हानिकारक निकम्मे पदार्थ नदी-नालों या हवामें न जाने दिये जायं। वृक्षोंसे प्राप्त होनेवाली हर चीजका रासायनिक रूपमें या भौतिक रूपमें अुपयोग किया जाय। तमाम वन-अधिकारियों, प्राणीशास्त्रियों, रसायनशास्त्रियों और दूसरे शिल्प-विज्ञान विशारदोंको तैयार करनेमें समय लगेगा। परन्तु अिनसे सम्पत्तिका तथा आर्थिक और सामाजिक लाभ अितना अधिक होनेकी संभावना है कि ये योजनायें जल्दी शुरू होनी चाहिये। मुझे आशा है कि ये दूसरी पंचवर्षीय योजनाका अेक अंग बन जायगी।

७

गांधीजीका कार्यक्रम

जिन्होंने पुस्तकों द्वारा अर्थशास्त्रका अध्ययन किया है और जो अुद्योगवादके समर्थक हैं, वे सब मानते हैं कि यद्यपि गांधीजी अेक बड़े सन्त और राजनीतिज्ञ थे, फिर भी अर्थशास्त्रके सब मामलोंमें अुनके विचार बड़े गलत थे। वे बताते हैं कि तमाम अुद्योग-प्रधान देशोंमें जो अपार दौलत और रहन-सहनका अूंचा स्तर है और दूसरे महायुद्धसे पहले जापानमें अुद्योगवादको जो महान सफलता मिली, यह अिस बातका पूरा, दीर्घकालीन और अनिवार्य प्रमाण है कि भारतमें और अधिक अुद्योगीकरण होना चाहिये। अेकके बाद अेक अर्थशास्त्री और समाजशास्त्री अिस बातका आग्रह करते हैं कि जिस देशमें घनी आबादी हो वहां प्रजाकी आर्थिक मुक्ति अिसीमें है कि औद्योगिक अुत्पादन बढ़ाया जाय और लोगोंको

खेतीसे हटाकर कारखानोंमें लगाया जाय। वे बताते हैं कि किस प्रकार आधुनिक शिल्प-विज्ञानने, जो अुद्योगवादका साझेदार है, खेतीकी पैदावार बहुत बढ़ाअी है और साथ ही बहुत अधिक आदमियोंके खेतोंमें काम करनेकी जरूरतको घटाया है।

नअी बातोंसे शंकाअें पैदा होती हैं

परन्तु यह राय, जो कुछ वर्ष पहले बनी थी, अब संदिग्ध मालूम होती है। क्योंकि १९५७ में संसारके सामने अुस स्थितिसे सर्वथा भिन्न आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक स्थिति है, जो यह सिद्धान्त पहले-पहल अुत्पन्न हुआ तब थी या जब विश्वव्यापी अुद्योगीकरणकी बड़ी लहर शुरू हुअी तब — १९१७ में — थी। अिस सम्बंधमें जिन नअी घटनाओंका महत्त्व है, अुनमें से छह मैं यहा देता हूं :

१. संसारकी जनसंख्या अिस समय संसारके मानव-पोषणके लिअे अुपलब्ध खाद्य-साधनोंसे अधिक है और नये खाद्य-साधनोंके विकासकी गतिसे जनसंख्याकी गति अधिक तेजीसे बढ़ रही है। करोड़ों लोग आजकल भुखमरीके किनारे पर खड़े हैं।

२. अिसलिअे अिस समय खेती अुद्योगोंसे अधिक महत्त्वपूर्ण है; अर्थात् अन्नका महत्त्व अधिक वस्त्र या अधिक मकानोंसे ज्यादा है; निरे आराम और सुविधाकी चीजोंसे तो जरूर ही अन्नका महत्त्व ज्यादा है।

३. अणुबम और रूस-अमरीकाकी प्रतिस्पर्धाका यह परिणाम हुआ है कि गोरोंका प्रभुत्व दुनियासे खतम हो गया। क्योंकि दोनोंमें से कोअी भी किसी अैसे दुर्बल राष्ट्रको अधीन बनानेका साहस नही करता, जिसके पास कीमती कच्चा माल या यातायातके मार्ग हों। अुसे यह डर रहता है कि कही दूसरा देश सैनिक हस्तक्षेप न कर दे और फिरसे विश्वयुद्ध न छिड़ जाय। अुद्योगवादका दारम-दार कच्चे मालके अुपयोग पर होता है और कच्चा माल ज्यादातर अुन देशोंसे आता है जहां रंगीन जातियां रहती हैं। भूतकालमें

हिंसाबलसे कमजोर राष्ट्रोंका यह शोषण संभव था। अब अगर बड़े पैमाने पर हिंसा संभव नहीं है तो गोरोंको अुन दूसरी जातियोंसे न्यायपूर्वक ही कच्चा माल लेना चाहिये, जो अपना अुद्योगीकरण कर रही हैं।

४ अिसका अर्थ यह है कि अेशिया, अफ्रीका और हिन्देशियाकी रंगीन जातियोंको जल्दी ही वह राजनीतिक सत्ता प्राप्त हो जायगी, जिसकी वे अपनी संख्याके कारण अधिकारिणी हैं।

५ सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और शिक्षा-संबंधी परिवर्तन आजकल तेजीसे हो रहे हैं और गरीब लोगोंके दिल और दिमाग सब जगह न्याय, अुन्नतिका अवसर, स्वाभिमान तथा मानव-गौरवकी प्राप्तिके लिअे छटपटा रहे हैं।

६ भारत पश्चिमी राष्ट्रोंसे भिन्न है — सिर्फ अिसीलिअे नहीं कि अुसके किसान अुसकी आबादीका बहुत बड़ा भाग हैं, बल्कि अिसलिअे भी कि वे भयंकर रूपमें दरिद्र हैं और अुनमें स्वास्थ्य, शक्ति, सूझ-बूझ, स्वाभिमान, आत्म-विश्वास, साहस और आशाका अत्यन्त अभाव है। अुन्हें अुदासीनता और निराशासे निकालनेके लिअे पश्चिमकी अधिकांश प्रजाओंकी अपेक्षा दूसरा ही अुपाय काममें लेना होगा।

अिन छह बातोंके कारण कमसे कम यह आवश्यक हो गया है कि जो सामाजिक और आर्थिक रीति-नीति अब तक पश्चिममें काममें ली गयी है, अुसमें संशोधन किया जाय।

कार्यक्रमकी रूपरेखा

आगे बढ़नेसे पहले मैं गांधीजीके कार्यक्रमके अंग यहां गिना दूं। पहली नजरमें तो अैसा प्रतीत होता है कि अेक महान राष्ट्रकी पेचीदा समस्याओंका हल करनेके लिअे ये बहुत ही सीधे-सादे और प्रारंभिक हैं। वे अंग ये हैं :

१. चरखा और खादी (हाथ-कताअी और हाथकते सूतकी हाथ-बुनाअी);

२. ग्रामोद्योग;

३. बुनियादी तालीम;

४. हरिजनों (भूतपूर्व अछूतों) का कल्याण और अुत्थान;

५. ग्राम-सफाअी;

६. किसानोंका कल्याण;

७. स्वच्छता और स्वास्थ्यके नियमोंकी शिक्षा;

८. साम्प्रदायिक अेकता (विभिन्न धर्मोंके अनुयायियोंके बीच);

९. महिलाओंका कल्याण;

१०. मजदूरोंका कल्याण और संगठन;

११. सब धर्मोंका आदर;

१२. प्रौढ़शिक्षा;

१३. राष्ट्रभाषा (हिन्दी) की अुन्नति;

१४. अपनी अपनी प्रान्तीय भाषाओंका विकास;

१५. विद्यार्थियोंका कल्याण;

१६. शराबबन्दी;

१७. गोरक्षा और गो-कल्याण;

१८. पहाड़ी आदिम जातियोंकी सेवा;

अिनमें गांधी-स्मारक-निधिने बादमें ये बातें और जोड़ दी है:

१९. बाढ़, महामारी और अकालके समय लोगोंकी सेवा;

२०. शान्तिसेना;

२१. कुष्ठरोगियोंकी सेवा;

अिनमें ये बातें भी जोड़ दी जानी चाहिये:

२२. गांधीजीके अेक अत्यंत अनुप्राणित शिष्य आचार्य विनोबा भावेका भूदान और ग्रामदान आन्दोलन।

भारतकी जनसंख्या

भारतकी नयी अर्थात् १९५१ की जनगणनाके अनुसार अुस समय भारतकी जनसंख्या लगभग ३५ करोड ७० लाख थी। और जनगणनाके योग्य निष्णातोंका अनुमान है कि १९५६ में वह लगभग ३९ करोड थी। १९५१ वाली जनगणनाने पता चला कि लगभग ८३ प्रतिशत जनसंख्या देहातमें रहती है। १९५६ की जनसंख्याके हिसाबसे ३२ करोड ३० लाख ७० हजार लोग गावोंमें रहते हैं। भारतमें कुल ५५८,००० गाव हैं और अुनमें से लगभग ९६ प्रतिशत गावोंमें प्रति गाव २,००० से कम निवासी हैं। अधिकांश गाववासी खेतीका काम करते हैं। परन्तु बहुतसे ग्रामोद्योगोंमें लगे हुअे हैं, जैसे बढ़अी, जुलाहे, टोकरी बनानेवाले, कुम्हार, तेली, दर्जी वगैरा।

ग्रामवासियोंकी स्थिति

ग्रामवासियोंका विशाल समूह अत्यन्त निर्धन है। सदियोंसे विदेशी और भारतीय दोनों सत्ताधारियोंने अुनका शोषण किया है। दरिद्रता, अज्ञान, कर्ज, रोग और अत्याचारने अुनमें शक्ति, अुत्साह और आत्म-सम्मान जैसी कोअी चीज नहीं रहने दी है। अुनमें से अधिकांश लगभग पूरी तरह निराश हो गये हैं। अुनकी स्थिति आज अुतनी बुरी नहीं है, जितनी गांधीजीके सुधार शुरू करते समय थी। फिर भी वह बहुत बुरी है।

अुसमें सुधार कैसे हो?

किन्तु गांधीजीका खयाल था कि ये लोग भलाअी और सब तरहकी संभावनाओंके विशाल भण्डार हैं। अुन्हें केवल सहायता देना काफी नहीं होगा। अुन्हें यह बताना होगा कि वे अपनी मदद आप कैसे कर सकते हैं, और वह भी अपने ही अल्प साधनोंसे। अपनी परम्पराओंके भारके कारण, अपने गहरे हतोत्साह और अुदासीन वृत्तिके कारण और अपनी सूझ-बूझ, शक्ति और आत्म-विश्वासकी दुर्बलताके कारण अुन्हें छोटे प्रयत्नोंके लिअे ही तैयार किया जा सकता है। अिसलिअे वे धीरे धीरे ही आगे बढ़ सकते हैं। अुनका अज्ञान, अुनकी गरीबी और सरकारके प्रति अुनका

अविश्वास तथा प्राचीन परम्पराका बोझ अैसा था कि वे सुपरिचित देशी ग्रामीण औजारोंके सिवा दूसरे कोअी औजार काममें ले ही नहीं सकते थे। शायद गरम जलवायुकी प्रमुखताके कारण अुनकी अुदासीनता चीनके किसानोंसे अधिक है। जब करोड़ों लोगोंकी अैसी रोगी दशा हो तब केवल औजारोंके पुराने होने और अच्छा काम न देनेका प्रश्न अप्रस्तुत बन जाता है।

गांधीजीने यह समझ लिया था कि जिस चीजकी भारतके ग्रामवासियोंको सबसे ज्यादा जरूरत है वह स्वाभिमान, आशा और यह दृष्टि है कि वे अपनी ही कोशिशोंसे कैसे अुन्नति कर सकते हैं।* विदेशी औजार और तरीके अुन्हें पसन्द नहीं आयेंगे। वे अुदासीनता और निराशाकी अुसी मानसिक अवस्थामें हैं, जिसमें मानसिक चिकित्सालयोंके कुछ रोगी होते हैं। मानसिक रोगोंके चिकित्सकोंको मालूम हुआ है कि अैसे रोगियोंको सीधे-सादे हाथके कामोंसे बहुत लाभ हो सकता है। अिसे कार्य द्वारा रोगोंकी चिकित्सा करनेकी पद्धति कहा जाता है। मनुष्यके विकासके प्रारंभ-कालसे ही अुसके हाथोंने अुसके मन और चरित्रके विकासमें बहुत बड़ा और महत्त्वपूर्ण भाग अदा किया है।

अधिकांश मानसिक चिकित्सालयोंमें प्रचलित अैसी चिकित्सा-पद्धतिसे कभी कभी थोड़ी सुन्दर या रोचक चीजें तो तैयार हो जाती हैं, परन्तु अुनका कोअी वास्तविक आर्थिक मूल्य नहीं होता। किन्तु गरीब भारतमें बहुत सादे औजारोंसे अैसी चीजें बनाअी जा सकती हैं, जिनका सच्चा और गांववालोंके लिअे महत्त्वपूर्ण आर्थिक मूल्य हो।

अुदाहरणार्थ, भारतके सचमुच गरीब लोगोंके लिअे तन ढंकनेको कपड़ेके दो टुकड़े चाहिये — पुरुषको धोती और स्त्रीको साड़ी चाहिये, जिसे सीने या विशेष फैशनवाली बनानेकी जरूरत नहीं होती। पहननेके वस्त्रोंका खर्च परिवारके खर्चका कमसे कम १० प्रतिशत भाग होता है।

---

* दो प्रमुख वैज्ञानिक विलियम मैकडोगल और अे० जी० टैंसले मानते थे कि स्वाभिमानकी भावना सारे अूंचे सदाचारकी बुनियाद है।

अगर लोग बेकार या आधे बेकार हों और अिसलिअे अुन्हें कातनेका समय मिले, तो वे अपने कपड़ोंके लिअे खादी खुद बहुत थोड़े समयमें तैयार कर सकते हैं। कपास भारतके प्रत्येक प्रान्तमें पैदा होता है। अिस तरह घरमें बना हुआ कपड़ा घरकी आमदनीमें १० प्रतिशतकी वृद्धिके बराबर होता है। अेक चरखेकी कीमत केवल चार-पांच रुपये ही होती है। भुखमरीके किनारे खड़े रहनेवाले लोगोंके लिअे आयकी यह वृद्धि बड़ी महत्त्वपूर्ण है। भारतके गांवोंमें बेकारी भयंकर रूपमें फैली हुअी है। अिसका कारण यह भी है कि भारतमें गरम और सूखा मौसम लम्बा होनेके कारण अुस समय किसान कुछ नहीं कर सकते। यही दलील दूसरे सब ग्रामोद्योगों पर भी लागू होती है।

अैसे प्रयत्नके नैतिक लाभ

परन्तु अैसे प्रयत्नका महत्त्वपूर्ण परिणाम तो नैतिक है। जब कोअी आदमी अपनी ही कुशलता और सतत प्रयत्नसे कोअी आर्थिक दृष्टिसे मूल्यवान वस्तु बना सकता है, तो अुसे स्वाभिमान, आत्म-विश्वास, आत्म-निर्भरता, साहस, आशा, स्वतन्त्र सूझ-बूझ और शक्ति प्राप्त होती है। अिसके बाद वह अधिक कठिन काम, अैसा काम जिसमें दूसरोंके साथ मिलकर काम करना पड़े, करनेके लिअे भी तत्पर हो जाता है। अगर अुसके साथ दूसरे भी अैसा ही करते हैं तो अुन सबमें सामूहिक साहस और सामूहिक आशाका संचार होता है।

यह कोरा सिद्धान्त नहीं है। क्योंकि तीस वर्षसे अधिक समयसे भारत भरमें किसान गांधीजीके कार्यक्रमकी प्रेरणा और पथ-प्रदर्शनसे अपने ही सादे औजारोंसे अैसी चीजें बनाते रहे हैं और साथ साथ अपने चरित्र और नैतिक बलका निर्माण भी करते रहे हैं। अिन तीस वर्षोंमें खादीकी आश्चर्यजनक प्रगति हुअी है। अंग्रेजी राज्यके विरुद्ध चलनेवाले असहयोग संग्रामके दिनोंमें वे ही जिले अत्याचारका अहिंसक मुकाबला करनेमें सबसे अधिक साहसी, दृढ़ और सफल रहे, जहां हाथ-कताअी, हाथ-बुनाअी और ग्रामोत्थानके दूसरे काम कुछ वर्षोंसे चल रहे थे।

जैसा कि सब कोओी जानते हैं, बुनियादी तालीममें विद्यार्थी अपनी शिक्षा कताओी, टोकरी बनाना, बढ़ओीगिरी या कुम्हार-काम जैसी किसी हाथकी कारीगरीके जरिये शुरू करता है। अिस काममें नापनेकी जरूरत पैदा होती है, जिससे वह गणित सीखना शुरू करता है। अुसका सामान कौनसे स्थानोंसे प्राप्त होता है, अिसकी जानकारी प्राप्त करके वह भूगोल सीखता है। किसी वस्तुके आरंभ या मूलकी शिक्षासे वह प्रारंभिक अितिहास सीखता है। अुसे सूचनायें पढ़नी पड़ती हैं और कामका लेखा-जोखा रखना पड़ता है, अिसलिअे वह लिखना-पढ़ना सीखता है। जब वह माल खरीदता है या अपना तैयार माल बेचता है, तब वह अर्थशास्त्रका विषय शुरू कर देता है। अैसे प्रत्येक विषयकी बुनियाद किसी ठोस, दैनिक वास्तविकता और मूल्य पर होती है। सारी शिक्षाका जीवनसे संबंध बंध जाता है। हाथके कामका गौरव और मूल्य बढ़ता है। शिक्षाके साथ विद्यार्थीका चरित्र-गठन भी होता है। वह दूसरोंके साथ काम करना सीखता है। अुसमें स्वच्छता, सफाओी, व्यवस्थितता, स्वाभिमान, आत्म-निर्भरता, आत्म-विश्वास, सूझ-बूझ, दूसरोंके साथ काम करनेकी क्षमता, दूरदृष्टि और कल्पना-शक्तिका विकास होता है। ये सब बातें लड़के-लड़की दोनों पर लागू होती हैं। बच्चे घरमें काम आनेवाला कपड़ा या दूसरी चीजें तैयार करते हैं, अिसलिअे माता-पिता अुन्हें स्कूल भेज सकते हैं।

अिस रचनात्मक कार्यके दूसरे अंग विकसित होने पर ग्राम, राज्य और राष्ट्रको अेक-दूसरेमें पिरोकर अेक समन्वयपूर्ण, परस्पर सहायक और परस्पर विश्वास रखनेवाला घटक बना देते हैं। वे आम जनताको अूपर अुठाकर अेक अूंचे आर्थिक, बौद्धिक, सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक स्तर पर पहुंचा देते हैं। वे पुराने संघर्ष, विरोध, द्वेष, अहंकार और फूट आदि अन्य सामाजिक बुराअियोंको मिटानेमें बड़ी मदद करते हैं।

दूसरी पद्धतियोंसे तुलना

कार्यक्रमका यह संक्षिप्त स्पष्टीकरण करनेके बाद अब हम अिस पद्धतिकी और जिन दूसरी पद्धतियों पर हम पहले विचार कर चुके हैं

अुनकी तुलना करें। हमें अिस पर संसारके शासक दलोंकी दृष्टिसे विचार नहीं करना चाहिये, परन्तु दबे हुअे और गरीब लोगोंकी दृष्टिसे विचार करना चाहिये, जो संसारमें अधिक संख्यामें हैं।

मुख्य मतभेद साधनोंके विषयमें है

पूंजीवाद, साम्यवाद, समाजवाद, भारत-सरकारकी योजना और गांधीजीका रचनात्मक कार्यक्रम — सभी प्रत्येक मनुष्यको भौतिक, मानसिक और नैतिक रूपमें सहायता देने और सम्पन्न करनेका दावा करते हैं। अपने प्रयत्नों और समाजके ध्येय और अुद्देश्योंके बारेमें सब सहमत हैं। मतभेद साधनोंके विषयमें है। अिस सम्बन्धमें हम अिस सिद्धान्तका अेक प्रयोग देखेंगे कि सफलता प्राप्त करनेके लिअे अैसे साधन चुनने चाहिये जो वांछित ध्येयके अनुकूल हों।

सम्पत्ति और सत्ताके वितरणके संबंधमें

पूंजीवाद और साम्यवाद दोनों सम्पत्ति और सत्ताका विशाल मात्रामें संग्रह करते हैं और व्यवहारमें अुनका अुपयोग मुख्यतः अूपरके लोगोंके लिअे करते हैं और थोड़ीसी सम्पत्ति और सत्ता नीचे टपक जाने देते हैं, जिससे आम लोग सम्पत्तिका निर्माण करनेवाले यंत्रोंको कुशलतासे चला सकें। पूंजीवाद और साम्यवाद दोनों हिंसाका खुला या गुप्त अुपयोग करते हैं, जब अींधन और कच्चे मालके साधनों पर नियंत्रण रखनेकी और लोगोंको यंत्रों पर काम करते रखनेकी जरूरत पैदा होती है।

गांधीजीके कार्यक्रम पर अमल करनेसे भी सम्पत्ति और सत्ता भिन्न-भिन्न रूपोंमें पैदा होती है। जैसे खादी, दूसरे ग्रामोद्योगोंकी चीजें, बुनियादी शिक्षा, स्वास्थ्य और परस्पर आदर तथा सबके प्रति दयाभाव। अिस कार्यक्रममें अुत्पादन दूर ले जाकर बेचनेके लिअे नहीं होता, बल्कि निकटवर्ती स्थानीय अुपयोगके लिअे होता है, और सबसे पहले अुस व्यक्ति या परिवारके अुपयोगके लिअे होता है, जो अुस मालको तैयार करता है। अिस प्रकार यह कार्यक्रम सम्पत्तिके अिन छोटे छोटे हिस्सोंको — वस्तुओंके

—जहांके तहां रखता है और अुन्हें छोटी छोटी अिकाअियोंमें व्यापक रूपमें बांट देता है। वह अिन्हें मुट्ठीभर शक्तिशालियों द्वारा मनमाना अुपयोग करनेके लिअे बड़ी मात्रामें अेक जगह अिकट्ठा नहीं होने देता। यह ध्यान देने लायक बात है कि खादी और ग्रामोद्योग सिर्फ गांवोंकी अर्ध-बेकारी या बेकारीको ही कम नहीं करते, फिर भले ही वह बेकारी लम्बे सूखे मौसमके कारण हो या और बातोंके कारण हो, और अिस प्रकार जमीन पर पड़नेवाले लोगोंके दबावको ही कम नहीं करते। अिस प्रकारकी ग्रामीण प्रवृत्तिया सम्पत्तिको व्यापक रूपमें और अधिक समान रूपमें बाटती भी रहती है।

पूंजीवादकी भावना वस्तुतः यह कहती है: "पहले तो शक्तिशालियों और बुद्धिमानोंको शिल्प-विज्ञान द्वारा सम्पन्न बनाओ। अुनमें दीर्घदृष्टि और तीव्र बुद्धि है। अुन्होंने ही आविष्कारका काम किया है; अुनमें सूझ-बूझ है; अुन्होंने जोखम अुठाये हैं; वे ही पुरस्कारके अधिकारी हैं; वे ही अुद्योगकी व्यवस्था कर सकते हैं; और अुद्योग कुशल व्यवस्थापकोंके बिना चल नहीं सकता। जब सम्पत्ति खड़ी हो जाय और यंत्र तथा प्रक्रियाअें आसानीसे और अच्छी तरह चलने लगें, तब सम्पत्तिका काफी हिस्सा आम लोगों तक भले पहुंचने दिया जाय।" परन्तु व्यवहारमें मानव-स्वभावकी कमजोरीके कारण केवल पर्याप्त सम्पत्ति और शिक्षा ही यंत्रोंको अच्छी तरह चलते रखनेके लिअे जनता तक पहुंचती है। अगर यह बात निन्दाजनक मालूम होती है तो मार्क्सके 'डास कैपिटल' की तो बात छोड़ दीजिये, श्री हैमण्ड और श्रीमती हैमण्डका लिखा हुआ ब्रिटेनका औद्योगिक अितिहास ही पढ़ लीजिये।

गांधीजीकी संरक्षक (ट्रस्टी) की कल्पना

गांधीजीने व्यवसायियोंकी कुशलताके सामाजिक महत्त्वको समझा और स्वीकार किया था। वे स्वयं अेक बहुत कुशल संगठनकर्ता, प्रशासक, संयोजक और सामाजिक क्षेत्रके आविष्कारक थे। परन्तु अुनका विश्वास था कि व्यवसायियोंको अपनी कुशलता और योग्यताका अुपयोग समाजके

मददगार बनकर करना चाहिये। वे स्वयं अैसा ही करते थे। विनोबाजी अिस विचारसे सहमत हैं। अगर व्यवसायी नेता यह समझते हैं कि यह मार्ग मानव-स्वभावके लिअे बहुत अधिक है, बहुत आदर्शवादी है, तो अिस तरह वे यह बात स्वीकार कर लेते हैं कि और सबकी अपेक्षा अपनी ही सेवा वे अधिक करेंगे, तब अुन्हें अपने हाथमें या अपने प्रतिनिधियोंके हाथमें सत्ता या राष्ट्रके संचालनकी बागडोर सौंपनेकी मांग भूलसे नहीं करनी चाहिये। गांधीजीका खयाल था कि वे लोग नैतिक दृष्टिसे अिससे अधिक अूंचे अुठ सकते हैं। अुन्हें गांधीजीकी आशाको पूरा करना चाहिये। अुन्हें यह सिद्ध कर देना चाहिये कि नैतिकतामें भारतीय व्यवसायी पश्चिमके व्यवसायियोंसे श्रेष्ठ हैं।

अधिक तुलनायें

साम्यवादकी घोषणा व्यवहारमें यह है "हम पार्टीके नेतागण अूपरके चुने हुअे कुछ लोगों द्वारा संचालित शिल्प-विज्ञानकी सहायतासे हर आदमीको काफी सम्पन्न बनायेंगे।" परन्तु चूंकि अूपरके कुछ चुने हुअे लोग भी अूपरसे नीचे तक काम करते हैं, अिसलिअे वे भी साधनोंके चक्करमें फंस जाते हैं और सत्ताके प्रलोभनके शिकार हो जाते हैं। अिससे आम लोगोंको सुरक्षा और सम्पत्ति थोड़ी ही मात्रामें प्राप्त होती है; और अुस व्यवस्थामें मनुष्योंकी आत्मा अूपरवालोंकी सत्ताकी रक्षाके खातिर बन्धनोंमें जकड़ जाती है। अूपरके सत्ताधारियोंके विषयमें यह मान लिया जाता है कि वे सबके कल्याणकी बात अुत्तम रूपमें जानते हैं। अुनका अैसा दावा है कि विज्ञान तथा अैतिहासिक अटल नियमोंके आधार पर अुन्हें यह ज्ञान प्राप्त होता है।

परन्तु गांधीजीका रचनात्मक कार्यक्रम लोकतांत्रिक पद्धतिके आधार पर ठेठ नीचेसे काम करता है और अपने बनाये हुअे कपड़े, ग्रामोद्योगों, बुनियादी तालीम, सफाअी, तन्दुरुस्ती, सहयोग, कम्पोस्ट खादसे सुधरी हुअी जमीन और अधिक अच्छी खेतीसे गरीबोंके विशाल समूहको सम्पन्न बनाता है। वह सादे सुपरिचित औजारोंका अुपयोग करता है, जो स्थानीय

परिस्थितियोंके अनुकूल होते है; और अुन्हें बनाने और अुनकी मरम्मत करनेमें अितना कम खर्च होता है कि वे किसानोंके आर्थिक साधनोंकी मर्यादामें रहते है। अिस कार्यक्रमके अमलसे पैदा होनेवाली सम्पत्ति तुरन्त पैदा होती है और कार्यक्रम पर अमल करनेवाले प्रत्येक किसान-परिवारमें ही रहती है। शेष कार्यक्रमसे अुत्पन्न होनेवाली सहिष्णुता, दयालुता, पारस्परिक सहायता और आदरकी भावनाका बहुत बड़ा नैतिक मूल्य है। अिस नये प्रकारकी पूंजीके छोटे छोटे भंडारोंके लाभ अधिक जल्दी मिलते है और वे पैसेकी अपेक्षा अधिक फलदायक होते है।

यह दावा किया जा सकता है कि अुद्योगवाद गांधीजीके कार्यक्रमकी अपेक्षा अधिक सम्पत्ति निर्माण करता है और अधिक तेजीसे निर्माण करता है। किन्तु अुद्योगवादसे पैदा होनेवाली सम्पत्ति वास्तवमें साधन-सामग्रीका ह्रास और हानि ही है। परन्तु यदि चरखा चलानेसे परिवारके लिअे कपड़ा बन जाता है और अिस तरह अगर प्रति व्यक्ति अेक रुपयेकी भी अल्प बचत हर साल हो जाती है, और पहलेकी तरह भारतके सब गांवोंमे चरखा चलने लगे, तो यह रकम कुल मिलाकर ३२ करोड ३० लाख ७० हजारकी हो जाती है — फिर भले ही आप अिसे बचत कहिये अथवा आमदनी कहिये। वास्तवमें वृद्धि तो अिससे बहुत अधिक होगी। अगर कार्यक्रमके स्वास्थ्य और स्वच्छता-सम्बन्धी अंगों द्वारा भारतमे आधी बीमारी दूर हो जाय, तो अिसके परिणामस्वरूप देशकी अुत्पादक-शक्ति और सुखमें कितनी विशाल वृद्धि हो जाय! अगर सारे गांव पूरी तरह कम्पोस्ट खाद बनाने लगें, तो देशकी जमीनको और खेतीकी पैदावारको जबरदस्त फायदा पहुंचेगा। और जब बुनियादी तालीम प्रत्येक गांवमें कुशल पद्धतिसे जारी हो जायगी, तब जो विपुल सम्पत्ति, सुख और बौद्धिक जागृति होगी अुसका अन्दाज कोअी नहीं लगा सकता। भारत अभी अिस कार्यक्रमका प्रारम्भ ही कर रहा है। कल्पना-शक्तिके द्वारा अिसका जबरदस्त विकास हो सकता है।

परन्तु सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण तो अिसका नैतिक लाभ है। गांधीजीका कार्यक्रम देशभरमें अुत्साहपूर्वक लागू कर देनेसे घर-घरमें स्वाभिमान, आत्म-

विश्वास, आत्म-निर्भरता, गौरव, शक्ति, सूझ-बूझ, साहस, आशा, लगन और सुखकी अैसी बाढ़-सी आ जायगी कि सारा राष्ट्र हर्षोन्मत्त और मग्नर आश्चर्यचकित हो जायगा। जिसके साथ ग्रामीणोंकी स्वाभाविक धार्मिक भावनाओंका पुट लग जायगा, तब नैतिक और आध्यात्मिक शक्तिकी व्यापक लहर दौड़ जायगी।

ग्रामोत्थानकी सरकारी योजनाओंके कुछ सचालकोंकी यह शिकायत रही है कि गावोंमें स्थानीय नेतृत्वकी बड़ी कमी है। यह अभाव ग्राम-वासियोंमें स्वाभिमान, आत्म-निर्भरता और आत्म-विश्वासके अभावका ही अेक और परिणाम है। जहा अेक बार ये गुण अिन लोगोंमें फिरसे आये कि स्थानीय नेतृत्वकी कोअी कमी नहीं रहेगी।

कभी कभी यह दलील दी जाती है कि अगर किसी राष्ट्रके चोटीके लोगोकी सम्पत्तिके टुकड़े करके अुसे सारी जनतामें बराबर बराबर बाट दिया जाय, तो साधारण हिसाब लगानेसे सिद्ध हो जायगा कि प्रत्येक गरीब आदमीको कुछ ही रुपयोंका लाभ होगा और वह अुस वृद्धिका लाभदायक ढगसे अुपयोग नही कर सकेगा — अुससे अुसकी गरीबी मिटेगी नहीं। अकगणितके अिस तथ्यके आधार पर यह तर्क किया जाता है कि चोटीके कुछ बुद्धिशाली चतुर लोगोंके हाथोंमें सम्पत्तिको रहने देना बुद्धिमानी होगी, क्योंकि वे ही सम्पत्तिको बढ़ा सकते हैं।

मैं यह अनुरोध नही कर रहा हू कि थोड़ेसे लोगोंसे अुनकी मौजूदा सम्पत्ति छीन ली जाय। परन्तु मेरा अनुरोध यह है कि अब आगे आम लोगोको थोडी थोडी मात्रामें अपनी सम्पत्ति पैदा करने और अुसे सारीकी सारी अपने ही लिअे रखनेका मौका दिया जाना चाहिये; और वे चाहें या न चाहें तो भी अुन्हें दूसरोंके फायदेके लिअे काम करनेको मजबूर होना पड़े अैसी स्थिति नहीं रहनी चाहिये। पूजीवाद और साम्यवाद शक्ति-शालियोंके लाभके लिअे मनुष्योंका अुपयोग करते हैं; गाधीजीका कार्यक्रम स्त्री-पुरुषोंको दूसरोंके लाभका साधन बनाकर अुनका अुपयोग नहीं करता। वह स्त्री-पुरुषोंको अपने आपमें ध्येय मानता है, और अुनके अपने ही लाभके

लिअे काम करने देता है। वह यह नहीं कहता कि श्रम खरीद-विक्रीका कोअी पदार्थ या अुत्पादनका खर्च है; वह कहता है कि छोटे-बड़े सभी अुद्योगोंका नफा काम करनेवाले मजदूरोंको अुद्योगके साधन जुटानेवालोंके बराबर या अुससे ज्यादा मिलना चाहिये। और गांधीजीके कार्यक्रमकी विशेषता यह है कि अुसमें मजदूर और साधन जुटानेवाला अेक ही होता है।

शिल्प-विज्ञानका अुपयोग

मानव-जातिकी गरीबी दूर करनेके लिअे पूंजीवाद, साम्यवाद, समाज-वाद और गांधीजीका कार्यक्रम सभी शिल्प-विज्ञानका अुपयोग करते है। पहले तीन वाद पश्चिमी ढंगके जिस शिल्प-विज्ञानका अुपयोग करते है, वह (कुछ हद तक अिसलिअे कि अुसमें भौतिक शक्ति बहुत बड़ी मात्रामें काममें ली जाती है) मजदूरोंको अिस बातके लिअे मजबूर करता है कि वे अपने आपको ही नहीं, बल्कि अपने सारे जीवनको यंत्रोंकी गति और यंत्रोंकी निश्चितताके अनुकूल बनायें। अधिकांश साधारण मजदूर यंत्रोके सेवक, नौकर और कभी कभी तो गुलाम ही बन जाते हैं। भौतिक दृष्टिसे ये मशीनें और प्रक्रियाअें बड़ी मात्रामें चीजें पैदा करती है, परन्तु मानसिक और नैतिक दृष्टिसे वे मनुष्यके अनुकूल नहीं होतीं। मिल या कारखानेका व्यवस्थापक यह समझ सकता है कि मशीनें अुसकी नौकर है, परन्तु वह भी मशीनोंसे, अुनकी गतिसे और अुनकी आवश्यकताअोंसे बंधा होता है। परन्तु अधिकांश मजदूरोंके लिअे मशीन नौकर नहीं बल्कि अुनकी मालिक ही होती है। असलमें मशीन ही अुनकी मालिक नहीं है, बल्कि अुन धारणाओं, हेतुओं, तर्कों, विचारों, भावनाओं, शोधों, आविष्कारों और आदतोंका सारा पेचीदा समूह भी अुनका मालिक है, जिससे पाश्चात्य संस्कृति और मशीनें दोनोंका निर्माण हुआ है। जिन धारणाओं पर अुस संस्कृतिका आधार है, अुनमें से अनेकोंकी यथार्थता अब नष्ट हो रही है।

गांधीजीकी योजनाका शिल्प-विज्ञान अैसा है, जिससे भौतिक सम्पत्ति बढ़नेके अलावा और भी अनेक लाभ होते है। अिसका कारण

यह है कि अुसके औजार भारतीय किसानोंकी शक्ति और अुनकी वर्तमान शारीरिक, बौद्धिक, नैतिक और मानसिक स्थितिके बहुत अनुकूल हैं। अिस सीधे-सादे शिल्प-विज्ञानसे अधिकांश लोगोंको स्वावलम्बनका पाठ मिलता है और वे सचमुच स्वावलम्बी बनते हैं। गांधीवादी शिल्प-विज्ञानके विकासका कोअी पार नहीं है। परन्तु अुसे गांवके स्तर तक ही सीमित रखना चाहिये। भविष्यमें जब ग्रामवासी फिरसे आत्म-सम्मान, आत्म-विश्वास और अनुशासनके गुण प्राप्त कर लेंगे, अुसके बाद यह शिल्प-विज्ञान क्या रूप लेगा यह देखना बाकी है। परन्तु अभी तो पहले रखने जैसी चीजोंको ही पहले रखना चाहिये।

परन्तु पूंजीवादी, साम्यवादी और समाजवादी शिल्प-विज्ञान सब लोगों पर अूपरसे अेक औद्योगिक ढांचा लादता है, और किसानों पर आर्थिक दबाव डालकर अुन्हें अपनी जीवन-पद्धति (अच्छी और बुरी दोनों तरहकी) बदलनेको मजबूर करता है। जिस आदमीको अेक बड़ी मशीन चलानेको विवश किया जाता है, अुसे अपने काममें कोअी रचनात्मक प्रेरणा नहीं अनुभव होती, अुसमें आत्म-निर्भरता तथा आत्म-सम्मानका विकास नहीं होता और अुसमें मन तथा आत्माकी वह स्वाधीनता अुत्पन्न नहीं होती जो गांधीजीके कार्यक्रमके अनुसार काम करनेवालेमें होती है। गांधीवादी शिल्प-विज्ञान प्रतिघंटे जितनी मात्रामें और जितनी तेजीसे माल पैदा करता है, अुतनी ही मात्रामें और अुतनी ही तेजीसे आत्म-सम्मान भी अुत्पन्न करता है।

पूंजीवाद, समाजवाद और साम्यवादके शिल्प विज्ञानके लाभ आम लोगोंके लिअे मुख्यतः भौतिक हैं, गांधीजीके कार्यक्रमके लाभ भौतिक भी हैं, परन्तु मुख्यतः वे नैतिक हैं। किसी समाजके लिअे अुसके सदस्योंके नैतिक चरित्रका विकास औद्योगिक क्षमताकी अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण वस्तु है। चूंकि लगभग सभी लोगों पर महान सत्ताके जहरका असर होता है, अिसलिअे व्यवहारमें पूंजीवाद, साम्यवाद और समाजवादका भी लाभ थोड़ेसे कुछ लोगोंको ही मिलता है, परन्तु गांधीजीके कार्यक्रममें लाभका निर्माण

बहुत लोग करते हैं और वह थोड़ा थोड़ा करके बहुतोंमें बंट कर वहीं रहता है, अिसलिअे वह बहुतोंको मिलता है और अुन्हींमें स्थायी रहता है — अुसमें भाग लेनेवाले सभी लोगों तक पहुंचता है।

गांवोंके औजार क्या तिरस्कारके योग्य हैं ?

जिन लोगों पर पाश्चात्य शिल्प-विज्ञानका असर है, वे भारतीय गांवोंके देशी औजारों पर हंसते हैं या अुनका तिरस्कार करते हैं। वे जोर देकर कहते है कि ये चीजें न तो कार्य-दक्षताकी दृष्टिसे अच्छी हैं और न वैज्ञानिक हैं। परन्तु वे यह भूल जाते हैं कि अुद्योगवाद और औद्योगिक शिल्प-विज्ञानका धनवानोंके प्रति कितना पक्षपात है। विज्ञान और अिंजीनियरीका धनवानों तथा सैन्यवादियोंकी सेवामें अुपयोग होना वन्द होना चाहिये और अुनका अुपयोग गरीबोंकी सेवामें, अधिकांश मानव-जातिकी भलाअीमें होना चाहिये। अम्वर चरखेके आविष्कारने सिद्ध कर दिया है कि शिल्प-विज्ञान मनुष्यके हाथसे चलनेवाले छोटे छोटे यंत्रोंको सुधार सकता है।

तीस वर्ष पहले मैंने अेक पुस्तक लिखी थी। अुसमें से कुछ अुद्धरण यहां देता हूं : *

> "हम कभी कभी यह भूल जाते हैं कि विज्ञान और कार्य-कुशलताका मुख्य सम्वन्ध आकार या रूपसे नहीं होता। अणुके अध्ययनमें भी अुतना ही विज्ञान है जितना सागरमें चलनेवाले विशाल जहाजके अध्ययनमें है। घड़ीसाजकी या मकड़ीकी कार्य-कुशलता अुतनी ही बढ़िया है जितनी बॉयलर या पुल बनानेवालेकी। चरखेके छोटेपन और सादगीसे या अुसे चलानेमें लगनेवाली अल्पशक्तिसे वह अवैज्ञानिक नहीं हो जाता। आकार और सादगी केवल सापेक्ष शब्द हैं। चरखा चलानेवाले अनेक लोगोंको रुअीके तंतुओंका अुतना ही ज्ञान हो सकता है और अिस प्रवृत्तिके यंत्र-विशारदोंको रुअीके तंतुओंका अुतना ही ज्ञान होना चाहिये,

* 'अिकानॉमिक्स ऑफ खद्दर', जिसका अुल्लेख पहले किया गया है।

जितना अिंग्लैण्ड, जर्मनी, जापान, या संयुक्त राज्य अमरीकाके अत्यन्त आगे बढ़े हुअे यंत्र-विशारदोंको है।

"खादीका कार्यक्रम विज्ञानको अस्वीकार नहीं करता। अिसके विपरीत, वह अर्थशास्त्रके साथ अुस तत्त्वका बुद्धिपूर्ण विनियोग करता है, जिसे वैज्ञानिक थर्मोडिनेमिक्स (अुष्णता और यांत्रिक शक्तिका सम्बन्ध बतानेवाला विज्ञान) का दूसरा नियम कहते हैं। हाथकी चरखी, धुनकी, चरखा और हाथ-करघा सादी मशीनें हैं, जो दूसरी मशीनोंकी अपेक्षा भारतकी वर्तमान परिस्थितिके अधिक अनुकूल है। प्राचीनताके प्रेमी रोजकी धूपसे कोयलेको ज्यादा पसन्द कर सकते हैं, परन्तु प्राचीन कालसे संगृहीत सूर्यशक्तिके रूपमें कोयलेका प्रयोग करनेमें अुसी शक्तिके परिणामरूप अन्न और शरीर-बलके प्रयोगसे कोअी अधिक वैज्ञानिकता नहीं है। हमें विज्ञानको शिल्प-विज्ञानके साथ या सत्ताके केन्द्रीकरणके साथ मिलाकर गड़बड़ नहीं करनी चाहिये। विज्ञान तो शक्तिके किसी भी रूप और मात्राको तथा शिल्प-विज्ञानकी किसी भी पद्धतिको लागू होता है।

"भापके अेंजिन, डायनेमो (बिजली पैदा करनेवाला यंत्र) और दूसरी सारी मशीनोंकी प्रशंसामें हमें मानव-शरीरकी अद्‌भुत कार्य-क्षमताको नहीं भूल जाना चाहिये। आखिर तो कोयले और तेलमें रहनेवाली शक्तिको हमने नहीं बनाया है। जो अिंजीनियर जल-विद्युत्-शक्तिका अुत्पादन-केन्द्र बनाता है अुसे किसी जल-भंडारमें अेकत्रित पानीका अुपयोग करनेमें नायगरा प्रपात जैसे बहते पानीके अुपयोगकी अपेक्षा अधिक गर्व अनुभव नहीं करना चाहिये। यही बात संगृहीत और चालू सूर्यशक्तिकी है। बड़ा आकार, बड़ी मात्रा और बड़ी गति बेशक प्रभावशाली और बहुधा प्रशंसनीय होते हैं, परन्तु वे किसी हद तक बहुत जोरकी आवाजकी तरह हैं। हमें जंगली मनुष्यकी-सी भूल नहीं करनी चाहिये और अिन चीजोंके बड़ेपनसे चकराना, घबराना या अपना मानसिक

संतुलन नहीं खो देना चाहिये। मानव-बुद्धि और आत्मा अुनसे अधिक महत्त्वपूर्ण हैं।

"खादीकी प्रवृत्ति आधुनिक विज्ञान और शिल्प-विज्ञानका अधिकाधिक अुपयोग कर रही है, परन्तु वह अुपयोग अेक भिन्न प्रकारकी शक्ति और पाश्चात्य अुद्योगवादसे भिन्न प्रकारकी मशीनरीके लिअे हो रहा है।

"अलबत्ता, सिर्फ रूढ़ हुअे रिवाजों अथवा भूतकालकी गलत पूजाके भावसे अिन हाथसे चलनेवाले औजारोंका सुस्ती या मूढ़तासे अुपयोग किया जा सकता है। परन्तु अुनका अत्यंत निश्चित और गहरे आधुनिक वैज्ञानिक ज्ञान तथा प्रशंसनीय कार्य-कुशलताके साथ भी अुपयोग किया जा सकता है। केवल प्राचीन होनेसे ही हमारे पूर्वजोंके रिवाज न तो जरूरी तौर पर अच्छे थे और न जरूरी तौर पर बुरे या अवैज्ञानिक थे।

"पाश्चात्य यांत्रिक अुत्पादनके समर्थकोंका कहना है कि हाथके अुत्पादनसे यांत्रिक अुत्पादनकी श्रेष्ठता अिस बातमें नहीं है कि वह अधिक मात्रामें शक्तिका अुपयोग करता है, परन्तु अिसमें है कि वह अधिक कार्य-क्षमतासे अुस शक्तिका अुपयोग करता है।

"मैंने यह सिद्ध करनेकी कोशिश की है कि जब बड़ी बड़ी मशीनोंके बनाने, अिधर-अुधर ले जाने, लगाने, अुनके लिअे मकान बनाने और अुनको चलानेमें काम आनेवाली सारी शक्तिका हिसाब लगाया जाता है, तो पूर्वी देशोंमें सामान्यतः हाथसे चलनेवाली छोटी छोटी मशीनोंकी अपेक्षा यांत्रिक अुत्पादनकी यांत्रिक क्षमता कम होती है। परन्तु सच्चा प्रश्न केवल यांत्रिक कार्य-क्षमताका नहीं है, परन्तु आर्थिक कार्य-क्षमताका है। अिस बारेमें श्री चेज़ने अपनी पुस्तक 'दि ट्रेजेडी ऑफ वेस्ट' में बताया है कि संयुक्त राज्य अमरीकामें अुत्पादन, वितरण और अुपभोगमें कितना भारी अपव्यय होता है। शायद दूसरे पश्चिमी देशोंमें भी अैसा ही

अपव्यय होता होगा। साथ ही यह भी स्पष्ट है कि पाश्चात्य आर्थिक पद्धतियों और रीतियोंने बहुत हद तक अपनी गति, बड़े पैमाने, धन बचानेकी वृत्ति और श्रमकी विशेषज्ञताके कारण पैदा हुआी गंदी बस्तियों, घिचपिच आबादी और अत्यधिक कठिन परिश्रमकी वजहसे बिगड़नेवाले स्वास्थ्य, साधारण ग्राम-जीवनकी छिन्न-भिन्नता, बेकारी, हड़तालें, वर्ग-संघर्ष, राष्ट्रोंकी व्यापारिक प्रतिस्पर्धा और युद्ध आदिके द्वारा व्यक्तिगत और सामाजिक मूल्योंको भारी हानि पहुंचाअी है। आर्थिक कार्य-क्षमताके सही अंदाजमें अिन प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष आर्थिक हानियोंका और लाभोंका भी विचार होना चाहिये।

"जब अिन सब बातोंका अुचित विचार किया जाता है, तब पश्चिमको अपनी श्रेष्ठ कार्य-क्षमताके दावेमें काफी सुधार करना होगा। पूर्व अपनी कार्य-क्षमतामें बहुत सुधार कर सकता है, परन्तु आज भी अुसे हतोत्साह होनेकी जरूरत नहीं। प्रो० सॉडी, जो स्वयं अेक प्रतिभाशाली वैज्ञानिक हैं, अपनी पुस्तक 'वेल्थ, वर्च्युअल वेल्थ अेण्ड डेट' में कहते हैं :

'शक्तिके दृष्टिकोणसे शक्तिके अुन स्रोतों पर लगातार प्रभुत्व और नियंत्रण बनाये रखना प्रगति समझी जा सकती है, जो मूल स्रोतके अधिकाधिक निकट हों।

'अिसका ज्ञान तो लगभग अेक शताब्दीसे हो चुका है, परन्तु अिस ज्ञानके फलितार्थ अक्सर भुला दिये जाते हैं। वह-यह कि आर्थिक दृष्टिसे कुछ महत्त्वहीन अपवादोंको छोड़कर जिस शक्तिसे संसार चल रहा है वह सारीकी सारी शक्ति सूर्यसे मिलती है।

'सम्पत्ति . . . मुख्यत अुपयोगी या अुपलब्ध शक्तिकी अुपज है। . . .

'यद्यपि किसी अिंजीनियर अथवा भौतिकशास्त्रीके सिवा सभीकी दृष्टिमें शक्ति सम्पत्तिके अुत्पादनमें अेक छोटीसी चीज

दिखाअी देती है; फिर भी अगर हमारा सम्बन्ध अुस शक्तिसे है, जो सम्पत्तिके अुत्पादनकी प्रक्रियामें खर्च हो जाती है, तो वह सबसे बड़ी और महत्त्वपूर्ण वस्तु है।

'बेशक, अिसका बहुत कुछ महत्त्व विशेपज्ञकी समझमे आता है, यद्यपि सामान्यतः सम्पत्तिके मूल स्रोतकी सूर्य-प्रकाशकी भौतिक शक्ति तक पीछे लौटकर शोध नही की जाती।'"

अणुशक्ति

अगर कोअी यह तर्क करे कि मैंने अणुशक्तिके विकास और प्रयोगसे होनेवाले लाभोंकी अवहेलना की है, तो मेरा यह अुत्तर है कि भारतकी बड़ी समस्या अन्न और जनसंख्याका सतुलन बनाये रखनेकी है; और अणु-शक्तिका विकास जनसंख्याकी अपेक्षा धीरे होगा, अिसलिअे वह मुख्य समस्याको हल करनेमें अगर कोअी मदद दे भी सकेगी तो बहुत थोड़ी दे सकेगी। बड़ी मात्रामें अणुशक्तिके विकासका असर शायद यह होगा कि अुससे पूजीवादी अुद्योगवादकी अपेक्षा भारतकी प्राकृतिक साधन-सामग्री अधिक तेजीसे समाप्त होगी।

विज्ञान और शिल्प-विज्ञानका अेक दुष्परिणाम

अिसके सिवा, यह ध्यानमे रखना चाहिये कि अुद्योगवाद किसीकी भी छत्रछायामें क्यो न हो, अुसमे विज्ञान और शिल्प-विज्ञान पर जो बड़ा जोर दिया जाता है अुससे मनुष्यके आन्तरिक जीवन परसे ध्यान और दिलचस्पी हट जाती है और संसारकी अुत्तेजना अुत्पन्न करनेवाली रोचक वस्तुओं पर अधिकाधिक ध्यान, समय और शक्ति केन्द्रित हो जाती है। पहले तो यह जोर कल्पना, भावना, बुद्धि और आत्मासे सम्बन्ध रखनेवाले आन्तरिक जगतकी सत्यता, वास्तविकता और महत्त्वकी भावनाको मन्द कर देता है और अन्तमे अुसका लगभग नाश कर देता है। जैसा कि दीर्घ कालसे अुद्योगवादके मार्ग पर चलते आये पश्चिमके राष्ट्रोंमें देखा जा सकता है, अिससे व्यक्ति और समाज दोनोमे अतितुष्टिकी, जीवनमें

रिक्तताकी, मानव-महत्त्व और गौरवकी हानिकी तथा दिशाशून्यताकी भावना पैदा हो जाती है।

पृथ्वी सीमित है। मनुष्यका चित्त और आत्मा असीम हैं। विशाल मानव-जातिको भौतिक और पार्थिव वस्तुओंमें सीमित कर देना अुसे सच्चे मानव-स्वभावसे अुसे वंचित कर देना है। अुसका परिणाम सीमित साधनोंकी प्रतिस्पर्धामें आता है। अुसमें से संघर्ष जन्म लेता है और आखिरमें मानव-सम्पत्तिका और सभ्यताओंका विनाश होता है।

समाजके लिअे योजना

पूंजीवाद, साम्यवाद और समाजवाद सब अूपरसे योजनायें बनाते हैं। ये मान लेते हैं कि मुट्ठीभर लोगोंकी बुद्धि श्रेष्ठ होती है। पूंजीवाद यह काम अप्रत्यक्ष रूपमें और ज्यादातर अप्रकट साधनोंसे करता है, साम्यवाद और समाजवाद अुसे खुले तौर पर करते हैं। अिस योजनाका कुछ भाग तो अुचित भी है और अनिवार्य भी, क्योंकि काम बड़े पैमाने पर होते हैं। परन्तु अुसे बिलकुल सीमित रखना चाहिये। किसी सभ्यताका जीवन और अुसके असंख्य व्यक्तियोंका जीवन अितना पेचीदा और तेजीसे बदलनेवाला होता है कि कैसी भी योजना अुसके लिअे लाभकारी सिद्ध नहीं हो सकती। अगर अिस प्रकारकी योजना सम्पूर्ण हो तो अुससे अन्याय होता है। जहां तक संभव हो, अुसकी व्यवस्था छोटी छोटी ग्रामीण अिकाअियोंमें बंट जानी चाहिये। अिस मार्गमें भी कठिनाअियां और समस्यायें तो होंगी, परन्तु अुन्हें ज्यादा आसानीसे संभाला और सुलझाया जा सकेगा। कुशल शासनकी अपेक्षा स्वशासन अधिक महत्त्वपूर्ण है।

भूदान और ग्रामदान

गांधीजीने जो रचनात्मक कार्यक्रम शुरू किया था, अुसके दूसरे पहलुओं पर विचार करनेसे पहले हमें आचार्य विनोबा भावे द्वारा चलाये हुअे भूदान और ग्रामदान आन्दोलनका अुल्लेख करना चाहिये। विनोबाजी शायद गांधीजीके सबसे निकटवर्ती और सबसे महान अनुयायी हैं।

अुन्होंने यह काम १९५१ में आरम्भ किया। वे अेक प्रखर विद्वान पुरुष हैं, परन्तु गांधीजीकी तरह अुनका जीवन भी सादा और तपस्यामय है। वे गांव गांव पैदल जाकर सभायें करते हैं, जिनके पास वहुतसी जमीन है अुनसे जमीनका छठा भाग मांगते हैं और अुसे भूमिहीन खेतीहर मजदूरोंमें वांट देते हैं। यह भूदान है। अुसमें से ग्रामदानका जन्म हुआ। अिसमें गांवभरकी सारी जमीन अिकट्ठी कर ली जाती है, फिर सारा गांव अुसका मालिक बनता है और पट्टे जैसे आधार पर वह जमीन सब किसानोंमें न्यायपूर्वक वांट दी जाती है। यह जमीन वेची नहीं जा सकती। छह वर्षके अिस प्रयत्नमें विनोवाजीने सचमुच वयालीस लाख अेकड़से अूपर भूमि जमीनके भूखे किसानों और जमीनसे वंचित खेतीके मजदूरोंमें बांटी है। मुझे विश्वासके साथ कहा गया है कि भारत-सरकारके किसी कानून द्वारा अितना काम नहीं हो पाया है। अैसी सीधी-सादी विशुद्ध नैतिक अपील सचमुच अितनी सफल हो सकती है, अिस पर विश्वास नहीं होता। जब क्रुश्चेव और वुलगानिन भारत आये थे, तब अुन्हें अिस वात पर विश्वास नहीं हुआ; और मुझसे कहा गया है कि जब प्रधानमंत्री नेहरू तकने अिसकी सचाअीका अुन्हें विश्वास दिलाया तब भी अुनका अविश्वास बना रहा।

अब (मअी १९५७ में) यह आन्दोलन जोर पकड़ रहा है। विनोवाजी अब तक बम्बअी राज्य, अुत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, बिहार, अुड़ीसा, मद्रास राज्य और केरल राज्यके कुछ भागोंमें पदयात्रा कर चुके हैं। केरल राज्यकी सरकार और वहांके दोनों विरोधी दल अिस आन्दोलनका सक्रिय समर्थन कर रहे हैं। केन्द्रीय सरकारका रुख भी अनुकूल है। जनवरी १९५७ तक भारतके चौदहमें से ग्यारह राज्योंमें २,१४० गांवोंमें ग्रामदान मिला है।

कदाचित् भूमि-सुधारकी यह पद्धति भारतके सिवा और किसी देशमें सफल नहीं हो सकती थी। जमींदारों पर विशुद्ध नैतिक और आध्यात्मिक अपीलका असर हुआ। अिससे मानवकी जन्मजात अच्छाअी पर हमारी

श्रद्धा ताजी होती है। जिन किसानोंके पास थोड़ीसी जमीन थी, अुन्होंने भी अुसका कुछ हिस्सा भूमिहीनोंको दिया है। हमें विश्वास करना चाहिये कि गांधीजी अिस आन्दोलनको अपना अुत्साहपूर्ण आशीर्वाद और समर्थन अवश्य देते। यह किसी भी कानून या दूसरी सरकारी कार्रवाअीकी अपेक्षा अधिक त्वरित, अधिक सस्ता, अधिक स्थायी और अधिक सूक्ष्म नैतिक परिणाम लानेवाला मालूम होता है। ये सारे दान सर्वथा स्वेच्छापूर्वक हुअे हैं, जब कि किसी भी सरकारी कार्रवाअीमें जबरदस्ती होती है और अुसमें बड़ा असंतोष पैदा होता है। यह आन्दोलन भारतमें हिंसात्मक स्वरूपके साम्यवादको रोकनेका अच्छा साधन बन सकता है। विनोबाजी और अुनके अनेक अनुयायियोंको अिसमें अेक महान नैतिक, आर्थिक और राजनीतिक अहिंसक प्रगतिका आरम्भ दिखाअी देता है। ग्रामदान आसानीसे किसी न किसी प्रकारकी सहकारी खेती समितियोंका अुत्तम आधार बन सकता है। भूमि-स्वामित्वकी पद्धतिमें होनेवाला सुधार सारे अेशियामें ही नहीं, संसारभरमें बड़ा भारी महत्त्व रखता है। अिसके परिणाम न सिर्फ आर्थिक और राजनीतिक होंगे, परन्तु नैतिक भी होंगे।

गांधीजीका कार्यक्रम बंधा हुआ या जड़ नहीं है

आधुनिक संसारकी समस्यायें अितनी अधिक और अितनी पेचीदा हैं कि कोअी अेक आदमी अुन सबको निपटा नहीं सकता। अिन समस्याओंमें से गांधीजीने कुछ महत्त्वकी समस्यायें चुन लीं। अुन्होंने वे ही समस्यायें चुनीं जो अुस समय सबसे महत्त्वकी दिखाअी दीं। समयके साथ साथ अुनके कार्यक्रमका विस्तार हुआ और अुन्होंने सूचित किया कि वे जीवित रहे तो अुसे और भी आगे बढ़ायेंगे। वे अक्सर कहा करते थे कि 'मेरे लिअे अेक कदम काफी है।' हम विश्वास रखें कि वे आज जीवित होते तो भूदान और ग्रामदानके लिअे ही नहीं, परन्तु दूसरे सुधारोंके लिअे भी जोर लगाते।

गांधीजी कुछ अुद्योगवादको जरूरी मानते थे, परन्तु अुसे सबके लाभके लिअे नियंत्रणमें रखना चाहते थे

गांधीजी मानते थे कि आजकी दुनियामें कुछ बड़े अुद्योग जरूरी हैं, जैसे लोहे और अिस्पात, रेलकी पटरियों और अेंजिनों, मोटर कार और लारियों, बिजली पैदा करनेके यंत्रों और बड़ी मशीनों वगैराके अुद्योग। और अुनका यह विश्वास था कि अिन बड़े अुद्योगोका स्वामित्व और संचालन राज्यके हाथमें होना चाहिये और अुन्हें व्यक्तियोके लाभके बजाय सारे समाजके लाभके लिअे चलाना चाहिये। मैं मानता हूं कि समाजवाद-सम्बन्धी परिच्छेदमें मैंने जो अुद्योग गिनाये है अुन अुद्योगोके सरकारी नियन्त्रणका गांधीजी समर्थन करते।

धरतीका कटाव

अुनके जीवन-कालमें धरती-कटावकी समस्या सामने नही आअी थी और वह अितनी तात्कालिक, आवश्यक और महत्त्वपूर्ण दिखाअी नहीं दी थी। परन्तु अब हम अिसका महत्त्व अनुभव करते हैं और मेरा विश्वास है कि वे भी अिसे अनुभव करते और अिसे अपने कार्यक्रमका अेक अंग बनाना खुशीसे स्वीकार करते। मुझे लगता है कि जो गांधीवादी अिस बातसे सहमत हों अुन्हे अिस पर ध्यान देना चाहिये और अिसके लिअे कार्य करना चाहिये। आशा है वे अिस समस्याके बारेमें या तो सरकारके प्रयत्नोंमे मदद देंगे या स्वयं कुछ करेंगे।

अिसीके साथ जुड़ा हुआ जंगलोके विकास और विस्तारका काम है। अिसे भी मेरे खयालसे गांधीजीके सिद्धान्तोंको माननेवाले अुन लोगोंके लिअे, जिनका रस और प्रतिभा अिस दिशामें हों, गांधीजीके कार्यक्रममें जोड़ लेना अुचित होगा।

खेतीबाड़ी, कम्पोस्ट खाद और गोपालन

खेतीकाममे सुधार और जमीनकी व्यवस्था, कचरेका कम्पोस्ट खाद और गोपालनके मामलेमें गांधीजीका कार्यक्रम, जैसा अूपर वर्णन किया

गया है, सरकारी कार्यक्रमके साथ साथ चलेगा। किन्तु यह अुन दबाव-वाले और नौकरशाही तरीकोंसे मुक्त होगा जो सरकारकी छत्रछायामें लगभग अनिवार्य होते हैं, और यह शायद धीमा तो होगा, परन्तु मेरे खयालसे सरकारी प्रयत्नोंसे अधिक लोकतांत्रिक होगा, अुसमें समझा-बुझाकर काम लिया जायगा और अुसके परिणाम स्थायी होंगे। मेरा विश्वास है कि अधिकांश गांधीवादी खेतोंमें बड़ी-बड़ी मशीनों और रासायनिक खादके व्यापक या स्थायी प्रयोगसे सहमत नहीं होंगे।

मुझे आशा है कि गोबरको भूमिकी अुर्वरता बढ़ानेके काममें लेनेके खातिर सुरक्षित रखनेके लिअे आज जहां गोबर अींधनके लिअे बहुत व्यापक पैमाने पर अिस्तेमाल किया जाता है वहां हर गांवके नजदीक जल्दी बढ़नेवाले पेड़ लगानेको प्रोत्साहन देनेवाला अेक आन्दोलन खड़ा हो जायगा। जब कभी कोअी बड़ा पेड़ काटा जाय, तब अुसकी जगह अेक छोटा पेड़ लगा दिया जाय और बकरियों तथा मवेशियोंसे अुसकी रक्षा की जाय। देहातवालोंके लिअे कोयला काफी सस्ता अींधन बनाया जा सके, अिसके लिअे यातायातका अभी काफी विकास नहीं हुआ है।

खेतीके सम्बन्धमें गांधीजीके कार्यक्रमका अेक अंग था गोरक्षा। गायकी पवित्रताकी कल्पना मुझे सही मालूम होती है। अगर व्यक्तिकी आत्मा पवित्र है तो अुस व्यक्तिको सहारा देनेवाली सभ्यता या संस्कृति भी अिस दृष्टिसे पवित्र है। कोअी संस्कृति दीर्घकाल तक नहीं टिक सकती, अगर अुसके लिअे अन्नप्राप्तिकी कोअी स्थायी स्थानीय व्यवस्था न हो — अर्थात् अुसका ठोस और स्थायी खेती पर आधार न हो। खेती तभी टिक सकती है जब जमीन नीरोग और अुपजाअू हो। अगर संस्कृति पवित्र है तो अुसका पालन-पोषण करनेवाली भूमि भी पवित्र है। जमीनकी नीरोगता और अुर्वरताका आधार अुसके सजीव पदार्थ — ह्यूमस तत्त्वकी मात्रा पर होता है। जिन जिन चीजोंसे जमीनको सजीव पदार्थ और खाद मिलते हैं, अुनमें गायके गोबरका खाद अुत्तम है — गायका खाद दूसरे सब जानवरोंके खादसे अच्छा होता है। अिस प्रकार यदि भूमि

पवित्र है तो अुसकी अुर्वरताकी अुत्तम रक्षक गाय भी पवित्र है। यह निरी भावुकता नहीं है; अिसमें कृषिशास्त्र और तर्कशास्त्र दोनों हैं। गाय अिसलिअे भी पवित्र है कि अुसका दूध सम्पूर्ण प्रोटीन तत्त्वोंवाला आहार है और लोगोंको स्वस्थ रखनेके खातिर वनस्पति प्रोटीनकी कमी पूरी करनेके लिअे अुसकी जरूरत है। गाय अिसलिअे भी पवित्र है कि वह पशुओं और प्रकृतिके साथ मनुष्यके सम्बन्धका प्राचीन प्रतीक है। कोअी भी महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध तभी स्थायी रह सकता है जब अुसे प्रतीकका रूप दिया जाय। मनुष्यको जमीन, अुसके जीव-जन्तु तथा कुदरतके प्राणियोंके साथके अपने सम्बन्धमें अनुचित हस्तक्षेप नहीं करना चाहिये। वृक्ष भी पवित्र हैं, क्योंकि वे पानीकी मात्राको कायम रखनेमें, धरतीके कटावको रोकनेमें और सूर्यशक्तिका रूपान्तर करनेमें महत्त्वका भाग अदा करते हैं।

परिवर्धित कार्यक्रम

अिसलिअे मुझे अिसमें बुद्धिमत्ता दिखाअी देती है कि गांधीजीके कार्यक्रममें अितना विस्तार कर लिया जाय, जिससे अुसमें भूदान और ग्रामदान, धरती-कटावका नियंत्रण, जंगलोंका विकास, खेती तथा भूमिकी व्यवस्था-पद्धतिमें सुधार तथा खास तौर पर कचरेका कम्पोस्ट खाद बनानेकी कलाका समावेश हो जाय।

गांधीजीके कार्यक्रमकी श्रेष्ठता

अब हम गांधीजीके परिवर्धित कार्यक्रमकी कुछ और विशिष्ट श्रेष्ठताओंका अुल्लेख कर दें:

१. अिस कार्यक्रममें अधिक जोर नैतिकता पर है और अिसका परिणाम भी नैतिक ही अधिक है; अिसमें समझाने-बुझानेकी, न कि दबावकी, पद्धतिका अुपयोग किया जाता है; और जो भी स्त्री-पुरुष और परिवार अिसे अपनाते हैं, अुन सब पर वह लागू होता है और अुन्हें तुरन्त फल देता है। अुसकी प्रगति भौतिक

भी है। परन्तु यह परिणाम महत्त्वपूर्ण और अनिवार्य होने पर भी आम तौर पर आरम्भमें गौण होता है।

२ गांधीजीके कार्यक्रममें जैसा साध्य हो वैसे ही साधनोंसे काम लिया जाता है—यानी साध्य और साधनका सुमेल होता है। दूसरे कार्यक्रमोंमें, जिनकी हमने चर्चा की है, यह बात नहीं होती।

३ चूंकि किसी भी देशकी महानताका सबसे स्थायी और स्पष्ट आधार सार्वभौम मानव-सम्यताको दी गयी अुसकी बड़ी बड़ी देनोंकी संख्या और प्रकार पर होता है और चूंकि हम यह कभी नहीं बता सकते कि किस माता-पितासे प्रतिभाशाली विभूतिका जन्म होगा, अिसलिअे जो देश सारी मानव-जातिकी अधिकसे अधिक सेवा करना चाहता है अुसे अधिकसे अधिक लोगोंके लिअे खुराक, मकान, अवसर, शिक्षा और स्वतन्त्रताकी व्यवस्था करनी चाहिये। तभी प्रतिभाशाली व्यक्तिको खिलनेका अुत्तम और अधिकतम अवसर मिलेगा, वह शिशुकालमें ही नष्ट नहीं हो जायगा, या दरिद्रताके भारसे दब नहीं जायगा, या विचारों तथा भावनाओंके कठोर नियन्त्रणके कारण कुंठित नहीं हो जायगा।

४ अन्य किसी भी कार्यक्रमकी अपेक्षा गांधीजीके कार्यक्रमकी प्रकृति और प्राणियोंके साथ अधिक अेकरसता और अधिक संतुलन है। अिसलिअे वह दूसरोंसे अधिक स्थायी हो सकता है।

५ यह कार्यक्रम मुख्यतः धातुओं और भूगर्भमें छिपे अींधनके सीमित साधनों पर निर्भर नहीं रहता, परन्तु सूर्यशक्तिकी विशाल और नित-नूतन वार्षिक प्राप्ति पर निर्भर करता है।

६. चूंकि भविष्य रंगीन जातियोंके हाथमें है और चूंकि गरीब होने पर भी अुन सबके पास सूर्यशक्तिका अपार भण्डार है, अिसलिअे गांधीजीके कार्यक्रमके सहारे वे सब अपनी सम्पत्ति, अपनी आत्म-निर्भरता, अपने आत्म-विश्वास, आत्म-गौरव, स्वास्थ्य,

शक्ति और सूझ-बूझका निर्माण कर सकेंगी। अगर भारत अिस कार्यक्रमको सफल बना लेगा तो वह अपने अुदाहरणसे अुन सबको स्वावलम्बी बननेमें सहायता देगा। अिसके द्वारा कदाचित् वह रंगीन जातियोंका नैतिक और आर्थिक नेता बन जायगा। और रंगीन जातियोंका नैतिक नेता ही संसारका नेता होगा।

७. अभी तो पाकिस्तानके नेता भारतके प्रति अीर्ष्या, सन्देह, भय और द्वेषसे भरे दिखाअी देते हैं। अगर भारत-सरकारकी योजनाका और भी विकास होता है, तो शायद पाकिस्तानके नेताओंका वैरभाव और बढ़ जायगा। परन्तु यदि भारतका कार्यक्रम बहुत अुद्योग-प्रधान न होकर गांधीजीकी रूपरेखाके अनुसार किसानोंके कल्याणको बढ़ानेवाला होगा और भारत दिल खोलकर पाकिस्तानियोंको बुनियादी तालीम, खादी और ग्राम-सुधारकी शिक्षा देनेको तैयार रहेगा, तो मेरे खयालसे पाकिस्तानकी शत्रुताको कम करनेका यह अेक सफल अुपाय हो सकता है। अिससे न सिर्फ भारतका बल्कि सारे पूर्वका और समस्त संसारका भी लाभ होगा।

सच तो यह है कि भारत जितना ही अधिक अपने अुद्योगोंका विकास करेगा, अुतनी ही अधिक संभावना अिस बातकी रहेगी कि दूसरे देश अुससे अीर्ष्या करें या अुसके प्रति प्रतिस्पर्धा, तिरस्कार या डरकी भावना रखें। अिसलिअे गांधीजीकी पद्धति ही अधिक अहिंसक और प्रेमपूर्ण है।

८. अिस कार्यक्रम पर अमल करनेसे नैतिक पतन तथा बेकारी और अर्ध-बेकारीका आर्थिक भार कम होता है। अिस कार्यक्रमको जितना भी आगे बढ़ाया जायगा और सफल बनाया जायगा, अुतने ही ये लाभ अधिक होंगे।

९. अगर अुस पर खूब व्यापक पैमाने पर तेजीसे अमल किया जाय, तो जल्दी जल्दी औद्योगिक विकास करनेके लिअे आजकलकी तरह प्रजा पर भारी कर नहीं लगाने पड़ेंगे और न बहुत बड़ी

संख्यामें सरकारी नौकरोंके वेतनका खर्च बरदाश्त करना पड़ेगा। अुसमें केन्द्रीय योजनासे अधिक स्वतंत्र रहकर काम करनेकी गुंजाअिश रहेगी। सरकारी कोष पर मौजूदा भार भी नहीं रहेगा। अुससे राष्ट्रीय ऋणकी मात्रा कम करनेमें और मुद्रा-प्रसारका खतरा कम करनेमें मदद मिलेगी।

१० पहले परिच्छेदमें अुल्लिखित सातों खतरे गांधीजीके कार्यक्रमसे कम हो जायगे।

११ अिससे दूसरे परिच्छेदमें वर्णित पूंजीवादके तेरहों खतरे मिट जायगे।

१२ पीड़ितोंके लिअे साम्यवादकी जिन बारह प्रेरणाओंका तीसरे परिच्छेदके आरंभमें अुल्लेख किया गया है, अुनमें से सात प्रेरणायें अिसमें मौजूद हैं। बाकी पांच प्रेरणायें तो काल्पनिक हैं।

१३ अन्य किसी भी योजना, प्रणाली या कार्यक्रमसे गांधीजीका कार्यक्रम अधिक करुणापूर्ण है और सारी मानव-जातिकी आध्यात्मिक अेकताके भावसे परिपूर्ण है।

अिस कार्यक्रमके पूरे अर्थ और महत्त्वको प्रगट करनेके लिअे कुछ और बातों पर भी विचार करना चाहिये।

शहर बनाम गांव

किसी बड़े देशमें, जहां विनिमयका माध्यम पैसा होता है, अनाजको खेतोंसे दूर दूरके शहरों तक ले जाना पड़ता है। वह कअी हाथोंमें से गुजरता है — जैसे गाड़ीवाले, संग्रह करनेवाले, रेलवे, दूसरे गाड़ीवाले, थोक व्यापारी, मंडीवाले, दलाल और फुटकर दुकानदार। अिनमें से हरअेक अपनी अपनी सेवाके दाम अुस पर चढ़ाता है। अक्सर विविध प्रक्रियाओं द्वारा खुराक तैयार करनेवाले साधन भी होते हैं, जैसे आटेकी मिलें, चावलकी मिलें, शक्करकी मिलें और खाद्य-पदार्थोंको डिब्बोंमें बंद करके सुरक्षित बनानेवाले कारखाने वगैरा। अिन सारे यंत्रोंका अुत्पादक

और अन्तिम अुपभोक्ता दोनों पर आर्थिक भार पड़ता है। किसान व्यक्तिगत रूपमें सौदा करते हैं और कमजोर होते हैं, अिसलिअे वे अितने दाम वसूल नहीं कर सकते जिनसे माल पैदा करनेका पूरा खर्च निकल आये। शहरोंके अंतिम अुपभोक्ताओंके लिअे खुराककी कीमत हर साल बराबर बढ़ती रहती है। वे भी लाचार हैं। खरीद-कीमत और बिक्री-कीमतके बीचका फर्क दलाल लोग हजम कर जाते हैं। शहर जितने बड़े होंगे अुतने ही दलाल ज्यादा होंगे। कभी कभी ये दलाल अपनी स्थितिसे फायदा अुठाकर अपनी सेवाओंका अत्यधिक मेहनताना अैंठते हैं। परन्तु अैसा हमेशा नहीं होता।

शहरी अुपभोक्ता अूंचे भावोंके लिअे किसानोंको दोष देते हैं; किसान समझते हैं कि शहरी लोग अुन्हें चूसते हैं। अिस तरह शहरों और गांवोंके बीच दुर्भाव पैदा होता है। वैसे देखा जाय तो कोअी भी जान-बूझकर दोष नहीं करता। सभी विवश हैं; संगठनकी प्रणालीमें फंसे हुअे हैं। हानि किसी अेक व्यक्ति या समूहके अत्यधिक लोभसे नहीं होती, परन्तु बड़े पैमाने पर काम करनेके अुस तरीकेसे तथा सत्ता और धनकी अुस लालसासे होती है, जिसके कारण शहरोंकी वृद्धि होती है और बड़े पैमाने पर तथा पेचीदा ढंगसे मंडियोंका कामकाज चलना आसान हो जाता है। अिस प्रकार लोग अपनी लालसाओंकी सजा भुगतते हैं।

चूंकि शहरी मजदूर अेक-दूसरेके निकट होते हैं, अिसलिअे वे आसानीसे अपने संघ बना लेते हैं और अपनी राजनीतिक शक्तिका अुपयोग करके शोषणके प्रवाहको किसानोंकी तरफ मोड़ देते हैं। अिस प्रकार किसानोंकी गरीबी बढ़ती है और अन्तमें धरती भी कंगाल — निःसत्त्व बनती है। यही प्रक्रिया रोमन साम्राज्यके पतनका भी अेक कारण थी। अमरीकामें किसान संगठित हो गये हैं, अिसलिअे अपनी राजनीतिक ताकतसे अुन्होंने किसानोंको आर्थिक सहायता देनेके लिअे सरकारको मजबूर कर दिया है। अिसका नतीजा जरूरतसे ज्यादा अुत्पादन और अतिरिक्त अुत्पादनके रूपमें आया है। देशकी समग्र प्रजाको करोंके जरिये अिसका

भार अुठाना पड़ता है। मगर अिसका भी अन्तिम परिणाम भूमिकी शक्ति-नष्ट होनेमें ही आता है।

आत्म-निर्भर गांवों और थोड़े तथा छोटे शहरोंका गांधीजीका आदर्श अिस सारी प्रक्रिया पर अंकुश लगायेगा, धरतीकी रक्षा करेगा और अन्तमें सभ्यता और भारतीय संस्कृतिकी आयु बढ़ायेगा।

हार्दिक सहयोग बनाम श्रम-विभाजन

जैसा अेल्टन मेयोने बताया है, हार्दिक मानव-सहयोग न केवल मानव-सभ्यताके लिअे नितांत आवश्यक है, परन्तु अुसे स्थायी भी छोटे छोटे समूहोंमें सर्वत्र किये जानेवाले कार्यके द्वारा ही बनाया जा सकता है। अिसमें मैं अितना और जोड़ूंगा, "जैसा कि देहातके हाथके काममें पाया जाता है।" मेयोने यह भी कहा है कि "सभ्य समाज स्वयं अपना नाश कर लेगा, अगर वह सहयोगके साधक और बाधक तत्त्वोंको बुद्धिपूर्वक समझेगा नहीं और अुनका नियंत्रण नहीं करेगा।" श्रमका चरम सीमाका विभाजन और हार्दिक सहयोग, अिन दोमें दूसरी चीज सभ्यताकी रक्षाके लिअे अधिक महत्त्वकी है। हाथके काम पर अवलम्बित अेशियाअी सभ्यता मानव-जातिके लिअे अुतनी ही महत्त्वपूर्ण है, जितनी पश्चिमकी औद्योगिक सभ्यताकी अल्पकालीन लहर है। चूंकि गांधीजीका कार्यक्रम अिस हार्दिक मानव-सहयोगको प्राप्त करनेके साधनोंकी रक्षा करता है, अिसलिअे वह सच्चा शिल्प-विज्ञान है और अेक विवेकशील तथा चिरस्थायी सभ्यताका निर्माण कर सकता है।

गांवोंकी बेकारी कम करना

भारतके गांवोंमें भयंकर बेकारी और अर्ध-बेकारी फैली हुअी है। अुसका बड़ा कारण आबोहवा है, लम्बा, गरम, सूखा मौसम जमीनको अैसी हालत कर देता है कि किसान अुस पर कोअी काम नहीं कर सकते। अिसका देश पर भयंकर आर्थिक और नैतिक भार पड़ता है।

हमने देख लिया कि अुद्योगवादका अेक हेतु यह भी है कि जो ग्रामीण बेकार हों अुन्हें कारखानों और मिलोंकी तरफ खींचकर गांवोंकी

वेकारी और अर्ध-वेकारीको तथा जमीन पर लोगोंके दवावको घटाया जाय। परन्तु शहरी कारखानोंके कामसे पारिवारिक जीवनकी जड़ें कमजोर होती हैं और अिस प्रकार सभ्यताको हानि पहुंचती है। गांधीजीके कार्य-क्रमको सरकारके भीतर और वाहर शक्ति और ज्ञान रखनेवाले लोग यदि अुत्साहपूर्वक चलायें, तो अुससे खादी और दूसरे ग्रामोद्योगोंके कामके द्वारा गांवोंकी वेकारी और अर्ध-वेकारी घटेगी। औजार सव स्वदेशी होंगे और वड़े वड़े कारखानों और अुनकी मशीनोंसे कहीं कम खर्चीले होंगे। ग्रामवासियोंको औजार वनाने और अुनका अुपयोग करनेसे जो काम मिलेगा, अुससे अुन्हें आत्म-विश्वास तथा आशाके रूपमें वहुत वड़ा लाभ होगा।

जीवन-स्तरको अूंचा अुठाना

कहा जाता है कि अुद्योगीकरणसे लोगोंका जीवन-स्तर अूंचा होगा, अुन्हें अधिक कपड़ा और अधिक मकान, अधिक आराम और अधिक सुविधायें मिलेंगी। मुझे विश्वास है कि गांधीजीका कार्यक्रम अुद्योगीकरणकी अपेक्षा कपड़ा जल्दी मुहैया करेगा और मजदूरोंका स्वाभिमान अधिक तेजीसे वढ़ायेगा। खेतीमें सुधार होनेसे किसानोंके लिअे अन्नकी मात्रा और गुण दोनों वहुत वढ़ेंगे, और यह वृद्धि अुतनी ही तेजीसे होगी जितनी अुद्योगवादके मार्ग पर चलनेसे, अथवा अुससे ज्यादा तेजीसे होगी। खेतीके सुधारके काममें मेरे खयालसे गांधीवादियोंको सरकारके साथ मिलकर चलना चाहिये। हां, अिसमें पहले वताये हुअे अपवाद तो रहेंगे ही।

फिर धरती-कटावकी वात

टॉम डेल और वर्नान जी० कार्टरकी पुस्तक 'टॉपसॉअिल अेण्ड सिविलिजेशन' के पृष्ठ २३१ से अेक अंश यहां अुद्धृत करता हूं। यह संयुक्त राज्य अमरीकाके संवंधमें है, परन्तु भारत पर भी अुतना ही लागू होता है।

"संयुक्त राज्य अमरीकाके लोगोंको प्राचीन कालके लोगोंकी अपेक्षा कमसे कम तीन लाभ अधिक हैं। हमारे सामने अितिहासकी

शिक्षायें मौजूद है और हम जानते हैं, या कमसे कम हमें जानना चाहिये, कि प्राकृतिक साधन-सामग्रीकी रक्षा और बुद्धिमानीसे असका अुपयोग हमारे जीवित रहनेके लिअे अत्यावश्यक है; बार बार नये सिरेसे अुत्पन्न हो सकने लायक साधन-सामग्रीका अुपयोग करते हुअे भी अुनका संरक्षण करनेके लिअे और नये सिरेसे बार बार अुत्पन्न न होने लायक साधन-सामग्रीका स्थान लेनेवाली दूसरी साधन-सामग्री अुत्पन्न करनेके लिअे आवश्यक वैज्ञानिक और व्यावहारिक ज्ञान हमारे पास है; और हमारे पास बड़ी श्रेष्ठ संचार व सार्वके साधन हैं, जिनसे हम सब लोगोंको अितिहासके सबक सिखा सकते हैं और साधन-सामग्रीके संरक्षणका ज्ञान दे सकते हैं। अगर हम केवल अिन सुविधाओंका अुपयोग ही कर लें, तो कोअी कारण नहीं कि यह राष्ट्र और यह सभ्यता हजारों वर्ष तक फलती-फूलती नहीं रह सकती और प्रगति नहीं कर सकती। . .

"अगर हमें जीवित रहना है तो हमें यह जान लेना होगा कि हमारी संस्कृतिका मौलिक आधार वह प्राकृतिक साधन-सामग्री है जिस पर वह निर्भर करती है, और जीवित रहनेके लिअे हमारी योजनाका प्रारंभ अुस साधन-सामग्रीकी रक्षा और अुपयोगके बुद्धिपूर्ण कार्यक्रमसे होना चाहिये।"

मैं यह कहूंगा कि केवल दृढ़निश्चय कृषि-प्रधान और वन-प्रधान संस्कृति ही, जो कृषि और वनोंको अपना आधार बनानेके कारणोंको समझती है, जो सूर्यशक्तिकी विशाल और अखूट ताकतको पहचानती है, जिसका आग्रह है कि छोटे पैमानेके संगठनकी लगभग सभी क्षेत्रोंमें प्रमुखता हो और जो आध्यात्मिक अेकताकी वास्तविकता और शक्ति पर जोर देती है, अपने कामके लिअे शिल्प-विज्ञान और विज्ञानके नये विकासोंका बुद्धिमत्तापूर्वक चुनाव कर सकती है और अपनी ओरसे भी अुनके विषयमें अधिक आविष्कार, खोज और विकास कर सकती है।

गांधीजीके कार्यक्रममें शिक्षितोंके लिअे अवसर

गांधीजीके कार्यक्रमको ठीक तरहसे समझ लिया जाय, तो अुसमें शिक्षित युवकोंके लिअे कामका विशाल क्षेत्र मौजूद है। अुनमें से अनेकोंको विशेष तालीम लेनी पड़ेगी, परन्तु अुनमें से कुछके लिअे, कमसे कम पहले कुछ वर्षों तक, तो प्रशिक्षण-काल औद्योगिक यंत्र-विशारदोंके प्रशिक्षण-कालकी अपेक्षा बहुत थोड़ा होगा।

अिनमें से कुछ धंधोंका अुल्लेख मैं यहां कर दूं। नीचेके कामोंके लिअे अिस आन्दोलनको आदमियोंकी जरूरत है:

बुनियादी तालीमके शिक्षक, पत्रकार, सफाअी-कामके अिंजीनियर, सिंचाअी-कामके अिंजीनियर और जल-विद्युत्के अिंजीनियर, कुअें खोदनेवाले, पाताल-कुअें तैयार करनेवाले, नल बिठानेवाले और अुनकी मरम्मत करनेवाले, सड़कोंके अिंजीनियर और पुलोंके अिंजीनियर;

वस्त्र-अुद्योग और अुसकी प्रक्रियाओंके शोधक, रंगरेज, नये ग्रामीण यंत्रोंके आविष्कारक, आहारके अधिक अच्छे पोषक तत्त्वोंकी शोध करनेवाले, गांवोंमें बौद्धिक और भावनाशील जीवनका निर्माण करनेवाले, नाटकोंकी शिक्षा देनेवाले शिक्षक, गांवोंकी सभाओंमें महाभारत और रामायण सुनानेवाले कथाकार तथा चलचित्रों और ग्रामोफोनके चलानेवाले;

खेती-कामके विशेषज्ञ, भूमिरक्षाके अिंजीनियर, कचरेका कम्पोस्ट खाद बनाना सिखानेवाले, जमीनोंके रसायनशास्त्र और भौतिक विज्ञानके संशोधक तथा जमीनके जीवाणुओं, खुमी और अन्य सजीव पदार्थोंके संशोधक, हिसाब-नवीस, हिसाब-निरीक्षक, प्राकृतिक चिकित्सक, तथा गोपालनकी शिक्षा देनेवाले।

छठे परिच्छेदमें जंगलके अुत्पादनसे सम्बंधित जिन अुद्योगोंका वर्णन किया गया है, अुनके सम्बंधमें आवश्यक वन-अधिकारी, वन-रक्षक, वनस्पति-शास्त्री, रसायनशास्त्री, तरह तरहके अिंजीनियर,

दस्तकला-विशारद और सब प्रकारकी व्यावहारिक छोटी मशीनें छोटे पैमाने पर बनानेवाले।

अिनमें से कुछ धंधे स्त्रियोंके लिअे भी शुरू होने चाहिये। अुनके साथ स्त्रियोंके काम ये होंगे

बुनियादी तालीमकी शिक्षिकायें, पोषक आहार, घरेलू अर्थशास्त्र, नाट्य, मकानों और बाल-कल्याणकी शिक्षिकायें, रसोइये, आहारशास्त्री, पोषक आहारका संशोधन करनेवाली, नर्सें, दाअियां, दवाअियोंकी कम्पाअुन्डर, सिनेमा और ग्रामोफोनके यंत्र चलानेवाली, सफाअी-निरीक्षिकायें, स्वास्थ्य-निरीक्षिकायें, छोटे बच्चोंके किंडर गार्टन स्कूलोंमें पढ़ानेवाली शिक्षिकायें, प्रयोगोंके रसायनशास्त्र और भौतिकविज्ञानका तथा जीव-जन्तुओं, भूमि और दूसरे सजीव पदार्थोंका संशोधन करनेवाली।

कदाचित् और भी धंधे होंगे जो मेरे ध्यानसे बाहर रह गये होंगे, और भविष्यमें और भी बहुतसे धंधोंका विकास होगा।

अिन सारे धंधों और कामोंमें समृद्ध बौद्धिक खुराक मिलेगी, काम करनेवालोंको अुच्च महत्त्व प्राप्त होगा, धीरे धीरे अुनके सामाजिक दरजेका विकास होगा, अुनमें स्वाभिमानकी भावना पैदा होगी और अुन्हें मातृभूमिकी निश्चित सेवाका सन्तोष प्राप्त होगा।

बुद्धिजीवियोंके लिअे तत्त्वज्ञान

बुद्धिजीवी लोगोंको भी अैसे अेक समग्र तत्त्वज्ञानकी जरूरत है, जो अत्यंत आधुनिक और वैज्ञानिक होते हुअे भी प्राचीन कालके कालातीत ज्ञानको तिलांजलि देनेवाला न हो। अैसा तत्त्वज्ञान प्रस्तुत करनेके अनेक प्रयत्न हो रहे हैं। मैंने भी अेक प्रयत्न किया है।* परन्तु और भी अनेक प्रयत्न होनेकी आवश्यकता है, क्योंकि यह विषय महान है और अिसकी चर्चाके कअी दृष्टिकोण हो सकते हैं।

* देखिये मेरी पुस्तक 'अे कम्पास फॉर सिविलिजेशन', नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद-१४

नियंत्रण करनेवाला दल

अत्यंत अुद्योग-प्रधान देशोंमें, खास तौर पर शायद पश्चिम जर्मनी, रूस, ग्रेट ब्रिटेन और संयुक्त राज्य अमरीकामें, सबसे अधिक बलशाली दल अुन व्यवस्थापकों और यंत्र-विशारदोंका है, जो बड़े अुद्योगोंकी अुत्पादक शक्तियोंका संचालन करते हैं। मैं जिस ढंगकी प्रगतिशील गांधीवादी व्यवस्थाकी चर्चा कर रहा हूं, अुसमें भी प्रगतिशील दल वे ही होंगे, जो अुत्पादक शक्तियोंका नियंत्रण करेंगे। परन्तु अिस व्यवस्थामें मुख्य अुत्पादक बल खेतों और जंगलोंमें प्राप्त होनेवाली सूर्यशक्ति होगी। जिनका अिस शक्ति पर नियंत्रण होता है वे हैं किसान, जंगलोंके अधिकारी और जंगलके अुत्पादनमें से तैयार की जानेवाली चीजोंके तथा खादी और ग्रामोद्योगोंके विशारद; ये वे लोग हैं जो प्राकृतिक साधन-सामग्रीकी रक्षा करते हैं, किसानोंमें पूंजीका संग्रह बढ़ाते हैं, जंगलों और खेतीका विकास करके अुनकी स्थायी पैदावारके गुण और मात्राको अुच्चतम सीमा तक पहुंचाते हैं और अेक अैसी सामाजिक और आर्थिक प्रणालीको आगे बढ़ाते हैं, जिसका प्रकृतिके साथ संतुलन और अेकरसता होती है तथा जो सब लोगोंकी आध्यात्मिक अेकताको बढ़ाती है। मेरे विचारसे ये लोग महात्मा गांधीके अनुयायी होंगे।

आर्थिक विकासकी दो शर्तें

यहां मैं अेक अमरीकी अर्थशास्त्री और औद्योगिक सलाहकार मि० पीटर ड्रकरके अेक लेखका अुद्धरण देता हूं। अुन्होंने लिखा है:

> "तेज औद्योगिक विकासके लिअे सबसे महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है लोगोंकी। . . . अैसे लोग जो आर्थिक परिवर्तनकी चुनौती और अुसके भीतर छिपे अवसरोंका स्वागत करनेको तैयार हों। अैसे लोग जिनकी निष्ठा अपने देशके आर्थिक विकासके प्रति और प्रामाणिकता, योग्यता, ज्ञान और कामके अूंचे स्तरके प्रति हो। सबसे बड़ी आवश्यकता है नेतृत्व तथा अुदाहरणकी; और यह वस्तु योग्य प्रजाजनोंसे ही मिल सकती है। . . .

"परन्तु कुशलता ही काफी नहीं है, वह मुख्य वस्तु भी नहीं है। कारण, सच्ची चुनौती प्रत्येक देशके प्रशिक्षित नवयुवकोंकी, दृष्टि और शक्तियोंको आकर्षित करनेकी है — अैसे नवयुवक जो नेतृत्व करने और सेवा करनेको अुत्सुक हों, जो अपने जीवन द्वारा कोअी महान कार्य करना चाहते हों और जिनकी आकांक्षायें किसी तुच्छ लक्ष्य पर केन्द्रित नहीं हों। अवश्य ही अिन नवयुवकोंको कुशलता सीखनी होगी, क्योंकि कुशलताके बिना निष्ठा और लगन कोअी मूल्य नहीं रखती। परन्तु वे कोरी कुशलतामें सन्तुष्ट नहीं होंगे। अुन्हें होना भी नहीं चाहिये। . .

"सभी 'विकासशील' देशोंको (अुनके औद्योगिक विकासके आरम्भ-कालमें) अपनी आवश्यकताके योग्य व्यक्तियोंका विकास करनेके लिअे दो बातोंकी जरूरत होती है। अेक तो अुन्हें चाहिये कोअी अैसी वस्तु जो बुद्धि और सौन्दर्यकी दृष्टिसे सन्तोषदायक हो, वह है सुव्यवस्थित ज्ञान अर्थात् अुद्योग आरम्भ करने तथा अुनकी व्यवस्था करनेकी अनुशासन-बद्ध तालीम। और दूसरे अुन्हें चाहिये व्यावसायिक आचरणके सामाजिक और नैतिक सिद्धान्त, जिनका कोअी भला आदमी आदर कर सके और जिनके आधार पर वह अपने स्वाभिमानका निर्माण कर सके। . सच्चा महत्त्व यान्त्रिक कुशलताओंका और यान्त्रिक पराक्रमताका नहीं होता, सच्चा महत्त्व तो बौद्धिक अनुशासनका है और जो काम करना है अुसके प्रति हमारी नैतिक वृत्तिका है।"

मुझे विश्वास है कि अन्य किसी भी कार्यक्रमकी अपेक्षा गांधीजीका कार्यक्रम अपने देशसे प्रेम करनेवाले और अुसकी समृद्धिकी अभिलाषा रखनेवाले लोगोंकी अिन नैतिक, बौद्धिक और सौन्दर्य-सम्बन्धी आवश्यकताओंको अधिक पूरा कर सकता है।

गहरे परिवर्तनोंकी आवश्यकता

जैसा मि० पीटर ड्रकर कहते हैं, "आर्थिक विकास केवल — शायद मुख्यतः भी — आर्थिक प्रक्रिया नहीं है; अुसमें गहरा सांस्कृतिक और सामाजिक परिवर्तन भी समाया होता है — मूल्यों, आदतों, ज्ञान, वृत्तियों, जीवन-प्रणालियो, सामाजिक आदर्शों और आकांक्षाओंके परिवर्तनकी बात भी समायी रहती है।" यह सच है, चाहे आर्थिक विकास अुद्योगीकरणके द्वारा हो या गांधीजीके कार्यक्रमके द्वारा। अिसका अर्थ यह है कि अिसके लिअे अेक विशाल शैक्षणिक प्रयत्न करना होगा और अुसके पूरे होनेमें समय लगेगा; बहुत संभव है कि दो या तीन पीढ़ियोंका समय लग जाय। यह मानव-जातिके विकासका ही अेक अंग है।

विविध कुशलताओंकी सहायता कहांसे मिले?

आवश्यक कुशलताओंके बारेमें मैं कहूंगा कि जमीन और जलकी रक्षाके सम्बंधमें भारतको सबसे अच्छी शिक्षा संयुक्त राज्य अमरीकाके अनुभवोंसे मिल सकती है; किसानोंको खेतीकी अधिक अच्छी पद्धतियां सिखानेके लिअे वह चीन और संयुक्त राज्य अमरीकासे सीख सकता है; जंगलोंके विकास और संरक्षणके मामलेमें स्वीडन, फिनलैण्ड और जर्मनीसे सीख सकता है; पशुपालन और अुनके आहारके बारेमें हॉलैण्ड, डेन्मार्क, अिंग्लैण्ड और अमरीकासे सीख सकता है; घनी खेतीके बारेमें जापान, चीन, हॉलैण्ड और डेन्मार्कसे सीख सकता है; तथा बदल बदल कर फसल बोने और बीज-सुधारके मामलेमें अिंग्लैण्ड, हॉलैण्ड और अमरीकासे सीख सकता है; कचरेसे कम्पोस्ट खाद बनानेके सम्बंधमें मेरे खयालसे सबसे अच्छी जानकारी बायो-डिनेमिक फार्मिंग अेण्ड गार्डनिंग अेसोसिअेशन[1] से मिल सकती है, जिसके सबसे बड़े निष्णात डॉ० अेरेनफ्राअिड अी० पीफर हैं[2]; अिसके बाद नम्बर आता है सॉअिल अेसोसिअेशन ऑफ अिंग्लैण्डके

---

१. रूरल रूट नं० १, चेस्टर, न्यूयॉर्क, अमरीका।

२. ब्रायोलॉजिकल रिसर्च लेबोरेटरी, थ्रीफोल्ड फार्म्स, स्प्रिंग वैली, न्यूयॉर्क, अमरीका।

विशेषज्ञोंका, जो पूसाकी कृषि-अनुसंधान संस्थाके भूतपूर्व संचालक स्व० सर अेल्बर्ट हॉवर्ड द्वारा आरम्भ की हुअी संस्था है।

कदाचित् संयुक्त राष्ट्रसंघकी खुराक और खेतीसे संबंधित संस्था भी अिन सब मामलोंके लिअे अुत्तम सलाहकार मुआ सकती है। मुझे मालूम नहीं है कि रूसी लोग अिन बातोंमें सबसे अधिक कुशल और सहायक सिद्ध होंगे। परन्तु मेरा खयाल है कि हमको अधिकांश वैज्ञानिक और शिल्प-विज्ञान सम्बन्धी सहायता चीनको मिलेगी।

पैसेका प्रबंध

अवश्य ही अिस कार्यक्रमके लिअे पैसेका प्रबंध करनेकी समस्या भी है। जब गांधीजी जीवित थे तब अुन्हें अनेक धनवानोंसे मदद मिल जाती थी। जो पैसा नहीं दे सकते थे अैसे बहुत लोग अपना समय, शक्ति और निष्ठा अिस कार्यक्रमके लिअे देते थे। आजकल कार्यक्रमके कुछ अंगोंके लिअे सरकार सहायता दे रही है। यदि धनवानोंकी समझमें आ जाय कि अिस योजनाको कार्यान्वित करना वांछनीय है, तो यह कार्यक्रम काफी तेजीसे आगे बढ़ाया जा सकता है। जो लोग बहुत पैसेके सहारेके बिना भी काम करना चाहें वे धीरे धीरे कर सकते हैं। अिस पहलू पर मैं कोअी सुझाव नहीं दूंगा, सिर्फ अितना ही कहूंगा कि गांधीजी सरकारसे कमसे कम सहायता लेना पसंद करते थे।

मेरा विश्वास है कि गांधीजीके कार्यक्रमको सारे भारतमें पूरी तरह कार्यान्वित करना और अुसे जारी रखना अन्य किसी भी कार्यक्रमकी अपेक्षा कम खर्चीला होगा।

खादी और ग्रामोद्योगोंकी रक्षा

कुछ भारतीय अुद्योगोंने दूसरे देशोंसे वैसा ही माल आयात करने पर कुछ चुंगी लगानेके लिअे भारत-सरकारको राजी कर लिया है। कुछ अुद्योगोंको सीधी आर्थिक सहायता भी मिली है। अुदाहरणार्थ, भारतके शक्कर-अुद्योग और कुछ दूसरे अुद्योगोंके लिअे अिस प्रकारका चुंगी-संबंधी

संरक्षण मिला है। ब्रिटिश राष्ट्र-मंडलमें भी कुछ अिसी तरहके संरक्षक कर लगाये गये हैं, जिन्हें 'कॉमनवेल्थ प्रिफरेन्स' कहते हैं। संयुक्त राज्य अमरीकामें सरकार अिस्पात, मोटर गाड़ियां, शक्कर और दूसरे बहुतसे अुद्योगोंको चुंगी-संबंधी संरक्षण प्रदान करती है। अिस प्रकारके चुंगी-कर लगभग सभी राष्ट्रोंमें प्रचलित हैं।

खादी और ग्रामोद्योगोंसे भारतको जो महान सामाजिक, आर्थिक और नैतिक लाभ हो सकते हैं, अुन्हें देखते हुअे अिन अुद्योगोंको सरकार द्वारा अिस समय जितना संरक्षण मिल रहा है अुससे अधिक मिलना चाहिये। मिलके कपड़े और मिलके सूतकी स्पर्धा खादीके लिअे अेक बहुत बड़ी बाधा है। यह सच है कि सरकारने भारतीय मिलोंके कपड़े पर कर लगा दिया है और अुसकी आमदनीको भारतीय हाथ-करघा अुद्योगकी तरक्कीमें लगाया है। यह न्याय और बुद्धिमानीका काम है। चावल कूटने और साफ करनेकी मिलें हाथ-कुटे चावलके अुत्पादनमें बाधक होती हैं और अुस चावलके खानेवालोंके स्वास्थ्यको हानि भी पहुंचाती हैं। यही बात अुन मिलोंकी है जो 'साफ की हुअी' सफेद चीनी पैदा करती हैं; वे गुड़की ग्रामीण पैदावारसे तीव्र स्पर्धा करती हैं। और सफेद चीनी अनेक मामलोंमें मानव-शरीरमें रहे चूनेका नाश करती है। अिस मामलेमें अनेक अमरीकी दंत-चिकित्सक सहमत हैं। यह सुझाना मेरा काम नहीं है कि अिन स्पर्धाओंका क्या अिलाज किया जाय। परन्तु अिन ग्रामोद्योगोंको किसी न किसी तरह सहायता दी जानी चाहिये। ग्रामोद्योगोंके पक्षकी दलीलें अुतनी ही मजबूत हैं जितनी अुद्योगपति अपने मालके संरक्षण या सहायताके पक्षमें देते हैं।

अिस बातको मैं थोड़े विस्तारसे कहूंगा। तीस साल पहले जब अंग्रेज भारतमें अंग्रेजी सूती कपड़ा बड़ी मात्रामें बेचनेके लिअे तरह तरहकी आर्थिक और राजनीतिक युक्तियोंसे भारतीय हाथ-करघा और खादी-अुद्योगका गला घोंटते थे, तब भारतवासियोंके लिअे यह समझना और विश्वास करना आसान था कि अंग्रेजोंका वह कार्य भारत पर आर्थिक

आक्रमण जैसा है। अुससे भारतीय गावोंमें भारी और सतत बेकारी और अर्ध-बेकारी पैदा होती थी, क्योंकि अुससे पहले किसान अपने खेतीके कामसे मिलनेवाली फुरसतके समयमें अपना सूत आप कात लेते थे और हाथ-करघेके जुलाहे अुनका कपड़ा बुन देते थे। भारतकी दरिद्रता और नैतिक पतनमें अुस आर्थिक आक्रमणका बड़ा हाथ था।

अिस समय भारतमें काम आनेवाला बहुतसा कपड़ा भारतीय मिलोंमें बनता है। भारतीय मिल-मालिक ब्रिटिश मिल-मालिकोंकी जगह आ गये हैं। कदाचित् भारतीय मिल-मालिक यह समझते हैं कि अधिकांश खादीके कपड़ेसे सस्ते भावों पर अच्छा कपड़ा मुहैया करके वे किसानोंका भला कर रहे हैं और अुनका पैसा बचा रहे हैं। अगर जीवनमें सबसे अधिक महत्त्व और मूल्य पैसेका हो, तब तो मिल-मालिकोंका यह विचार सही माना जायगा। परन्तु यदि भारतीय मिलोंका कपड़ा सस्ता और अच्छा होनेके साथ साथ किसानोंमें वही बेकारी कायम रखता है जो अंग्रेजोंने शुरू की थी, तो क्या यह नहीं कहा जायगा कि वह किसानोंको नुकसान भी पहुंचा रहा है? मुझे विश्वास है कि मिल-मालिक जान-बूझकर किसानोंकी हानि नहीं करना चाहते। परन्तु मिल-मालिक अिस विनिमयसे रुपया कमा रहे हैं यह हकीकत अुन्हें कुछ अन्तिम परिणामोंके प्रति अंधा नहीं बना देगी? किसानोंके लिअे कौनसी चीज ज्यादा महत्त्वकी है — अुनका पैसा अथवा अुनका स्वाभिमान, अुपयोगिताकी भावना, आत्म-निर्भरता, आत्म-विश्वास और अपनी रोजीकी व्यवस्था आप करनेके अवसर?

यदि भारतीय मिलोंके कपड़ेका अंतिम सामाजिक परिणाम यह हो कि अुससे किसानोंमें बेकारी और अर्ध-बेकारी बनी रहनेमें सहायता मिले, तो क्या यह कहना अन्याय होगा कि मिल-मालिक, अनचाहे और अनजाने, ३२ करोड़ ३० लाख ग्रामवासियोंके विरुद्ध पहलेका ब्रिटिश आर्थिक आक्रमण जारी रख रहे हैं? यह सब हो तो यह अेक घरेलू आर्थिक युद्धका मामला होगा, अेक प्रकारका आन्तर-भारतीय अुपनिवेश-

वाद होगा, जिसमें भारतीयोंका अेक छोटासा वर्ग अपने अधिकांश देश-वासियोंके विशाल जन-समूहको नुकसान पहुंचा रहा है। क्या यह ठीक अर्थ है? क्या यह अंतिम परिणाम है? यह अैसी बात है जिस पर ध्यानसे गहरा विचार करना चाहिये।

ब्रिटेनसे आजाद होनेके लिअे लड़े गये भारतीय संग्रामके दिनोंमें गांधीजीने भारतीय मध्यमवर्गको साहस, अेकता, नैतिक नियमों पर विश्वास, स्वाभिमान, आत्म-निर्भरता और आत्म-विश्वासकी शिक्षा दी और ये गुण अुनमें पैदा किये। अिन्हीं गुणोंसे अुन्होंने अपनी स्वतंत्रता प्राप्त की। अिसी तरह गांधीजीने अपना रचनात्मक कार्यक्रम बनाया और शुरू किया, जिससे किसानोंको अिन्हीं गुणोंका विकास करने और बड़ी हद तक प्रतिदिन रचनात्मक काम करके स्वतंत्रता प्राप्त करनेमें मदद मिले। गांधीजीका लक्ष्य सारे हिन्दुस्तानियोंके लिअे पूरी स्वतंत्रता और न्याय प्राप्त करना था। यदि ३२ करोड़ ३० लाख ग्रामीणोंको न्याय और स्वतंत्रता मिल जाय, तो भारतमें अुत्पन्न होनेवाली शक्तिकी लहर संसारको चकित कर देगी। सारे भारतीयोंकी अिस सिद्धिसे मध्यमवर्गको कअी प्रकारके जबरदस्त लाभ होंगे, जिनकी अभी तक कल्पना नहीं की गअी है। अिसलिअे भारतीय मध्यमवर्गके किसी भी समूहको आम लोगों द्वारा अुसी वस्तुकी प्राप्तिमें कोअी रुकावट नहीं डालनी चाहिये, जो मध्यमवर्गने प्राप्त कर ली है।

आंशिक रूपमें गांधीजीने खादी-आन्दोलन अंग्रेजोंके आर्थिक आक्र-मणके अिस भागका अहिंसक विरोध करनेके लिअे शुरू किया था। भारत-सरकार यदि सचमुच अधिकांश लोगोंकी प्रतिनिधि है, तो अुसके लिअे बुद्धिमानी अिसीमें होगी कि वह अपनी सीमाओंके भीतर आर्थिक गृह-युद्ध और आक्रमणको रोके। मिल-मालिक अितने समझदार हैं कि वे कपड़ेके विशेष प्रकार खोज सकते और बना सकते हैं और अपनी कुछ पूंजी अिधरसे हटाकर दूसरा औद्योगिक माल तैयार करनेमें लगा सकते हैं, जिससे ग्रामवासियोंमें बेकारी पैदा न हो। अगर यह बेकारी बन्द

हो जाय तो ग्रामीणोंकी बढ़ी हुआी क्रयशक्ति अिस दूसरे मालके लिअे बाजार मुहैया करके अुद्योगपतियोंकी सीधी सहायता ही नहीं करेगी, परन्तु अुद्योगपतियोंका कर-भार भी हलका कर देगी। यदि अिस प्रकारका आर्थिक आक्रमण मिल-मालिकों और कुछ अुद्योगपतियोंने जारी रखा, तो मुझे अन्देशा है कि अिससे सबसे ज्यादा लाभ साम्यवादियोंको होगा।

ग्रामोद्योगोंका गलत अर्थ

कभी कभी यह दलील दी जाती है कि ग्राम अथवा 'गृह' अुद्योग अच्छे है, परन्तु ग्रामवासियोंको सिर्फ चीजोंके छोटे भाग तैयार करने चाहिये, जिन्हें बादमें बड़े कारखानोंमें अेकत्र करके चीजें बनाअी जाय। अिस बारेमें स्विट्जरलैण्डकी मिसाल दी जाती है। वहा बहुतसे अलग अलग ग्रामीण परिवार घड़ियोंके चक्के या दूसरे हिस्से बनाते हैं और अुन्हें बड़े कारखानोंमें अिकट्ठा करके स्विट्जरलैण्डकी मशहूर घड़िया तैयार की जाती हैं। परन्तु यह तो बड़े अुद्योगोंको बढ़ाने और मदद देनेकी अेक तरकीब है। न्यूयॉर्कमें और अन्य अमरीकी नगरोंमें भी कपड़े और मोजे, स्वेटर आदि सामानके अुद्योगोंमें अैसा ही किया गया था। अुसका परिणाम यह हुआ कि कारखानोंके मालिकोंने अैसे मजदूरोंका भयंकर शोषण किया और लोकमतने अुसे बन्द करा दिया। मुझे भय है कि भारतमें यह प्रयोग किया गया तो ग्रामवासियोंका अुसी तरहका शोषण होने लगेगा।

सारे राष्ट्रके सामने खड़े सात खतरोंसे अिस कार्यक्रमका सम्बन्ध

अब पहले परिच्छेदमें बताये हुअे खतरोंमें से अत्यधिक जनसंख्या और खुराकके घटते जा रहे साधनोंके खतरोंको छोड़कर बाकीके सम्बन्धमें जरा गांधीजीके कार्यक्रमके लाभ बता दें।

यह कहनेकी जरूरत नहीं कि हिंसाके विषयमें यह कार्यक्रम सारे संसारके अन्य किसी भी कार्यक्रमसे अधिक अच्छा और अधिक व्यावहारिक है। ब्रिटिश साम्राज्यवादको भारतसे निकाल कर बाहर करनेमें अिसकी

सफलता अिसकी शक्तिका पर्याप्त प्रमाण है। मेरा विश्वास है कि बाहरका सशस्त्र आक्रमण होने पर भी यह कार्यक्रम कारगर साबित होगा।

मैं मानता हूं कि सामूहिक सत्याग्रहके द्वारा गांधीजीका कार्यक्रम ही अेकमात्र अैसा अुपाय है, जिससे सत्ताका प्रलोभन और भ्रष्टाचार — जो युगोंसे सर्वत्र अितना प्रबल और सर्वव्यापी रहा है — नियंत्रणमें रखा जा सकता है। मेरी जानकारीमें दि जुवानालकी पुस्तक 'ऑन पावर' में सत्ताकी अिस समस्याकी सर्वोत्तम चर्चा की गअी है और गांधीजीका सत्याग्रह अिस दुविधासे पार होनेका अेकमात्र मार्ग है। अिसी अेक अुपायसे वह अध्यात्म-बल पैदा होगा, जिसका सबके कल्याणके लिअे ही अुपयोग किया जा सकता है।

पूंजीवाद, साम्यवाद और समाजवादका तथाकथित लोकतंत्र अेक भयंकर रूपमें विकृत और कुंठित वस्तु है। सच्चे लोकतंत्रका आधार सहिष्णुता, अहिंसा और छोटे पैमानेके संगठन पर है; बल या दबाव पर नहीं बल्कि शान्तिपूर्वक समझाने-बुझाने पर और स्वीकृति पर है। जब सत्तासे लोक-कल्याणके लिअे खतरा पैदा हो जाय, तब सिर्फ मतदान द्वारा स्वीकृति न देना काफी नहीं होता। अन्तमें तो केवल अहिंसक प्रतिरोध ही अन्याय और अत्याचारको दबा सकता है।

यहां जिन प्रणालियोंकी चर्चा की गअी है अुनमें से केवल गांधीजीका कार्यक्रम ही छोटे संगठनों पर जोर देता है। वह गांव, परिवार और हाथसे काम करनेवालोंके छोटे छोटे संघोंको सभ्यताका आधार बनाता है। विनोबाजी अिससे सहमत हैं।

अिन सब प्रणालियोंमें से केवल गांधीजीका कार्यक्रम ही यह आग्रह करता है कि साध्य और साधनका मेल होना चाहिये, नैतिक नियम सारे मानव संगठनों पर लागू होते हैं, और यह कि आत्मा है और अुसकी सत्ता सर्वोपरि सत्ता है। अिस आखिरी बिन्दु पर मेरा यह सुझाव नहीं है कि धर्मका राजनीतिक साधनके रूपमें अुपयोग किया जाय। मैं मानता हूं कि राज्यको सर्वथा धर्मनिरपेक्ष और धर्मसे अलग होना चाहिये।

यह अनुरोध करते समय मैं गांधीजीके अिस विचारका अनुसरण करनेकी कोशिश कर रहा हूं कि राजनीतिको किसी धार्मिक संस्थाकी अभि-व्यक्तिके बजाय आत्माकी अभिव्यक्तिका माध्यम बन जाना चाहिये।

गांधीजीका कार्यक्रम और कांग्रेस अेक नहीं हैं

गांधीजीके कार्यक्रमका अनुरोध करते समय बेशक मैं कांग्रेस दलका समर्थन करनेका अनुरोध नहीं कर रहा हूं। दोनों किसी भी अर्थमें अेक नहीं हैं, चाहे कुछ कांग्रेसी दोनोंके अेक होनेका कितना ही दावा क्यों न करें। जैसा कि सबको मालूम है, गांधीजीने भारतके स्वाधीन होते ही कांग्रेस दलको बिखेर देना चाहा था। अिस दलको गांधीजीके सिद्धान्तोंमें कभी पूरा विश्वास नहीं था। अिस पैरेका हमारे तर्कसे कोअी सम्बन्ध नहीं है। यह तो गलतफहमी न होने देनेके विचारसे ही यहां जोड़ा गया है।

भारत पूर्व और पश्चिमके अुत्तम तत्त्वोंका समन्वय कर सकता है

सब बातोंको देखते हुअे यह काफी स्पष्ट मालूम होता है कि यह कार्यक्रम केवल पहले परिच्छेदमें बताये गये सभी खतरोंको टालने और अुद्योगवादके तेरहों हानिकारक तत्त्वोंसे बचनेके लिअे ही अुत्तम नहीं है, परन्तु अुसमें भारतकी आज तककी संस्कृतिसे अधिक महान और अधिक कल्याण-कारी संस्कृतिका निर्माण करनेकी संभावना भी है। भारतमें पूर्व और पश्चिमके अुत्तम तत्त्वोंका सामंजस्य करने और समस्त संसारमें सबसे विवेकशील संस्कृति अुत्पन्न करनेकी क्षमता है। परन्तु अिसके लिअे कमसे कम अेक शताब्दी तक भगीरथ, दीर्घकालीन और सतत प्रयत्न करनेकी आवश्यकता होगी। परिणाम प्रयत्नके अनुरूप ही होगा।

अिस परिच्छेदकी सारी चर्चामें मैंने गांधीजीके रचनात्मक कार्य-क्रमके अुन अंगोंका ही अधिक अुल्लेख किया है जिनका आर्थिक प्रभाव बहुत स्पष्ट है, क्योंकि अिन्हीं अंगोंकी सबसे अधिक प्रतिकूल आलोचना हुअी है। दूसरे अंगोंका भारतके भावी विकासमें बड़ा भाग रहेगा।

गांधीजीने अुनकी संपूर्ण चर्चा की थी। पश्चिमके प्रमाणोंसे अुन्हें बहुत कम समर्थन मिल सकता है।

परन्तु अिस कार्यक्रमके नैतिक और आध्यात्मिक पहलुओं पर ही अधिक और सतत जोर देना चाहिये। विनोबाजी यह जोर दे रहे हैं। अुनके प्रयत्नोंको अलग रख दें तो भारत गांधीजीके आदर्शों और व्यवहारसे अिस मामलेमें बहुत दूर तक नीचे गिर गया है। अगर भारत अपनी सारी शक्ति सम्पूर्ण रूपमें पश्चिमके भौतिक अुद्योग-धंधोंमें ही लगा देगा, तो मेरा विचार है कि वह भी पश्चिमी राष्ट्रोंकी तरह विनाशके मार्ग पर ही जा पहुंचेगा।

भारतकी संस्कृति

मेरे खयालसे किसी भी प्रकारके अुद्योगवादकी अपेक्षा गांधीजीका कार्यक्रम कहीं अच्छे ढंगसे भारतीय संस्कृतिके प्राचीन आदर्शका पोषक होगा। अिस संस्कृतिके आवश्यक गुण हैं सत्य, तपस्या, ज्ञान, अहिंसा, विद्वत्-सम्मान और सुशीलता। तपस्या केवल जीवनकी सादगीमें ही नहीं होगी, परन्तु शक्तिके खर्चको सूर्यशक्तिकी वार्षिक आयके भीतर सीमित रखनेमें भी होगी।

गांधीजीका कार्यक्रम क्रान्तिकारी है

अगर आप क्रान्तिकारी होना चाहते हैं तो सच्चे सामूहिक सत्याग्रहका प्रयोग कअी हजार वर्षोंमें हुअी सबसे बड़ी क्रान्ति है। आप कह सकते हैं, "परन्तु हाथ-कताअी, हाथ-बुनाअी और दूसरे ग्रामोद्योगोंका समर्थन और अुपयोग करना क्रान्तिकारी नहीं है; यह तो सदियों पुराना शिल्प-विज्ञान है।" फिर भी पूंजीवादी अुद्योगवादके परिच्छेदमें दिये गये अेल्टन मेयोके अुद्धरणोंको और जिस विस्तृत अध्ययनके आधार पर वे विचार बने हैं अुनको याद रखते हुअे यह कहना क्रान्तिकारी है कि शिल्प-विज्ञानको अब और अधिक मनमानी नहीं करने दी जायगी, परन्तु अुसे प्रकृति और प्राकृतिक साधन-सामग्रीके हितकारी सम्बन्धोंके अधीन, सूर्यशक्तिकी वार्षिक

आपके अधीन, मानव-स्वभावके अधीन तथा स्वाभाविक सुखद मानव-सहयोग बढ़ाने और कायम रखनेकी सांस्कृतिक आवश्यकताओंके अधीन रखा जायगा। बुरेसे बुरा नतीजा भी हुआ, तो भारतके लिअे बड़े बड़े अकाल अितने हानिकारक सिद्ध नहीं होंगे जितना हानिकारक भारतके व्यक्तियों और समूहोंके बीच स्वाभाविक सहयोगका नाश सिद्ध होगा, जैसा कि आज पश्चिमके अुद्योग-प्रधान देशोंमें हो रहा है। शिल्प-विज्ञानके बारेमें ध्यानपूर्वक चुनाव करना और जो चीज अन्तमें मानवताको अूंचा अुठानेमें निश्चित सहायता देनेवाली है अुसीको स्वीकार करना और अुसका अुपयोग करना, न केवल शरीरको बल्कि आत्माको भी अूंचा अुठानेवाली वस्तुको ग्रहण करना और अुसका अुपयोग करना क्रान्तिकारी है। अिस युगमें भारपूर्वक यह कहना क्रान्तिकारी है कि विज्ञान, शिल्प-विज्ञान और रुपयेके लाभकी अपेक्षा संस्कृतिका हित सर्वोपरि है। और अिस सहज सहयोगको पुनर्जीवित करनेके साधनोंको निश्चित बनानेके लिअे व्यावहारिक अुपाय करना और भी अधिक क्रान्तिकारी है। यह कहना क्रान्तिकारी है कि शिल्प-विज्ञानको अुस समय तक संयममें रखा जायगा, जब तक मनुष्य सत्ताकी लालसाको नियंत्रणमें रखना और अुसके लिअे मेहनत करना न सीख ले।

गांधीजीके कार्यक्रम पर चलनेवालेको बड़े पैमाने पर क्रान्ति करनेके लिअे अिंतजार नहीं करना पड़ता, वह अपने भीतर ही क्रान्ति आरम्भ कर देता है और अपने ही हाथों अुसे कार्यान्वित करता है। वह लोक-हितके लिअे अपने हिस्सेके अुत्पादनके साधनोंका नियंत्रण तुरन्त आरम्भ कर देता है। वह तुरन्त जनता-जनार्दनकी सेवामें लग जाता है और अपने जीवन द्वारा आदर्श भारतको निकट लानेमें सहायक होता है।

नये विचारोंकी प्रगतिकी आशा

विचारोंके अथवा हृदयके किसी बहुत बड़े व्यापक परिवर्तनमें सामान्यतः कमसे कम तीन पीढ़ीका समय लग जाता है। अुदाहरणके लिअे, आअिन्स्टीन और फ्रायडके विचारोंको देख लीजिये। जिस पीढ़ीमें नये

विचारका प्रतिपादन किया जाता है वह चौंकती है, अकसर अुससे बचनेकी कोशिश करती है और अपनी आदत, जड़ता, पूर्वग्रह और नये विचारों पर सोचनेकी अनिच्छाके कारण अुसका विरोध करती है। दूसरी पीढ़ी नये विचारसे हलके हलके परिचित हो जाती है, अुसके कार्यको काफी समय तक देख लेती है, बुद्धिसे शायद अुसे स्वीकार भी कर लेती है, परन्तु माता-पितासे प्राप्त अज्ञात संस्कार अुसमें बाधक होते हैं। तीसरी पीढी ही अिन अज्ञात पूर्वग्रहों और विरोधोंसे मुक्त होती है, नये विचारके मूल्यको पूरी तरह समझ लेती है और अुसके सारे फलितार्थ और संभावनाओंकी खोज करनेके लिअे हृदयसे तैयार होती है। अुसके बाद नया विचार वास्तवमें अपनी शक्ति दिखाने लगता है। अिसलिअे हम गांधीजीके कार्यक्रमका व्यापक पैमाने पर विकास होनेकी आशा रख सकते हैं।

फिर भी अिस सम्बन्धमें यह कहना रसप्रद होगा कि साम्यवादी घोषणापत्रमें लिखित मार्क्स और अेंजल्सके विचारोंका विकास होनेमें और अुसके फलस्वरूप रूसी बोल्शेविकोंके हाथमें रूसकी सत्ता आनेमें ६९ वर्ष लगे। ब्रिटिश सत्ताको भारतसे निकालनेमें गांधीजीके कार्यक्रमको केवल २८ वर्ष लगे। आत्मामें शक्ति होती है। यही आशाका अेकमात्र मार्ग है।

सूची

हमारे महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

आरोग्यकी कुंजी	०.४४
खादी	२.००
गांवोंकी मददमें	०.४०
नओी तालीमकी ओर	१.००
बापूकी कलमसे	२.५०
बापूके पत्र — १ : आश्रमकी बहनोंको	१.२५
बापूके पत्र — २ : सरदार वल्लभभाओीके नाम	३.००
बापूके पत्र — ३ : कुसुमबहन देसाओीके नाम	१.२५
बापूके पत्र मीराके नाम	३.००
बुनियादी शिक्षा	१.५०
मंगल-प्रभात	०.३७
मेरे सपनोंका भारत	२.५०
यरवडाके अनुभव	१.००
रचनात्मक कार्यक्रम	०.३७
विद्यार्थियोंसे	२.००
शिक्षाकी समस्या	२.५०
सच्ची शिक्षा	२.००
सत्यके प्रयोग अथवा आत्मकथा	१.५०
सत्य ही ओीश्वर है	०.८०
सर्वोदय (रस्किनके 'अन्टु दिस लास्ट' के आधार पर)	०.३५
स्त्रियां और अुनकी समस्याओं	१.००
हिन्द स्वराज्य	०.७०
सरदार पटेलके भाषण	५.००
विचार-दर्शन — १	१.५०
विवेक और साधना	४.००
सरदार वल्लभभाओी — भाग १	६.००
सरदार वल्लभभाओी — भाग २	५.००
महादेवभाओीकी डायरी — भाग १	५.००
महादेवभाओीकी डायरी — भाग २	५.००

महादेवभाओीकी डायरी — भाग ३	६ ००
जीवन-लीला	३ ००
धर्मोदय	१ २५
बापूकी झांकियां	१ ००
सूर्योदयका देश	२ ५०
हिमालयकी यात्रा	२ ००
गांधी और साम्यवाद	१ २५
गीता-मंथन	३ ००
जीवन-शोधन	३ ००
तालीमकी बुनियादें	२.००
शिक्षाका विकास	१ २५
शिक्षामें विवेक	१ ५०
संसार और धर्म	२ ५०
स्त्री-पुरुष-मर्यादा	१ ७५
अेकला चलो रे	२ ००
बा और बापूकी शीतल छायामें	२ ५०
बिहारकी कौमी आगमें	३ ००
ग्रामसेवाके दस कार्यक्रम	१ ७५
आत्म-रचना अथवा आश्रमी शिक्षा — भाग १	१ ५०
" " " — भाग २	१ ५०
" " " — भाग ३	१ ५०
अैसे थे बापू	१ ७५
गांधीजी और गुरुदेव	० ८०
गांधीजीकी साधना	३ ००
ठक्करबापा	३ ००
बापूकी छायामें	४ ००
राजा राममोहनरायसे गांधीजी	२ ००
हमारी बा	२ ००